

ऋग्वेद संहिता

| अथ प्रथमं मण्डलम् |

| अथ प्रथमोऽष्टकः |

(प्रथमोऽध्यायः ॥ वर्गाः 1-37)

| | | |
|-------------------------------|---------------|--------------|
| (9) | 1 | (म.1, अनु.1) |
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता अग्निः |

| | |
|---|-------|
| ॐ अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥ 1 ॥ | ॥ 1 ॥ |
| अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत । स देवाँ एह वक्षति ॥ 2 ॥ | ॥ 2 ॥ |
| अग्निना रयिमश्नवृत्पोषमेव दिवेदिवे । यशसं वीरवत्तमम् ॥ 3 ॥ | ॥ 3 ॥ |
| अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि । स इद्वेषु गच्छति ॥ 4 ॥ | ॥ 4 ॥ |
| अग्निर्होता कविक्रतुः सत्यश्चित्रश्रवस्तमः । देवो देवेभिरा गतम् ॥ 5 ॥ | ॥ 5 ॥ |
| यदुङ्ग दाशुषे त्वमग्रै भद्रं करिष्यसि । तवेत्तत्सत्यमङ्गिरः ॥ 6 ॥ | ॥ 6 ॥ |
| उप त्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त एमसि ॥ 7 ॥ | ॥ 7 ॥ |
| राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम् । वर्धमानं स्वे दमे ॥ 8 ॥ | ॥ 8 ॥ |
| स नः पितेव सूनवेऽग्रे सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये ॥ 9 ॥ | ॥ 9 ॥ |

| | | |
|-------------------------------|---------------|--|
| (9) | 2 | (म.1, अनु.1) |
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता वायुः 1-3, इन्द्रवायू 4-6, मित्रावरुणौ 7-9 |

| | |
|---|-------|
| वायवा याहि दर्शतेमे सोमा अरंकृताः । तेषां पाहि श्रुधी हवम् ॥ 1 ॥ | ॥ 1 ॥ |
| वाय उक्थेभिर्जरन्ते त्वामच्छा जरितारः । सुतसोमा अहर्विदः ॥ 2 ॥ | ॥ 2 ॥ |
| वायो तव प्रपृञ्चती धेना जिगाति दाशुषे । उरुची सोमपीतये ॥ 3 ॥ | ॥ 3 ॥ |
| इन्द्रवायू इमे सुता उप प्रयोभिरा गतम् । इन्द्रवो वामुशन्ति हि ॥ 4 ॥ | ॥ 4 ॥ |
| वायविन्द्रश्च चेतथः सुतानां वाजिनीवसू । तावा यातमुप द्रवत् ॥ 5 ॥ | ॥ 5 ॥ |
| वायविन्द्रश्च सुन्वत आ यातमुप निष्कृतम् । मृक्ष्वि १ तथा धिया नरा ॥ 6 ॥ | ॥ 6 ॥ |
| मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम् । धियं घृताचीं साधन्ता ॥ 7 ॥ | ॥ 7 ॥ |

ऋतेन मित्रावरुणावृतावृतावृत्सृशा । क्रतुं बृहन्तमाशाथे ॥ 8 ॥
 कवी नो मित्रावरुणा तुविजाता उरुक्षया । दक्षं दधाते अपसम् ॥ 9 ॥

(12)

3

(म.1, अनु.1)

| | | |
|---------------------------------|---------------|---------------------------------|
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता अश्विनौ 1-3, इन्द्रः 4-6, |
| विश्वे देवाः 7-9, सरस्वती 10-12 | | |

अश्विना यज्वरीरिषो द्रवत्पाणी शुभस्पती । पुरुभुजा चनस्यतम् ॥ 1 ॥
 अश्विना पुरुदंससा नरा शवीरया धिया । धिष्या वनतं गिरः ॥ 2 ॥
 दस्रा युवाकवः सुता नासत्या वृक्तबर्हिषः । आ यातं रुद्रवर्तनी ॥ 3 ॥
 इन्द्रा याहि चित्रभानो सुता इमे त्वायवः । अण्वीभिस्तना पूतासः ॥ 4 ॥
 इन्द्रा याहि धियेषितो विप्रजूतः सुतावतः । उप ब्रह्माणि वाघतः ॥ 5 ॥
 इन्द्रा याहि तूतजान् उप ब्रह्माणि हरिवः । सुते दधिष्व नश्चनः ॥ 6 ॥
 ओमासश्चर्षणीधृतो विश्वे देवास आगत । दाश्वंसो दाशुषः सुतम् ॥ 7 ॥
 विश्वे देवासो अमुरः सुतमा गन्त तूर्णयः । उसा इव स्वसराणि ॥ 8 ॥
 विश्वे देवासो अस्त्रिधु एहिमायासो अद्रुहः । मेधं जुषन्त वह्यः ॥ 9 ॥
 पावका नः सरस्वती वाजैभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टु धियावसुः ॥ 10 ॥
 चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम् । यज्ञं दधे सरस्वती ॥ 11 ॥
 महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना । धियो विश्वा वि राजति ॥ 12 ॥

(10)

4

(म.1, अनु.2)

| | | |
|-------------------------------|---------------|---------------|
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्रः |
|-------------------------------|---------------|---------------|

सुरूपकृतुमूतये सुदुर्धामिव गोदुहे । जुहुमसि द्यविद्यवि ॥ 1 ॥
 उप नः सवना गहि सोमस्य सोमपाः पिब । गोदा इद्रेवतो मर्दः ॥ 2 ॥
 अथा ते अन्तमानां विद्याम् सुमतीनाम् । मा नो अति ख्य आ गहि ॥ 3 ॥
 परेहि विग्रमस्तृमिन्द्रं पृच्छा विपश्चितम् । यस्ते सखिभ्य आ वरम् ॥ 4 ॥
 उत ब्रुवन्तु नो निदो निरन्यतश्चिदारत । दधाना इन्द्र इदुवः ॥ 5 ॥
 उत नः सुभगाँ अरिर्वोचेयुर्दस्म कृष्टयः । स्यामेदिन्द्रस्य शर्माणि ॥ 6 ॥

| | | |
|---------------------------------------|-----------------------|--------|
| एमाशुमाशवे भर यज्ञश्रियं नृमादनम् | पृत्यन्मन्दयत्सखम् | ॥ 7 ॥ |
| अस्य पीत्वा शतक्रतो घनो वृत्राणामभवः | प्रावो वाजेषु वाजिनम् | ॥ 8 ॥ |
| तं त्वा वाजेषु वाजिनं वाजयामः शतक्रतो | धनानामिन्द्र सातये | ॥ 9 ॥ |
| यो रायोऽवनिर्महान्तसुपारः सुन्वतः सखा | तस्मा इन्द्राय गायत | ॥ 10 ॥ |

(10)

5

(म.1, अनु.2)

| | | |
|-------------------------------|---------------|---------------|
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्रः |
|-------------------------------|---------------|---------------|

| | | |
|--|--------------------------|--------|
| आ त्वेता निषीदतेन्द्रमभि प्र गायत | सखायुः स्तोमवाहसः | ॥ 1 ॥ |
| पुरूतमं पुरूणामीशानं वार्याणाम् | इन्द्रं सोमे सचा सुते | ॥ 2 ॥ |
| स घा नो योग् अ भुवत्स राये स पुरंध्याम् | गमद्वाजेभिरा स नः | ॥ 3 ॥ |
| यस्य संस्थे न वृण्वते हरीं समत्सु शत्रवः | तस्मा इन्द्राय गायत | ॥ 4 ॥ |
| सुतपात्रे सुता इमे शुचयो यन्ति वीतये | सोमासो दध्याशिरः | ॥ 5 ॥ |
| त्वं सुतस्य पीतये सद्यो वृद्धो अजायथाः | इन्द्र ज्येष्ठाय सुक्रतो | ॥ 6 ॥ |
| आ त्वा विशन्त्वाशवः सोमास इन्द्र गिर्वणः | शं तं सन्तु प्रचेतसे | ॥ 7 ॥ |
| त्वां स्तोमा अवीवृधन्त्वामुक्था शतक्रतो | त्वां वर्धन्तु नो गिरः | ॥ 8 ॥ |
| अक्षितोतिः सनेदिमं वाजमिन्द्रः सहस्रिणम् | यस्मिन्विश्वानि पौस्या | ॥ 9 ॥ |
| मा नो मर्ता अभिद्रुहन्तूननामिन्द्र गिर्वणः | ईशानो यवया वृधम् | ॥ 10 ॥ |

(10)

6

(म.1, अनु.2)

| | | |
|-------------------------------|---------------|--|
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्रः 1-3,10, मरुतः 4,6,8-9, मरुतः इन्द्रः च 5,7 |
|-------------------------------|---------------|--|

| | | |
|---|----------------------|-------|
| युञ्जन्ति ब्रध्मरुषं चरन्तं परितस्थुषः | रोचन्ते रोचना दिवि | ॥ 1 ॥ |
| युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे | शोणा धृष्णू नृवाहसा | ॥ 2 ॥ |
| केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे | समुषद्विरजायथाः | ॥ 3 ॥ |
| आदहं स्वधामनु पुनर्गर्भत्वमेरिरे | दधाना नाम यज्ञियम् | ॥ 4 ॥ |
| वीळु चिदारुजलुभिर्गुहा चिदिन्द्र वह्निभिः | अविन्द उस्त्रिया अनु | ॥ 5 ॥ |
| देवयन्तो यथा मतिमच्छा विदद्वसुं गिरः | महामनूषत श्रुतम् | ॥ 6 ॥ |

| | | |
|--|------------------------|--------|
| इन्द्रेण सं हि दृक्षसे संजग्मानो अर्बिभ्युषा | मन्दू समानवर्चसा | ॥ 7 ॥ |
| अनवद्यैरभिद्युभिर्मखः सहस्वदर्चति | गुणैरिन्द्रस्य काम्यैः | ॥ 8 ॥ |
| अतः परिज्मन्ना गहि दिवो वा रोचनादधि | समस्मिन्नृञ्जते गिरः | ॥ 9 ॥ |
| इतो वा सातिमीमहे दिवो वा पार्थिवादधि | इन्द्रं महो वा रजसः | ॥ 10 ॥ |

(10)

7

(म.1, अनु.2)

| | | |
|-------------------------------|---------------|---------------|
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्रः |
|-------------------------------|---------------|---------------|

| | | |
|---|--------------------------|--------|
| इन्द्रमिद्वाथिनो बृहदिन्द्रमर्केभिरुकिणः | इन्द्रं वाणीरनूषत | ॥ 1 ॥ |
| इन्द्र इन्द्रयोः सचा संमिश्रु आ वचोयुजा | इन्द्रो वृज्री हिरण्ययः | ॥ 2 ॥ |
| इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्यो रोहयद्विवि | वि गोभिरद्रिमैरयत् | ॥ 3 ॥ |
| इन्द्र वाजेषु नोऽव सहस्रप्रधनेषु च | उग्र उग्राभिरूतिभिः | ॥ 4 ॥ |
| इन्द्रं वयं महाधुन इन्द्रमर्भे हवामहे | युजं वृत्रेषु वृज्जिणम् | ॥ 5 ॥ |
| स नो वृषन्नमुं चरुं सत्रादावन्नपावृधि | अस्मभ्यमप्रतिष्कृतः | ॥ 6 ॥ |
| तुञ्जेतुञ्जे य उत्तरे स्तोमा इन्द्रस्य वृज्जिणः | न विन्धे अस्य सुष्टुतिम् | ॥ 7 ॥ |
| वृषा यूथेव वंसंगः कृष्टीरियुत्योजसा | ईशानो अप्रतिष्कृतः | ॥ 8 ॥ |
| य एकश्चर्षणीनां वसूनामिरुज्यति | इन्द्रः पञ्च क्षितीनाम् | ॥ 9 ॥ |
| इन्द्रं वो विश्वतस्परि हवामहे जनेभ्यः | अस्माकमस्तु केवलः | ॥ 10 ॥ |

(10)

8

(म.1, अनु.3)

| | | |
|-------------------------------|---------------|---------------|
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्रः |
|-------------------------------|---------------|---------------|

| | | |
|---|----------------------|-------|
| एन्द्रं सानसिं रयिं सजित्वानं सदासहम् | वर्षिष्ठमूतये भर | ॥ 1 ॥ |
| नि येन मुष्टिहत्यया नि वृत्रा रुणधामहै | त्वोतासो न्यर्वता | ॥ 2 ॥ |
| इन्द्र त्वोतास आ वयं वज्रं घना ददीमहि | जयेम सं युधि स्पृधः | ॥ 3 ॥ |
| वयं शूरेभिरस्तृभिरिन्द्र त्वया युजा वयम् | सासह्याम पृतन्यतः | ॥ 4 ॥ |
| महाँ इन्द्रः प्रश्च नु महित्वमस्तु वृज्जिणे | द्यौर्न प्रथिना शवः | ॥ 5 ॥ |
| समोहे वा य आशत नरस्तोकस्य सनितौ | विप्रांसो वा धियायवः | ॥ 6 ॥ |

| | | |
|--|------------------------|--------|
| यः कुक्षिः सोमपातमः समुद्रइव् पिन्वते | उर्वीरापो न काकुदः | ॥ 7 ॥ |
| एवा ह्यस्य सूनृता विरुष्णी गोमती म्ही | पक्का शाखा न दाशुषे | ॥ 8 ॥ |
| एवा हि ते विभूतय ऊतय इन्द्र मावते | सद्यश्चित्सन्ति दाशुषे | ॥ 9 ॥ |
| एवा ह्यस्य काम्या स्तोम उक्थं च शंस्या | इन्द्राय सोमपीतये | ॥ 10 ॥ |

(10)

9

(म.1, अनु.3)

| | | |
|-------------------------------|---------------|---------------|
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्रः |
|-------------------------------|---------------|---------------|

| | | |
|--|------------------------|--------|
| इन्द्रेहि मत्स्यन्धसो विश्वेभिः सोमपर्वभिः | म्हाँ अभिष्टिरोजसा | ॥ 1 ॥ |
| एमैनं सृजता सुते मन्दिमिन्द्राय मन्दिने | चक्रि विश्वानि चक्रये | ॥ 2 ॥ |
| मत्स्वा सुशिप्र मन्दिभिः स्तोमैर्भिर्विश्वचर्षणे | सचेषु सर्वनेष्वा | ॥ 3 ॥ |
| असृग्रमिन्द्र ते गिरः प्रति त्वामुदहासत | अजोषा वृषभं पतिम् | ॥ 4 ॥ |
| सं चौदय चित्रमर्वाग्राध इन्द्र वरेण्यम् | असदित्तै विभु प्रभु | ॥ 5 ॥ |
| अस्मान्सु तत्र चोदयेन्द्र राये रभस्वतः | तुविद्युम्न यशस्वतः | ॥ 6 ॥ |
| सं गोमदिन्द्र वाजवदस्मे पृथु श्रवो बृहत् | विश्वायुर्धेह्यक्षितम् | ॥ 7 ॥ |
| अस्मे धेहि श्रवो बृहद्दुम्नं सहस्रसार्तमम् | इन्द्र ता रथिनीरिषः | ॥ 8 ॥ |
| वसोरिन्द्रं वसुपतिं गीर्भिर्गृणन्तं ऋग्मियम् | होम गन्तारमूतये | ॥ 9 ॥ |
| सुतेसुते न्योकसे बृहद्बृहत एदुरिः | इन्द्राय शूषमर्चति | ॥ 10 ॥ |

(12)

10

(म.1, अनु.3)

| | | |
|-------------------------------|-----------------|---------------|
| ऋषिः मधुच्छन्दाः वैश्वामित्रः | छन्दः अनुष्टुप् | देवता इन्द्रः |
|-------------------------------|-----------------|---------------|

| | | |
|---|---|-------|
| गारयन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमूर्किणः | ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत् उद्वंशमिव येमिरे | ॥ 1 ॥ |
| यत्सानोः सानुमारुहद्भूर्यस्पष्ट कर्त्वीम् | तदिन्द्रो अर्थं चेतति यूथेन वृष्णिरैजति | ॥ 2 ॥ |
| युक्ष्वा हि केशिना हरी वृषणा कक्ष्यप्रा | अथा न इन्द्र सोमपा गिरामुपश्रुतिं चर | ॥ 3 ॥ |
| एहि स्तोमाँ अभिस्वराभि गृणीह्या रुव | ब्रह्म च नो वसो सचेन्द्र यज्ञं च वर्धय | ॥ 4 ॥ |
| उक्थमिन्द्राय शंस्यं वर्धनं पुरुनिष्पिधे | शक्रो यथा सुतेषु णो रारणत्सख्येषु च | ॥ 5 ॥ |
| तमित्सखित्व ईमहे तं राये तं सुवीर्ये | स शक्र उत नः शक्रदिन्द्रो वसु दर्यमानः | ॥ 6 ॥ |

सुविवृतं सुनिरज्मिन्द्र त्वादातमिद्यशः । गवामपं व्रजं वृधि कृणुष्व राधो अद्रिवः ॥ 7 ॥
 नहि त्वा रोदसी उभे ऋघायमाणमिन्वतः । जेषुः स्वर्वतीरपः सं गा अस्मभ्यं धूनुहि ॥ 8 ॥
 आश्रुत्कर्णं श्रुधी हवं नूचिद्वधिष्व मे गिरः । इन्द्र स्तोममिमं मम कृष्वा युजश्चिदन्तरम् ॥ 9 ॥
 विद्वा हि त्वा वृषन्तमं वाजेषु हवनश्रुतम् । वृषन्तमस्य हूमह ऊतिं सहस्रसार्तमाम् ॥ 10 ॥
 आ तू न इन्द्र कौशिक मन्दसानः सुतं पिब । नव्यमायुः प्र सू तिर कृधी सहस्रसामृषिम् ॥ 11 ॥
 परिं त्वा गिर्वणो गिर इमा भवन्तु विश्वतः । वृद्धायुमनु वृद्धयो जुष्टा भवन्तु जुष्टयः ॥ 12 ॥

(8)

11

(म.1, अनु. 3)

ऋषिः जेता माधुच्छन्दसः

छन्दः अनुष्टुप्

देवता इन्द्रः

इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः । रथीतमं रथीनां वाजानां सत्पतिं पतिम् ॥ 1 ॥
 सख्ये तं इन्द्र वाजिनो मा भैम शवसस्पते । त्वामभि प्रणोनुमो जेतारमपराजितम् ॥ 2 ॥
 पूर्वोरिन्द्रस्य रातयो न वि दस्यन्त्यूतयः । यदी वाजस्य गोमतः स्तोतृभ्यो मंहते मघम् ॥ 3 ॥
 पुरां भिन्दुर्युवा कविरमितौजा अजायत । इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वृज्री पुरुष्टुतः ॥ 4 ॥
 त्वं वलस्य गोमतोऽपावरद्रिवो बिलम् । त्वां देवा अबिभ्युषस्तुज्यमानास आविषुः ॥ 5 ॥
 त्वाहं शूर रातिभिः प्रत्यायं सिन्धुमावदन् । उपातिष्ठन्त गिर्वणो विदुष्टे तस्य कारवः ॥ 6 ॥
 मायाभिरिन्द्र मायिनं त्वं शुष्णमवातिरः । विदुष्टे तस्य मेधिरास्तेषां श्रवांस्युत्तिर ॥ 7 ॥
 इन्द्रमीशानमोजसाभि स्तोमा अनूषत । सहस्रं यस्य रातय उत वा सन्ति भूर्यसीः ॥ 8 ॥

(12)

12

(म.1, अनु.4)

ऋषिः मेधातिथिः काण्वः

छन्दः गायत्री

देवता अग्निः

अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम् । अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥ 1 ॥
 अग्निमग्निं हवीमभिः सदा हवन्त विश्वपतिम् । हव्यवाहं पुरुप्रियम् ॥ 2 ॥
 अग्ने देवा इहावह जज्ञानो वृक्तर्बहिषे । असि होता न ईड्यः ॥ 3 ॥
 तां उशतो वि बोधय यदग्ने यासि दूत्यम् । देवैरासत्सि बर्हिषि ॥ 4 ॥
 घृताहवन दीदिवः प्रति ष्म रिषतो दह । अग्ने त्वं रक्षस्विनः ॥ 5 ॥
 अग्निनाग्निः समिध्यते क्विर्गृहपतिर्युवा । हव्यवाड् जुहास्यः ॥ 6 ॥

| | | |
|---|----------------------|--------|
| क्विमग्निमुपस्तुहि सत्यधर्माणमध्वरे | देवममीव्चातनम् | ॥ 7 ॥ |
| यस्त्वामग्ने हविष्पतिर्दूतं देव सपर्यति | तस्य स्म प्राविता भव | ॥ 8 ॥ |
| यो अग्निं देववीतये हविष्माँ आविवांसति | तस्मै पावक मृळय | ॥ 9 ॥ |
| स नः पावक दीदिवोऽग्ने देवाँ इहा वह | उप यज्ञं हविश्च नः | ॥ 10 ॥ |
| स नः स्तवान् आ भर गायत्रेण नवीयसा | रयिं वीरवतीमिषम् | ॥ 11 ॥ |
| अग्ने शुक्रेण शोचिषा विश्वाभिर्देवहृतिभिः | इमं स्तोमं जुषस्व नः | ॥ 12 ॥ |

(12)

13

(म.1, अनु. 4)

ऋषिः मेधातिथिः काण्वः छन्दः गायत्री देवता इध्मः समिद्धः वा अग्निः 1, तनूनपात् 2, नराशंसः 3,
 इळः 4, बर्हिः 5, देवीद्वारः 6, उषासानक्ता 7, दैव्यौ होतारौ प्रचेतसौ 8,
 तिस्रः देव्यः सरस्वतीळाभारत्यः 9, त्वष्टा 10, वनस्पतिः 11, स्वाहाकृतयः 12

| | | |
|---|-------------------------|--------|
| सुसमिद्धो न आवह देवाँ अग्ने हविष्मते | होतः पावक यक्षि च | ॥ 1 ॥ |
| मधुमन्तं तनूनपाद्यज्ञं देवेषु नः कवे | अद्या कृणुहि वीतये | ॥ 2 ॥ |
| नराशंसमिह प्रियमस्मिन्यज्ञ उपह्वये | मधुजिह्वं हविष्कृतम् | ॥ 3 ॥ |
| अग्ने सुखतमे रथे देवाँ ईळित आ वह | असि होता मनुहितः | ॥ 4 ॥ |
| स्तृणीत बर्हिरानुषगधृतपृष्ठं मनीषिणः | यत्रामृतस्य चक्षणम् | ॥ 5 ॥ |
| विश्रयन्तामृतावृधो द्वारो देवीरसुश्रतः | अद्या नूनं च यष्टवे | ॥ 6 ॥ |
| नक्तोषासा सुपेशसाऽस्मिन्यज्ञ उप ह्वये | इदं नो बर्हिरासदे | ॥ 7 ॥ |
| ता सुजिह्वा उपह्वये होतारा दैव्या कवी | यज्ञं नो यक्षतामिमम् | ॥ 8 ॥ |
| इळा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः | बर्हिः सीदन्त्वस्त्रिधः | ॥ 9 ॥ |
| इह त्वष्टारमग्रियं विश्वरूपमुप ह्वये | अस्माकमस्तु केवलः | ॥ 10 ॥ |
| अव सृजा वनस्पते देव देवेभ्यो हविः | प्र दातुरस्तु चेतनम् | ॥ 11 ॥ |
| स्वाहा यज्ञं कृणोतनेन्द्राय यज्वनो गृहे | तत्र देवाँ उप ह्वये | ॥ 12 ॥ |

(12)

14

(म.1, अनु. 4)

| | | |
|-----------------------|---------------|--------------------|
| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री | देवता विश्वे देवाः |
|-----------------------|---------------|--------------------|

| | | |
|--|----------------------|--------|
| ऐभिरग्रे दुवो गिरो विश्वेभिः सोमपीतये | देवेभिर्याहि यक्षि च | ॥ 1 ॥ |
| आ त्वा कर्णा अहूषत गृणन्ति विप्र ते धियः। देवेभिरग्र आ गहि | | ॥ 2 ॥ |
| इन्द्रवायू बृहस्पतिं मित्राग्निं पूषणं भगम् | आदित्यान्मारुतं गणम् | ॥ 3 ॥ |
| प्र वो भ्रियन्त इन्द्रो मत्सुरा मादयिष्णवः | द्रप्सा मध्वश्चमूषदः | ॥ 4 ॥ |
| ईळते त्वामवस्यवः कर्णासो वृक्तबर्हिषः | हविष्मन्तो अरुं कृतः | ॥ 5 ॥ |
| घृतपृष्ठा मनोयुजो ये त्वा वहन्ति वह्नयः | आ देवान्तसोमपीतये | ॥ 6 ॥ |
| तान्यजत्रां ऋतावृधोऽग्रे पत्नीवतस्कृधि | मध्वः सुजिह्व पायय | ॥ 7 ॥ |
| ये यजत्रा य ईड्यास्ते ते पिबन्तु जिह्वया | मधोरग्रे वर्षद्वृति | ॥ 8 ॥ |
| आर्का सूर्यस्य रोचनाद्विश्वान्देवाँ उषर्बुधः | विप्रो होतेह वक्षति | ॥ 9 ॥ |
| विश्वेभिः सोम्यं मध्वग्र इन्द्रेण वायुना | पिबा मित्रस्य धामभिः | ॥ 10 ॥ |
| त्वं होता मनुर्हितोऽग्रे यज्ञेषु सीदसि | सेमं नो अध्वरं यज | ॥ 11 ॥ |
| युक्ष्वा ह्यरुषी रथे हरितो देव रोहितः | ताभिर्देवाँ इहा वह | ॥ 12 ॥ |

(12)

15

(म.1, अनु. 4.)

| | | |
|--|---------------|---|
| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्रः 1,5, मरुतः 2, त्वष्टा 3, अग्निः 4,12, |
| मित्रावरुणौ 6, द्रविणोदाः 7-10, अश्विनौ 11 | | |

| | | |
|--|-----------------------|-------|
| इन्द्र सोमं पिबं ऋतुना त्वा विशन्तिवन्देवः | मत्सुरासस्तदौकसः | ॥ 1 ॥ |
| मरुतः पिबत ऋतुना पोत्राद्यज्ञं पुनीतन | यूयं हि ष्ठा सुदानवः | ॥ 2 ॥ |
| अभि यज्ञं गृणीहि नो ग्रावो नेष्टः पिबं ऋतुना | त्वं हि रत्नधा असि | ॥ 3 ॥ |
| अग्रे देवाँ इहा वह सादया योनिषु त्रिषु | परिं भूष पिबं ऋतुना | ॥ 4 ॥ |
| ब्राह्मणादिन्द्र राधसः पिबा सोममृत्तूरनु | तवेद्धि सुख्यमस्तृतम् | ॥ 5 ॥ |
| युवं दक्षं धृतव्रत मित्रावरुण दूळभम् | ऋतुना यज्ञमाशाथे | ॥ 6 ॥ |
| द्रविणोदा द्रविणसो ग्रावहस्तासो अध्वरे | यज्ञेषु देवमीळते | ॥ 7 ॥ |
| द्रविणोदा ददातु नो वसूनि यानि शृण्विरे | देवेषु ता वनामहे | ॥ 8 ॥ |
| द्रविणोदाः पिपीषति जुहोत् प्र च तिष्ठत | नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत | ॥ 9 ॥ |

| | | |
|---|--------------------------|--------|
| यत्त्वा तुरीयमृतुभिर्द्रविणोदो यजामहे | अर्धं स्मा नो दुर्दिर्भव | ॥ 10 ॥ |
| अश्विना पिबन्तं मधु दीर्घग्री शुचित्रता | ऋतुना यज्ञवाहसा | ॥ 11 ॥ |
| गार्हपत्येन सन्त्य ऋतुना यज्ञनीरसि | देवान्देवयुते यज | ॥ 12 ॥ |

(9)

16

(म.1, अनु. 4)

| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्रः |
|--|------------------------|---------------|
| आ त्वा वहन्तु हरयो वृषणं सोमपीतये | इन्द्रं त्वा सूरचक्षसः | ॥ 1 ॥ |
| इमा धाना घृतस्त्रुवो हरी इहोपवक्षतः | इन्द्रं सुखर्तमे रथे | ॥ 2 ॥ |
| इन्द्रं प्रातर्हवामह इन्द्रं प्रयत्यध्वरे | इन्द्रं सोमस्य पीतये | ॥ 3 ॥ |
| उप नः सुतमा गहि हरिभिरिन्द्र केशिभिः | सुते हि त्वा हवामहे | ॥ 4 ॥ |
| सेमं नः स्तोममा गृह्युपेदं सर्वनं सुतम् | गौरो न तृषितः पिब | ॥ 5 ॥ |
| इमे सोमासु इन्द्रवः सुतासो अर्धि बर्हिषि | तां इन्द्र सहसे पिब | ॥ 6 ॥ |
| अयं ते स्तोमो अग्रियो हृदिस्पृगस्तु शन्तमः | अथा सोमं सुतं पिब | ॥ 7 ॥ |
| विश्वमित्सर्वनं सुतमिन्द्रो मदाय गच्छति | वृत्रहा सोमपीतये | ॥ 8 ॥ |
| सेमं नः काममा पृण गोभिरश्वैः शतक्रतो | स्त्वाम त्वा स्वाध्यः | ॥ 9 ॥ |

(9)

17

(म.1, अनु. 4)

| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री 1-3,6-9, पादनिचृत् 4-5 | देवता इन्द्रावरुणौ |
|---|--------------------------------------|--------------------|
| इन्द्रावरुणयोरहं समाजोरव आ वृणे | ता नो मृळात ईदृशे | ॥ 1 ॥ |
| गन्तारा हि स्थोऽवसे हवं विप्रस्यु मावतः | धर्तारा चर्षणीनाम् | ॥ 2 ॥ |
| अनुकामं तर्पयेथामिन्द्रावरुण राय आ | ता वां नेदिष्ठमीमहे | ॥ 3 ॥ |
| युवाकु हि शचीनां युवाकु सुमतीनाम् | भूयाम वाजदात्राम् | ॥ 4 ॥ |
| इन्द्रः सहस्रदात्रां वरुणः शंस्यानाम् | क्रतुर्भवत्युक्थ्यः | ॥ 5 ॥ |
| तयोरिदवसा व्यं सनेम् नि च धीमहि | स्यादुत प्ररेचनम् | ॥ 6 ॥ |
| इन्द्रावरुण वामहं हुवे चित्राय राधसे | अस्मान्त्सु जिग्युषस्कृतम् | ॥ 7 ॥ |
| इन्द्रावरुण नू नु वां सिषासन्तीषु धीष्वा | अस्मभ्यं शर्म यच्छतम् | ॥ 8 ॥ |
| प्र वामश्रोतु सुष्टुतिरिन्द्रावरुण यां हुवे | यामृधार्थे सधस्तुतिम् | ॥ 9 ॥ |

(9)

18

(म.1, अनु. 5)

| | | |
|---|----------------|---------------------------------------|
| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री | देवता ब्रह्मणस्पतिः 1-3 ब्रह्मणस्पतिः |
| इन्द्रः सोमः च 4, ब्रह्मणस्पतिः दक्षिणा इन्द्रः सोमः च 5, | सदसस्पतिः 6-8, | सदसस्पतिः नराशंसः वा 9 |

| | | |
|---|-----------------------|-------|
| सोमानं स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते | कक्षीवन्तं य औंशिजः | ॥ 1 ॥ |
| यो रेवान्यो अमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्धनः | स नः सिषक्तु यस्तुरः | ॥ 2 ॥ |
| मा नः शंसो अररुषो धूर्तिः प्रणङ्घत्यस्य | रक्षा णो ब्रह्मणस्पते | ॥ 3 ॥ |
| स घा वीरो न रिष्यति यमिन्द्रो ब्रह्मणस्पतिः | सोमो हिनोति मर्त्यम् | ॥ 4 ॥ |
| त्वं तं ब्रह्मणस्पते सोम इन्द्रश्च मर्त्यम् | दक्षिणा पात्वंहसः | ॥ 5 ॥ |
| सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् | सनि मेधामयासिषम् | ॥ 6 ॥ |
| यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन | स धीनां योगमिन्वति | ॥ 7 ॥ |
| आदध्नोति हविष्कृतिं प्राञ्चं कृणोत्यध्वरम् | होत्रा देवेषु गच्छति | ॥ 8 ॥ |
| नराशंसं सुधृष्टममपश्यं सप्रथस्तमम् | दिवो न सद्मखसम् | ॥ 9 ॥ |

(9)

19

(म.1, अनु. 5)

| | | |
|-----------------------|---------------|----------------------|
| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री | देवता अग्निः मरुतः च |
|-----------------------|---------------|----------------------|

| | | |
|---|-------------------|-------|
| प्रति त्वं चारुमध्वरं गोपीथाय प्र हूयसे | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 1 ॥ |
| नहि देवो न मर्त्यो महस्तव क्रतुं परः | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 2 ॥ |
| ये महो रजसो विदुर्विश्वे देवासो अद्भुतः | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 3 ॥ |
| य उग्रा अर्कमानचुरनाधृष्टासु ओजसा | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 4 ॥ |
| ये शुभ्रा घोरवर्षसः सुक्षत्रासो रिशादसः | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 5 ॥ |
| ये नाकस्याधि रोचने दिवि देवासु आसते | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 6 ॥ |
| य ईड्वर्यन्ति पर्वतान् तिरः समुद्रमर्णवम् | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 7 ॥ |
| आ ये तन्वन्ति रश्मिभिस्तिरः समुद्रमोजसा | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 8 ॥ |
| अभि त्वा पूर्वपीतये सृजामि सोम्यं मधु | मरुद्भिरग्र आ गहि | ॥ 9 ॥ |

| इति प्रथमाष्टके प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ।

(द्वितीयोऽध्यायः ॥ वर्गाः 1-38)

(8)

20

(म.1, अनु.5)

| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री | देवता ऋभवः |
|--|-------------------------|------------|
| अयं देवाय जन्मने स्तोमो विप्रैभिरासुया | अकारि रत्नधातमः | ॥ 1 ॥ |
| य इन्द्राय वचोयुजा तत्क्षुर्मनसा हरी | शमीभिर्यज्ञमाशत | ॥ 2 ॥ |
| तक्षन्नासत्याभ्यां परिज्मानं सुखं रथम् | तक्षन्धेनुं संबर्दुधाम् | ॥ 3 ॥ |
| युवाना पितरा पुनः सत्यमन्त्रा ऋजूयवः | ऋभवो विष्ट्यक्रत | ॥ 4 ॥ |
| सं वो मदासो अग्मतेन्द्रेण च मरुत्वता | आदित्येभिश्च राजभिः | ॥ 5 ॥ |
| उत त्यं चमसं नवं त्वष्टुर्देवस्य निष्कृतम् | अकर्त चतुरः पुनः | ॥ 6 ॥ |
| ते नो रत्नानि धत्तन् त्रिरा साप्तानि सुन्वते | एकमेकं सुशस्तिभिः | ॥ 7 ॥ |
| अधारयन्तु वह्नयोऽभजन्त सुकृत्या | भागं देवेषु यज्ञियम् | ॥ 8 ॥ |

(6)

21

(म.1, अनु.5)

| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री | देवता इन्द्राग्री |
|---|--------------------------|-------------------|
| इहेन्द्राग्री उप ह्वये तयोरिस्तोममुश्मसि | ता सोमं सोमपातमा | ॥ 1 ॥ |
| ता युज्ञेषु प्र शंसतेन्द्राग्री शुम्भता नरः | ता गायत्रेषु गायत | ॥ 2 ॥ |
| ता मित्रस्य प्रशस्तय इन्द्राग्री ता हवामहे | सोमपा सोमपीतये | ॥ 3 ॥ |
| उग्रा सन्ता हवामह उपेदं सर्वनं सुतम् | इन्द्राग्री एह गच्छताम् | ॥ 4 ॥ |
| ता महान्ता सदस्पती इन्द्राग्री रक्ष उब्जतम् | अप्रजाः सन्त्वत्रिणः | ॥ 5 ॥ |
| तेन सत्येन जागृतमधि प्रचेतुने पदे | इन्द्राग्री शर्म यच्छतम् | ॥ 6 ॥ |

(21)

22

(म.1, अनु.5)

| ऋषिः मेधातिथिः काण्व | छन्दः गायत्री | देवता अश्विनौ 1-4, सविता 5-8, अग्निः 9-10, देवसंबन्धिन्यः देव्यः 11, इन्द्राणी वरुणान्यग्राय्यः 12, द्यावापृथिवी 13-14, पृथिवी 15, विष्णुः 16-21 |
|----------------------|---------------|---|
|----------------------|---------------|---|

| | | |
|---|-------------------------|--------|
| प्रातर्युजा विबोधयाश्विनावेह गच्छताम् | अस्य सोमस्य पीतये | ॥ 1 ॥ |
| या सुरथा रथीतमोभा देवा दिविस्पृशा | अश्विना ता हवामहे | ॥ 2 ॥ |
| या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती | तया यज्ञं मिमिक्षतम् | ॥ 3 ॥ |
| नहि वामस्ति दूरके यत्रा रथेन गच्छथः | अश्विना सोमिनो गृहम् | ॥ 4 ॥ |
| हिरण्यपाणिमूतये सवितारमुप ह्वये | स चेत्ता देवता पदम् | ॥ 5 ॥ |
| अपां नपातमवसे सवितारमुप स्तुहि | तस्य वृतान्युश्मसि | ॥ 6 ॥ |
| विभक्तारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः | सवितारं नृचक्षसम् | ॥ 7 ॥ |
| सखाय आ निषीदत सविता स्तोम्यो नु नः | दाता राधांसि शुम्भति | ॥ 8 ॥ |
| अग्ने पत्नीरिहावह देवानामुशतीरुप | त्वष्टारं सोमपीतये | ॥ 9 ॥ |
| आ ग्रा अग्र इहावसे होत्रां यविष्ठ भारतीम् | वरूत्री धिषणां वह | ॥ 10 ॥ |
| अभि नो देवीरवसा महः शर्मणा नृपत्नीः | अच्छिन्नपत्राः सचन्ताम् | ॥ 11 ॥ |

| | | |
|--|-----------------------|--------|
| इहेन्द्राणीमुप ह्वये वरुणानीं स्वस्तये | अग्र्यां सोमपीतये | ॥ 12 ॥ |
| मही द्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञं मिमिक्षताम् | पिपृतां नो भरीमभिः | ॥ 13 ॥ |
| तयोरिद्धतवत्पयो विप्रां रिहन्ति धीतिभिः | गन्धर्वस्य ध्रुवे पदे | ॥ 14 ॥ |
| स्योना पृथिवि भवानृक्षरा निवेशनी | यच्छा नः शर्म सप्रथः | ॥ 15 ॥ |
| अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे | पृथिव्याः सप्त धामभिः | ॥ 16 ॥ |
| इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा निदधे पदम् | समूळमस्य पांसुरे | ॥ 17 ॥ |
| त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः | अतो धर्माणि धारयन् | ॥ 18 ॥ |
| विष्णोः कर्माणि पश्यत् यतो व्रतानि पस्पशे | इन्द्रस्य युज्यः सखा | ॥ 19 ॥ |
| तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः | दिवीव चक्षुराततम् | ॥ 20 ॥ |
| तद्विप्रांसो विपुन्यवो जागृवांसः समिन्धते | विष्णोर्यत्परमं पदम् | ॥ 21 ॥ |

(24)

23

(म.1, अनु.5)

| | | |
|------------------------|--|-----------------------------------|
| ऋषिः मेधातिथिः काण्वः | छन्दः गायत्री 1-18, | पुरउष्णिक 19, अनुष्टुप् 20,22-24, |
| प्रतिष्ठा (गायत्री) 21 | देवता वायुः 1, इन्द्रवायू 2-3, मित्रावरुणौ 4-6, इन्द्रः मरुत्वान् 7-9, | |
| | विश्वे देवाः 10-12, पूषा 13-15, आपः 16-23, अग्निः 24 | |

| | | |
|--|--|--------|
| तीव्राः सोमांस आ गह्याशीर्वन्तः सुता इमे | वायो तान्प्रस्थितान्पिब | ॥ 1 ॥ |
| उभा देवा दिविस्पृशेन्द्रवायू हवामहे | अस्य सोमस्य पीतये | ॥ 2 ॥ |
| इन्द्रवायू मनोजुवा विप्रां हवन्त ऊतये | सहस्राक्षा धियस्पती | ॥ 3 ॥ |
| मित्रं वयं हवामहे वरुणं सोमपीतये | जज्ञाना पूतदक्षसा | ॥ 4 ॥ |
| ऋतेन यावृतावृधावृतस्य ज्योतिषस्पती | ता मित्रावरुणा हुवे | ॥ 5 ॥ |
| वरुणः प्राविता भुवन्मित्रो विश्वाभिरूतिभिः | करतां नः सुरार्धसः | ॥ 6 ॥ |
| मरुत्वन्तं हवामह इन्द्रमा सोमपीतये | सजूर्गणेन तम्पतु | ॥ 7 ॥ |
| इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणा देवासः पूषरातयः | विश्वे मम श्रुता हवम् | ॥ 8 ॥ |
| हत वृत्रं सुदानव इन्द्रेण सहसा युजा | मा नो दुःशंस ईशत | ॥ 9 ॥ |
| विश्वान्देवान्हवामहे मरुतः सोमपीतये | उग्रा हि पृश्निमातरः | ॥ 10 ॥ |
| जयतामिव तन्यतुर्मरुतामेति धृष्णुया | यच्छुभं याथना नरः | ॥ 11 ॥ |
| हस्काराद्विद्युत्स्पर्शतो जाता अवन्तु नः | मरुतो मृळयन्तु नः | ॥ 12 ॥ |
| आ पूषञ्चित्रबर्हिषमाघृणे धरुणं दिवः | आजानृष्टं यथा पशुम् | ॥ 13 ॥ |
| पूषा राजानुमाघृणिरपगूळं गुहा हितम् | अविन्दञ्चित्रबर्हिषम् | ॥ 14 ॥ |
| उतो स मह्यमिन्दुभिः षड्युक्तं अनुसेषिधत् | गोभिर्यवं न चकृषत् | ॥ 15 ॥ |
| अम्बयो युन्त्यध्वभिर्जामयो अध्वरीयताम् | पृञ्चतीर्मधुना पर्यः | ॥ 16 ॥ |
| अमूर्या उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यैः सह | ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् | ॥ 17 ॥ |
| अपो देवीरुप ह्वये यत्र गावः पिबन्ति नः | सिन्धुभ्यः कर्त्वी हविः | ॥ 18 ॥ |
| अप्स्व श्न्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये | देवा भवत वाजिनः | ॥ 19 ॥ |
| अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा | अग्निं च विश्वशम्भुवमापश्च विश्वभेषजीः | ॥ 20 ॥ |

आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे ३ मम । ज्योक् च सूर्यं दृशे ॥ 21 ॥
 इदमापः प्र वहत् यत्किं च दुरितं मयि । यद्वाहर्मभिदुद्रोह यद्वा शेष उतानृतम् ॥ 22 ॥
 आपो अद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि । पर्यस्वानग्र आ गहि तं मा सं सृज वर्चसा ॥ 23 ॥
 सं माग्रे वर्चसा सृज सं प्रजया समारुषा । विद्युर्मै अस्य देवा इन्द्रो विद्यात्सह ऋषिभिः ॥ 24 ॥

(15)

24

(म.1, अनु.6)

ऋषिः शुनःशेषः आजीर्गतिः छन्दः त्रिष्टुप् 1-2,6-15, गायत्री 3-5 देवता प्रजापतिः 1, अग्निः 2,
 सविता 3-4, सविता भगः वा 5, वरुणः 6-15

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
 को नो म्हा अदितये पुनर्दात्पितरं च दृशेयं मातरं च ॥ 1 ॥
 अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
 स नो म्हा अदितये पुनर्दात्पितरं च दृशेयं मातरं च ॥ 2 ॥
 अभि त्वा देव सवितरीशानं वार्याणाम् । सदावन्भागमीमहे ॥ 3 ॥
 यश्चिद्धि तं इत्था भगः शशमानः पुरा निदः । अद्वेषो हस्तयोर्दधे ॥ 4 ॥
 भगभक्तस्य ते वयमुदशेम् तवावसा । मूर्धानं राय आरभे ॥ 5 ॥
 नहि ते क्षत्रं न सहो न मन्युं वयश्च नामी पतर्यन्त आपुः ।
 नेमा आपो अनिमिषं चरन्तीर्न ये वातस्य प्रमिनन्त्यभ्वम् ॥ 6 ॥
 अबुध्रे राजा वरुणो वनस्योर्ध्वं स्तूपं ददते पूतदक्षः ।
 नीचीनाः स्थरुपरि बुध्न एषामुस्मे अन्तर्निहिताः केतवः स्युः ॥ 7 ॥
 उरुं हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेत्वा उं ।
 अपदे पादा प्रतिधातवेऽकरुतापवृक्ता हृदयाविधश्चित् ॥ 8 ॥
 शतं ते राजन्भिषजः सहस्रमुर्वो गभीरा सुमतिष्टे अस्तु ।
 बाधस्व दूरे निरृतिं पराचैः कृतं चिदेनः प्र मुमुग्ध्यस्मत् ॥ 9 ॥
 अमी य ऋक्षा निहितास उच्चा नक्तं ददृश्रे कुहं चिद्विवेयुः ।
 अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि विचाकशञ्चन्द्रमा नक्तमेति ॥ 10 ॥
 तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः ।
 अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंसु मा न आयुः प्र मौषीः ॥ 11 ॥
 तदिन्नक्तं तद्विवा मह्यमाहुस्तदयं केतो हृद आ वि चष्टे ।
 शुनःशेषो यमहृद्भीतः सो अस्मान्नाजा वरुणो मुमोक्तु ॥ 12 ॥
 शुनःशेषो ह्यहृद्भीतस्त्रिष्वदित्यं द्रुपदेषु बद्धः ।
 अवैनं राजा वरुणः ससृज्याद्विद्धं अदब्धो वि मुमोक्तु पाशान् ॥ 13 ॥
 अवं ते हेळो वरुण नमोभिरव यज्ञेभिरीमहे हविर्भिः ।
 क्षयन्नस्मभ्यमसुर प्रचेता राजन्नेनांसि शिश्रथः कृतानि ॥ 14 ॥
 उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधुमं वि मध्यमं श्रथाय ।

(21)

25

(म.1, अनु.6)

ऋषिः शुनःशेषः आजीगर्तिः

छन्दः गायत्री

देवता वरुणः

| | | |
|--|----------------------|--------|
| यच्चिद्धि ते विशो यथा प्र देव वरुण व्रतम् | मिनीमसि द्यविद्यवि | ॥ 1 ॥ |
| मा नो वृधाय हृत्वे जिहीळानस्य रीरधः | मा हृणानस्य मन्यवे | ॥ 2 ॥ |
| वि मृळीकाय ते मनो रथीरश्वं न संदितम् | गीर्भिवीरुण सीमहि | ॥ 3 ॥ |
| परा हि मे विमन्यवः पतन्ति वस्यंइष्टये | वयो न वसतीरुप | ॥ 4 ॥ |
| कदा क्षत्रश्रियं नरमा वरुणं करामहे | मृळीकायोरुचक्षसम् | ॥ 5 ॥ |
| तदित्समानमाशाते वेनन्ता न प्र युच्छतः | धृतव्रताय दाशुषे | ॥ 6 ॥ |
| वेदा यो वीनां पदमन्तरिक्षेण पतताम् | वेद नावः समुद्रियः | ॥ 7 ॥ |
| वेद मासो धृतव्रतो द्वादश प्रजावतः | वेदा य उपजायते | ॥ 8 ॥ |
| वेद वातस्य वर्तनिमुरोऋष्वस्य बृहतः | वेदा ये अध्यासते | ॥ 9 ॥ |
| नि षसाद धृतव्रतो वरुणः पस्त्याइस्वा | साम्राज्याय सुक्रतुः | ॥ 10 ॥ |
| अतो विश्वान्यद्भुता चिकित्वाँ अभि पश्यति | कृतानि या च कर्त्वा | ॥ 11 ॥ |
| स नो विश्वाहा सुक्रतुरादित्यः सुपथा करत् | प्र ण आयूषि तारिषत् | ॥ 12 ॥ |
| बिभ्रद्द्रापिं हिरण्ययं वरुणो वस्त निर्णिजम् | परि स्पशो निषेदिरे | ॥ 13 ॥ |
| न यं दिप्सन्ति दिप्सवो न दुह्वाणो जनानाम् | न देवमभिमातयः | ॥ 14 ॥ |
| उत यो मानुषेष्व यशश्चक्रे असाम्या | अस्माकमुदरेष्व | ॥ 15 ॥ |
| परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यतीरनु | इच्छन्तीरुचक्षसम् | ॥ 16 ॥ |
| सं नु वोचावहै पुनर्यतो मे मध्वाभृतम् | होतेव क्षदसे प्रियम् | ॥ 17 ॥ |
| दर्शं नु विश्वदर्शतं दर्शं रथमधि क्षमि | एता जुषत मे गिरः | ॥ 18 ॥ |
| इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय | त्वामवस्युरा चके | ॥ 19 ॥ |
| त्वं विश्वस्य मेधिर दिवश्च गमश्च राजसि | स यामनि प्रति श्रुधि | ॥ 20 ॥ |
| उदुत्तमं मुमुग्धि नो वि पाशं मध्यमं चृत | अवाधमानि जीवसे | ॥ 21 ॥ |

(10)

26

(म.1, अनु.6)

ऋषिः शुनःशेषः आजीगर्तिः

छन्दः गायत्री

देवता अग्निः

| | | |
|--|----------------------|-------|
| वसिष्वा हि मियेध्य वस्त्राण्यूर्जा पते | सेमं नो अध्वरं यज | ॥ 1 ॥ |
| नि नो होता वरेण्यः सदा यविष्ठ मन्मभिः | अग्रे दिवित्मता वचः | ॥ 2 ॥ |
| आ हि ष्मा सूनवे पितापिर्यजत्यापये | सखा सख्ये वरेण्यः | ॥ 3 ॥ |
| आ नो बर्ही रिशादसो वरुणो मित्रो अर्यमा | सीदन्तु मनुषो यथा | ॥ 4 ॥ |
| पूर्व्यं होतरस्य नो मन्दस्व सख्यस्य च | इमा उ षु श्रुधी गिरः | ॥ 5 ॥ |

| | | |
|---|------------------------|--------|
| यच्चिद्धि शश्वता तना देवंदेवं यजामहे | त्वे इद्धयते हविः | ॥ 6 ॥ |
| प्रियो नो अस्तु विश्वतिर्होता मन्द्रो वरेण्यः | प्रियाः स्वग्रयो व्यम् | ॥ 7 ॥ |
| स्वग्रयो हि वार्यं देवासो दधिरे च नः | स्वग्रयो मनामहे | ॥ 8 ॥ |
| अथा न उभयैषाममृतं मर्त्यानाम् | मिथः सन्तु प्रशस्तयः | ॥ 9 ॥ |
| विश्वैभिरग्रे अग्निभिरिमं यज्ञमिदं वचः | चनो धाः सहसो यहो | ॥ 10 ॥ |

(13)

27

(म.1, अनु.6)

| | | |
|-------------------------|----------------------------------|----------------------------|
| ऋषिः शुनःशेषः आजीर्गतिः | छन्दः गायत्री 1-12 त्रिष्टुप् 13 | देवता अग्निः 1-12 देवाः 13 |
|-------------------------|----------------------------------|----------------------------|

| | |
|--|--------|
| अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः सम्राजन्तमध्वराणाम् | ॥ 1 ॥ |
| स घा नः सूनुः शर्वसा पृथुप्रगामा सुशेवः मीढ्वं अस्माकं बभूयात् | ॥ 2 ॥ |
| स नो दूराञ्चासाञ्च नि मर्त्यादघायोः पाहि सदमिद्विश्वायुः | ॥ 3 ॥ |
| इममू षु त्वमस्माकं सनिं गायत्रं नव्यांसम् अग्रे देवेषु प्र वौचः | ॥ 4 ॥ |
| आ नो भज परमेष्वा वाजेषु मध्यमेषु शिक्षा वस्वो अन्तमस्य | ॥ 5 ॥ |
| विभक्तसि चित्रभानो सिन्धोरूर्मा उपाक आ सद्यो दाशुषे क्षरसि | ॥ 6 ॥ |
| यमग्रे पृत्सु मर्त्यमवा वाजेषु यं जुनाः स यन्ता शश्वतीरिषः | ॥ 7 ॥ |
| नकिरस्य सहन्त्य पर्येता कयस्य चित् वाजो अस्ति श्रवाय्यः | ॥ 8 ॥ |
| स वाजं विश्वचर्षणिर्वद्विरस्तु तरुता विप्रैभिरस्तु सनिता | ॥ 9 ॥ |
| जराबोध तद्विविद्धि विशेविशे यज्ञियाय स्तोमं रुद्राय दृशीकम् | ॥ 10 ॥ |
| स नो म्हाँ अनिमानो धूमकेतुः पुरुश्चन्द्रः धिये वाजाय हिन्वतु | ॥ 11 ॥ |
| स रेवाँइव विश्वतिर्देव्यः केतुः शृणोतु नः उक्थैरग्निर्बृहद्भानुः | ॥ 12 ॥ |
| नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः | |
| यजाम देवान्यदि शक्रवाम मा ज्यायसः शंसमा वृक्षि देवाः | ॥ 13 ॥ |

(9)

28

(म.1, अनु.6)

| | | |
|---|----------------------------------|--------------------------------|
| ऋषिः शुनःशेषः आजीर्गतिः | छन्दः अनुष्टुप् 1-6, गायत्री 7-9 | देवता इन्द्रः 1-4, उलूखलः 5-6, |
| उलूखलमुसले 7-8, प्रजापतिः हरिश्चन्द्रः अधिषवणचर्म सोमः वा 9 | | |

| | | |
|--|-------------------------------------|-------|
| यत्र ग्रावा पृथुबुध ऊर्ध्वो भवति सोतवे | उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जलगुलः | ॥ 1 ॥ |
| यत्र द्वाविं जघनाधिषवण्या कृता | उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जलगुलः | ॥ 2 ॥ |
| यत्र नार्यपच्यवमुपच्यवं च शिक्षते | उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जलगुलः | ॥ 3 ॥ |
| यत्र मन्थां विबध्नते रश्मीन्यमित्वाइव | उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जलगुलः | ॥ 4 ॥ |
| यच्चिद्धि त्वं गृहेगृह उलूखलक युज्यसे | इह द्युमत्तमं वदु जयतामिव दुन्दुभिः | ॥ 5 ॥ |
| उत स्म ते वनस्पते वातो विवात्यग्रमित् | अथो इन्द्राय पातवे सुनु सोममुलूखल | ॥ 6 ॥ |
| आयुजी वाजसातमा ता ह्यु १ च्चा विजर्भतः | हरीइवान्धांसि बप्सता | ॥ 7 ॥ |

ता नो अद्य वनस्पती ऋष्वावृष्वेभिः सोतृभिः । इन्द्राय मधुमत्सुतम् ॥ 8 ॥
उच्छिष्टं चम्बोर्भर सोमं पवित्र आ सृज । नि धेहि गोरधि त्वचि ॥ 9 ॥

(7)

29

(म.1, अनु.6)

| | | |
|-------------------------|----------------|---------------|
| ऋषिः शुनःशेषः आजीर्गतिः | छन्दः पङ्क्तिः | देवता इन्द्रः |
|-------------------------|----------------|---------------|

यच्चिद्धि संत्य सोमपा अनाशस्ताइव स्मसि ।
आ तू न इन्द्र शंसय गोष्वश्वेषु शुभ्रिषु सहस्रेषु तुवीमघ ॥ 1 ॥
शिप्रिन्वाजानां पते शचीवस्तव दंसना । आ तुवीमघ ॥ 2 ॥
नि प्वापया मिथूदशां सुस्तामबुध्यमाने । आ तुवीमघ ॥ 3 ॥
सुसन्तु त्या अरातयो बोधन्तु शूर रातयः । आ तुवीमघ ॥ 4 ॥
समिन्द्र गर्दभं मृण नुवन्तं पापयामुया । आ तुवीमघ ॥ 5 ॥
पताति कुण्डृणाच्यां दूरं वातो वनादधि । आ तुवीमघ ॥ 6 ॥
सर्वं परिक्रोशं जहि जम्भया कृकदाश्वम् । आ तुवीमघ ॥ 7 ॥

(22)

30

(म.1, अनु.6)

| | |
|---|---|
| ऋषिः शुनःशेषः आजीर्गतिः | छन्दः गायत्री 1-10,12-15,17-22, पादनिचृत् गायत्री 11, त्रिष्टुप् 16 |
| देवता इन्द्रः 1-16, अश्विनौ 17-19, उषाः 20-22 | |

आ व इन्द्रं क्रिविं यथा वाजयन्तः शतक्रतुम् । मंहिष्ठं सिञ्च इन्दुभिः ॥ 1 ॥
शतं वा यः शुचीनां सहस्रं वा समाशिराम् । एदुं निभ्रं न रीयते ॥ 2 ॥
सं यन्मदाय शुभ्रिण एना ह्यस्योदरे । समुद्रो न व्यचो दधे ॥ 3 ॥
अयमुं ते समतसि कपोतइव गर्भधिम् । वचस्तच्चित्र ओहसे ॥ 4 ॥
स्तोत्रं राधानां पते गिर्वाहो वीर यस्य ते । विभूतिरस्तु सूनृता ॥ 5 ॥
ऊर्ध्वस्तिष्ठा न ऊतयेऽस्मिन्वाजे शतक्रतो । समन्येषु ब्रवावहै ॥ 6 ॥
योगैयोगे त्वस्तरं वाजेवाजे हवामहे । सखाय इन्द्रमृतये ॥ 7 ॥
आ घां गमद्यदि श्रवत्सहस्रिणीभिरूतिभिः । वाजेभिरुप नो हवम् ॥ 8 ॥
अनु प्रलस्यौकसो हुवे तुविप्रतिं नरम् । यं ते पूर्वं पिता हुवे ॥ 9 ॥
तं त्वा वयं विश्ववारा शास्महे पुरुहूत । सखे वसो जरितृभ्यः ॥ 10 ॥
अस्माकं शिप्रिणीनां सोमपाः सोमपात्राम् । सखे वज्रिन्त्सखीनाम् ॥ 11 ॥
तथा तदस्तु सोमपाः सखे वज्रिन्तथा कृणु । यथा त उश्मसीष्टये ॥ 12 ॥
रेवतीर्नः सधमाद् इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः । क्षुमन्तो याभिर्मदेम ॥ 13 ॥
आ घ त्वावान्त्मनाप्तः स्तोतृभ्यो धृष्णवियानः । ऋणोरक्षं न चक्रयोः ॥ 14 ॥
आ यदुर्वः शतक्रतवा कामं जरितृणाम् । ऋणोरक्षं न शचीभिः ॥ 15 ॥
शश्वदिन्द्रः पोप्रुथद्विर्जिगाय नानदद्विः शाश्वसद्विर्धनानि ।

| | |
|---|--------|
| स नो हिरण्यरथं दुंसनावान्तस नः सनिता सनये स नोऽदात् | ॥ 16 ॥ |
| आश्विनावश्वोवत्येषा यातं शवीरया गोमदस्रा हिरण्यवत् | ॥ 17 ॥ |
| समानयोजनो हि वाँ रथो दस्रावमर्त्यः समुद्रे अश्विनेयते | ॥ 18 ॥ |
| न्य १ घ्यस्य मूर्धनि चक्रं रथस्य येमथुः परि द्यामन्यदीयते | ॥ 19 ॥ |
| कस्त उषः कधप्रिये भुजे मतो अमर्त्ये कं नक्षसे विभावरि | ॥ 20 ॥ |
| व्यं हि ते अमन्मह्यान्तादा पराकात् अश्वे न चित्रे अरुषि | ॥ 21 ॥ |
| त्वं त्येभिरा गहि वाजैभिर्दुहितर्दिवः अस्मे रयिं नि धारय | ॥ 22 ॥ |

(18)

31

(म.1, अनु.7)

ऋषिः हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः छन्दः जगती 1-7,9-15,17, त्रिष्टुप् 8,16,18

देवता अग्निः

| | |
|---|--------|
| त्वमग्रे प्रथमो अङ्गिरा ऋषिर्देवो देवानामभवः शिवः सखा | |
| तव व्रते कवयो विद्वानापसोऽजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः | ॥ 1 ॥ |
| त्वमग्रे प्रथमो अङ्गिरस्तमः कविर्देवानां परि भूषसि व्रतम् | |
| विभुर्विश्वस्मै भुवनाय मेधिरो द्विमाता शयुः कतिधा चिदायवे | ॥ 2 ॥ |
| त्वमग्रे प्रथमो मातरिश्वन आविर्भव सुक्रतूया विवस्वते | |
| अरेजतां रोदसी होतृवूर्येऽसन्नोभारमयजो महो वसो | ॥ 3 ॥ |
| त्वमग्रे मनवे द्यामवाशयः पुरुरवसे सुकृते सुकृतरः | |
| श्वारेण यत्पित्रोर्मुच्यसे पर्या त्वा पूर्वमनयन्नापरं पुनः | ॥ 4 ॥ |
| त्वमग्रे वृषभः पुष्टिवर्धन उद्यतस्रुचे भवसि श्रवाय्यः | |
| य आहुतिं परि वेदा वषट्कृतिमेकायुरग्रे विश आविवाससि | ॥ 5 ॥ |
| त्वमग्रे वृजिनवर्तनिं नरं सक्रमन्पिर्षि विदथे विचर्षणे | |
| यः शूरसाता परितकम्ये धने दुभ्रेभिश्चित्समृता हंसि भूर्यसः | ॥ 6 ॥ |
| त्वं तमग्रे अमृतत्व उत्तमे मते दधासि श्रवसे दिवेदिवे | |
| यस्तातृषाण उभयाय जन्मने मयः कृणोषि प्रय आ च सूर्ये | ॥ 7 ॥ |
| त्वं नो अग्रे सनये धनानां यशसं कारुं कृणुहि स्तवानः | |
| ऋध्याम् कर्मापसा नवेन देवेर्द्यावापृथिवी प्रावतं नः | ॥ 8 ॥ |
| त्वं नो अग्रे पित्रोरुपस्थ आ देवो देवेष्वनवद्य जागृविः | |
| तनूकृद्धोधि प्रमतिश्च कारवे त्वं कल्याण वसु विश्वमोपिषे | ॥ 9 ॥ |
| त्वमग्रे प्रमतिस्त्वं पितासि नस्त्वं वयस्कृत्तव जामयो व्यम् | |
| सं त्वा रायः शतिनः सं सहस्रिणः सुवीरं यन्ति व्रत्पामदाभ्य | ॥ 10 ॥ |
| त्वामग्रे प्रथममायुमायवे देवा अकृण्वन्नहुषस्य विशपतिम् | |
| इळामकृण्वन्मनुषस्य शासनीं पितुर्यत्पुत्रो ममकस्य जायते | ॥ 11 ॥ |
| त्वं नो अग्रे तव देव पायुभिर्मघोनो रक्ष तन्वश्च वन्द्य | |
| त्राता तोकस्य तनये गवामस्यनिमेषं रक्षमाणस्तव व्रते | ॥ 12 ॥ |

त्वमग्रे यज्यवे पायुरन्तरोऽनिषङ्गाय चतुरक्ष इध्यसे |
 यो रातहव्योऽवृकाय धार्यसे कीरेश्चिन्मन्त्रं मनसा वनोषि तम् || 13 ||
 त्वमग्र उरुशंसाय वाघते स्पार्हं यद्रेकर्णः परमं वनोषि तत् |
 आध्रस्यं चित्प्रमतिरुच्यसे पिता प्र पाकं शास्सि प्र दिशो विदुष्टरः || 14 ||
 त्वमग्रे प्रयतदक्षिणं नरं वर्मेव स्यूतं परि पासि विश्वतः |
 स्वादुक्ष्मा यो वसतौ स्योनकृञ्जीवयाजं यजते सोपमा दिवः || 15 ||
 इमामग्रे शरणिं मीमृषो न इममध्वानं यमगाम दूरात् |
 आपिः पिता प्रमतिः सोम्यानां भूमिरस्यृषिकृन्मर्त्यानाम् || 16 ||
 मनुष्वदग्रे अङ्गिरस्वदङ्गिरो ययातिवत्सदने पूर्ववच्छुचे |
 अच्छं याह्या वहा दैव्यं जनमा सादय बर्हिषि यक्षि च प्रियम् || 17 ||
 एतेनाग्रे ब्रह्मणा वावृधस्व शक्तीं वा यत्तं चकृमा विदा वा |
 उत प्र णेष्यभि वस्यो अस्मान्त्सं नः सृज सुमत्या वाजवत्या || 18 ||

(15)

32

(म.1, अनु.7)

ऋषिः हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्र वोचं यानि चकारं प्रथमानि वृज्री |
 अहन्नहिमन्वपस्तर्दं प्र वक्षणा अभिनत्पर्वतानाम् || 1 ||
 अहन्नहिं पर्वते शिश्रियाणं त्वष्टास्मै वज्रं स्वयं ततक्ष |
 वाश्रा इव धेनवः स्यन्दमाना अङ्गः समुद्रमव जगमुरापः || 2 ||
 वृषायमाणोऽवृणीत् सोमं त्रिकद्रुकेष्वपिबत्सुतस्यं |
 आ सायकं मघवादत्त वज्रमहन्नेनं प्रथमजा महीनाम् || 3 ||
 यदिन्द्राहन्प्रथमजामहीनामान्मायिनाममिनाः प्रोत मायाः |
 आत्सूर्यं जनयन्द्यामुषासं तादीत्वा शत्रुं न किल विवित्से || 4 ||
 अहन्वृत्रं वृत्रतरं व्यसमिन्द्रो वज्रेण महता वृधेन |
 स्कन्धांसीव कुलिशेना विवृक्णाहिः शयत उपपृक्पृथिव्याः || 5 ||
 अयोद्धेव दुर्मद आ हि जुह्वे महावीरं तुविब्रधमृजीषम् |
 नातारीदस्य समृतिं वृधानां सं रुजानाः पिपिषु इन्द्रशत्रुः || 6 ||
 अपादहस्तो अपृतन्यदिन्द्रमास्य वज्रमधि सानौ जघान |
 वृष्णो वध्निः प्रतिमानं बुभूषन्पुरुत्रा वृत्रो अशयद्व्यस्तः || 7 ||
 नदं न भिन्नममुया शयानं मनो रुहाणा अति यन्त्यापः |
 याश्चिद्वृत्रो महिना पर्यतिष्ठत्तासामहिः पत्सुतःशीर्षभूव || 8 ||
 नीचावया अभवद्वृत्रपुत्रेन्द्रो अस्या अव वर्धर्जभार |
 उत्तरा सूरधरः पुत्र आसीद्वानुः शये सहवत्सा न धेनुः || 9 ||
 अतिष्ठन्तीनामनिवेशानां काष्ठानां मध्ये निहितं शरीरम् |

| | |
|--|--------|
| वृत्रस्य निण्यं वि चरन्त्यापो दीर्घं तम् आशयदिन्द्रशत्रुः | ॥ 10 ॥ |
| दासपत्नीरहिगोपा अतिष्ठन्निरुद्धा आपः पृणिनेव गावः | |
| अपां बिलमपिहितं यदासीद्वृत्रं जघन्वाँ अप् तद्ववार | ॥ 11 ॥ |
| अश्व्यो वारो अभवस्तदिन्द्र सृके यत्त्वा प्रत्यहन्देव एकः | |
| अजयो गा अजयः शूर सोममवासृजः सर्तवे सप्त सिन्धून् | ॥ 12 ॥ |
| नास्मै विद्युन्न तन्यतुः सिषेधु न यां मिहमकिरद्भ्रादुनिं च | |
| इन्द्रश्च यद्युयुधाते अहिश्चोतापरीभ्यो मघवा वि जिग्ये | ॥ 13 ॥ |
| अहेर्यातारं कर्मपश्य इन्द्र हृदि यत्ते जघ्नुषो भीरगच्छत् | |
| नवं च यन्नवतिं च स्रवन्तीः श्येनो न भीतो अतरो रजांसि | ॥ 14 ॥ |
| इन्द्रो यातोऽवसितस्य राजा शर्मस्य च शृङ्गिणो वज्रबाहुः | |
| सेदु राजा क्षयति चर्षणीनामुरान्न नेमिः परि ता बभूव | ॥ 15 ॥ |

| इति प्रथमाष्टके द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः |

ऋषिः हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

| | |
|--|--------|
| एतायामोपे गव्यन्तु इन्द्रमस्माकं सु प्रमतिं वावृधाति | |
| अनामृणः कुविदादस्य रायो गवां केतुं परमावर्जते नः | ॥ 1 ॥ |
| उपेदुहं धनदामप्रतीतं जुष्टां न श्येनो वसतिं पंतामि | |
| इन्द्रं नमस्यन्नुपमेभिर्कर्यः स्तोतृभ्यो हव्यो अस्ति यामन् | ॥ 2 ॥ |
| नि सर्वसेन इषुधौरसक्त समर्यो गा अजति यस्य वष्टि | |
| चोष्कूयमाण इन्द्र भूरि वामं मा पणिभूरस्मदधि प्रवृद्ध | ॥ 3 ॥ |
| वधीर्हि दस्युं धनिनं घनेनैकश्चरन्नुपशाकेभिरिन्द्र | |
| धनोरधि विषुणक्ते व्यायन्नयज्वानः सनकाः प्रेतिमीयुः | ॥ 4 ॥ |
| परा चिच्छीर्षा ववृजुस्त इन्द्रायज्वानो यज्वभिः स्पर्धमानाः | |
| प्र यद्विवो हरिवः स्थातरुग्र निरव्रतां अंधमो रोदस्योः | ॥ 5 ॥ |
| अयुयुत्सन्नवद्यस्य सेनामयातयन्त क्षितयो नवगवाः | |
| वृषायुधो न वध्रयो निरष्टाः प्रवद्धिरिन्द्राच्चितयन्त आयन् | ॥ 6 ॥ |
| त्वमेतान्नुदतो जक्षतश्चायोधयो रजस इन्द्र पारे | |
| अवादहो दिव आ दस्युमुञ्चा प्र सुन्वतः स्तुवतः शंसमावः | ॥ 7 ॥ |
| चक्राणासः परीणहं पृथिव्या हिरण्येन मणिना शुम्भमानाः | |
| न हिन्वानासस्तितरुस्त इन्द्रं परि स्पर्शो अदधात्सूर्येण | ॥ 8 ॥ |
| परि यदिन्द्र रोदसी उभे अबुभोजीर्महिना विश्वतः सीम् | |
| अमन्यमानां अभि मन्यमानैर्निर्ब्रह्मभिरधमो दस्युमिन्द्र | ॥ 9 ॥ |
| न ये दिवः पृथिव्या अन्तमापुर्न मायाभिर्धनदां पर्यभूवन् | |
| युजं वज्रं वृषभश्चक्र इन्द्रो निज्योतिषा तमसो गा अदुक्षत् | ॥ 10 ॥ |
| अनु स्वधामक्षरन्नापो अस्यावर्धत् मध्य आ नाव्यानाम् | |
| सुधीचीनेन मनसा तमिन्द्र ओजिष्ठेन हन्मनाहन्नभि द्यून् | ॥ 11 ॥ |
| न्याविध्यदिलीबिशस्य दृळ्हा वि शृङ्गिणमभिनच्छुष्मिन्द्रः | |
| यावत्तरो मघवन्यावदोजो वज्रेण शत्रुमवधीः पृतन्युम् | ॥ 12 ॥ |
| अभि सिध्मो अजिगादस्य शत्रुन्वि तिग्मेन वृषभेणा पुरोऽभेत् | |
| सं वज्रेणासृजद्वृत्रमिन्द्रः प्र स्वां मतिमतिरच्छाशदानः | ॥ 13 ॥ |
| आवः कुत्समिन्द्र यस्मिञ्चाकन्प्रावो युध्यन्तं वृषभं दशद्युम् | |
| शफच्युतो रेणुर्नक्षत् द्यामुच्छ्रैत्रेयो नृषाहाय तस्थौ | ॥ 14 ॥ |
| आवः शमं वृषभं तुग्यासु क्षेत्रजेषे मघवञ्छ्रियं गाम् | |
| ज्योक् चिदत्र तस्थिवांसो अक्रञ्छत्रूयतामधरा वेदनाकः | ॥ 15 ॥ |

ऋषिः हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1-8,10-11, त्रिष्टुप् 9,12

देवता अश्विनौ

| | |
|---|----|
| त्रिंशन्नो अद्या भवतं नवेदसा विभुर्वा याम उत रातिरश्विना | |
| युवोर्हि यन्त्रं हिम्येव वासंसोऽभ्यायंसेन्या भवतं मनीषिभिः | 1 |
| त्रयः प्वयो मधुवाहने रथे सोमस्य वेनामनु विश्व इद्विदुः | |
| त्रयः स्कम्भासः स्कभितास आरभे त्रिनक्तं याथस्त्रिर्वश्विना दिवा | 2 |
| समाने अहन्त्रिरवद्यगोहना त्रिरद्य यज्ञं मधुना मिमिक्षतम् | |
| त्रिर्वाजवतीरिषो अश्विना युवं दोषा अस्मभ्यमुषसंश्च पिन्वतम् | 3 |
| त्रिर्वीर्यात् त्रिरनुव्रते जने त्रिः सुप्राव्यं त्रेधेव शिक्षतम् | |
| त्रिर्नान्द्यं वहतमश्विना युवं त्रिः पृक्षो अस्मे अक्षरेव पिन्वतम् | 4 |
| त्रिर्नो रयिं वहतमश्विना युवं त्रिर्देवताता त्रिरुतावतं धियः | |
| त्रिः सौभगत्वं त्रिरुत श्रवांसि नस्त्रिष्टं वां सूरं दुहिता रुहद्रथम् | 5 |
| त्रिर्नो अश्विना दिव्यानि भेषजा त्रिः पार्थिवानि त्रिरु दत्तमद्भ्यः | |
| ओमानं शंयोर्मकाय सूनवे त्रिधातु शर्म वहतं शुभस्पती | 6 |
| त्रिर्नो अश्विना यजता दिवेदिवे परि त्रिधातु पृथिवीमशायतम् | |
| तिस्रो नासत्या रथ्या परावत आत्मेव वातः स्वसराणि गच्छतम् | 7 |
| त्रिरश्विना सिन्धुभिः सप्तमातृभिस्त्रय आहावास्त्रेधा हविष्कृतम् | |
| तिस्रः पृथिवीरुपरि प्रवा दिवो नाकं रक्षथे द्युभिरक्तुभिर्हितम् | 8 |
| क्व १ त्री चक्रा त्रिवृता रथस्य क्व १ त्रयो वन्धुरो ये सनीळाः | |
| क्वदा योगो वाजिनो रासभस्य येन यज्ञं नासत्योपयाथः | 9 |
| आ नासत्या गच्छतं ह्यते हविर्मध्वः पिबतं मधुपेभिरासभिः | |
| युवोर्हि पूर्वं सवितोषसो रथमृताय चित्रं घृतवन्तमिष्यति | 10 |
| आ नासत्या त्रिभिरैकादशैरिह देवेभिर्यातं मधुपेयमश्विना | |
| प्रायुस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं सेधतं द्वेषो भवतं सचाभुवा | 11 |
| आ नो अश्विना त्रिवृता रथेनार्वाञ्चं रयिं वहतं सुवीरम् | |
| शृण्वन्ता वामवसे जोहवीमि वृधे च नो भवतं वाजसातौ | 12 |

ऋषिः हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1,9, त्रिष्टुप् 2-8,10-11

देवता अग्नि-मित्रावरुण-रात्रि-सवितारः 1 सविता 2-11

| | |
|--|---|
| ह्याम्यग्निं प्रथमं स्वस्तये ह्यामि मित्रावरुणाविहावसे | |
| ह्यामि रात्रीं जगतो निवेशनीं ह्यामि देवं सवितारमृतये | 1 |
| आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च | |
| हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् | 2 |
| याति देवः प्रवता यात्युद्धता याति शुभ्राभ्यां यजतो हरिभ्याम् | |

| | |
|--|--------|
| आ देवो याति सविता परावतोऽपु विश्वा दुरिता बार्धमानः | ॥ 3 ॥ |
| अभीवृतं कृशनैर्विश्वरूपं हिरण्यशम्यं यजतो बृहन्तम् | |
| आस्थाद्रथं सविता चित्रभानुः कृष्णा रजांसि तविषीं दधानः | ॥ 4 ॥ |
| वि जनाञ्छ्यावाः शितिपादो अख्यत्रथं हिरण्यप्रउगं वहन्तः | |
| शश्वद्विशः सवितुर्देवस्योपस्थे विश्वा भुवनानि तस्थुः | ॥ 5 ॥ |
| तिस्रो द्यावः सवितुर्द्वा उपस्थां एकां यमस्य भुवने विराषाट् | |
| आणि न रथ्यममृताधि तस्थुरिह ब्रवीतु य उ तच्चिकेतत् | ॥ 6 ॥ |
| वि सुपर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यद्रभीरवेपा असुरः सुनीथः | |
| क्वेदानीं सूर्यः कश्चिकेत कतमां द्यां रश्मिरस्या ततान | ॥ 7 ॥ |
| अष्टौ व्यख्यत्कुकुभः पृथिव्यास्त्री धन्व योजना सप्त सिन्धून् | |
| हिरण्याक्षः सविता देव आगाद्दध्रत्वा दाशुषे वार्याणि | ॥ 8 ॥ |
| हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणिरुभे द्यावापृथिवी अन्तरीयते | |
| अपामीवां बार्धते वेति सूर्यमभि कृष्णेन रजसा द्यामृणोति | ॥ 9 ॥ |
| हिरण्यहस्तो असुरः सुनीथः सुमृळीकः स्ववां यात्वर्वाङ् | |
| अपसेधन्नक्षसो यातुधानानस्थाद्देवः प्रतिदोषं गृणानः | ॥ 10 ॥ |
| ये ते पन्थाः सवितः पूर्व्यासोऽरेणवः सुकृता अन्तरिक्षे | |
| तेभिर्नो अद्य पृथिभिस्सुगेभी रक्षां च नो अधि च ब्रूहि देव | ॥ 11 ॥ |

(20)

36

(म.1, अनु.8)

ऋषिः कण्वः घोरः

छन्दः बृहती 1,3,5,7,9,11,13,15,17,19,

सतोबृहती 2,4,6,8,10,12,14,16,18,20 देवता अग्निः 1-12,15-20, यूपः अग्निः वा 13-14

| | |
|---|-------|
| प्र वो यद्दं पुरुणां विशां देवयतीनाम् | |
| अग्निं सूक्तेभिर्वचोभिरीमहे यं सीमिदन्य ईळते | ॥ 1 ॥ |
| जनांसो अग्निं दधिरे सहोवृधं हविष्मन्तो विधेम ते | |
| स त्वं नो अद्य सुमना इहाविता भवा वाजेषु सन्त्य | ॥ 2 ॥ |
| प्र त्वा दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम् | |
| महस्ते सतो वि चरन्त्युर्चयो दिवि स्पृशन्ति भानवः | ॥ 3 ॥ |
| देवासस्त्वा वरुणो मित्रो अर्यमा सं दूतं प्रत्नमिन्धते | |
| विश्वं सो अग्ने जयति त्वया धनं यस्ते ददाशु मर्त्यः | ॥ 4 ॥ |
| मन्द्रो होता गृहपतिरग्रं दूतो विशामसि | |
| त्वे विश्वा संगतानि व्रता ध्रुवा यानि देवा अकृण्वत | ॥ 5 ॥ |
| त्वे इदग्रे सुभगे यविष्ठ्य विश्वमाहूयते हविः | |
| स त्वं नो अद्य सुमना उतापरं यक्षि देवान्तसुवीर्या | ॥ 6 ॥ |
| तं घैमित्था नमस्विन् उप स्वराजमासते | |

| | |
|---|--------|
| होत्राभिरुग्रिं मनुषुः समिन्धते तितिर्वासो अति स्त्रिधः | ॥ 7 ॥ |
| घ्नन्तो वृत्रमतरन्नोदसी अप उरु क्षयाय चक्रिरे | |
| भुवत्कण्वे वृषा द्युम्याहुतः क्रन्ददश्वो गविष्टिषु | ॥ 8 ॥ |
| सं सीदस्व म्हाँ असि शोचस्व देववीतमः | |
| वि धूममग्ने अरुषं मियेध्य सृज प्रशस्त दर्शतम् | ॥ 9 ॥ |
| यं त्वा देवासो मनवे दधुरिह यजिष्ठं हव्यवाहन | |
| यं कण्वो मेध्यातिथिर्धनस्पृतं यं वृषा यमुपस्तुतः | ॥ 10 ॥ |
| यमग्निं मेध्यातिथिः कण्व ईध ऋतादधि | |
| तस्य प्रेषो दीदियुस्तमिमा ऋचस्तमग्निं वर्धयामसि | ॥ 11 ॥ |
| रायस्पृधि स्वधावोऽस्ति हि तेऽग्ने देवेष्वाप्यम् | |
| त्वं वाजस्य श्रुत्यस्य राजसि स नो मृळ म्हाँ असि | ॥ 12 ॥ |
| ऊर्ध्व ऊ षु ण ऊतये तिष्ठा देवो न सविता | |
| ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्विर्विह्वयामहे | ॥ 13 ॥ |
| ऊर्ध्वो नः पाह्यंहसो नि केतुना विश्वं समत्रिणं दह | |
| कृधी न ऊर्ध्वाञ्चरथाय जीवसे विदा देवेषु नो दुवः | ॥ 14 ॥ |
| पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तेरराव्याः | |
| पाहि रीषत उत वा जिघांसतो बृहद्भानो यविष्ठ्य | ॥ 15 ॥ |
| घनेव विष्वग्वि जह्यराव्यास्तपुर्जम्भ यो अस्मधुक् | |
| यो मर्त्युः शिशीते अत्यक्तुभिर्मा नुः स रिपुरीशत | ॥ 16 ॥ |
| अग्निर्वत्रे सुवीर्यमग्निः कण्वाय सौभगम् | |
| अग्निः प्रार्वन्मित्रोत मेध्यातिथिमग्निः साता उपस्तुतम् | ॥ 17 ॥ |
| अग्निना तुर्वशं यदुं परावत उग्रादेवं हवामहे | |
| अग्निर्नयन्नववास्त्वं बृहद्रथं तुर्वीति दस्यवे सहः | ॥ 18 ॥ |
| नि त्वामग्ने मनुर्दधे ज्योतिर्जनाय शश्वते | |
| दीदेथ कण्व ऋतजात उक्षितो यं नमस्यन्ति कृष्टयः | ॥ 19 ॥ |
| त्वेषासो अग्नेरमवन्तो अर्चयो भीमासो न प्रतीतये | |
| रक्षस्विनः सदमिद्यातुमावतो विश्वं समत्रिणं दह | ॥ 20 ॥ |

(15)

37

(म.1, अनु.8)

ऋषिः कण्वः घौरः

छन्दः गायत्री

देवता मरुतः

| | | |
|---|----------------------|-------|
| क्रीळं वः शर्धो मारुतमनुर्वाणं रथेशुभम् | कण्वा अग्नि प्र गायत | ॥ 1 ॥ |
| ये पृषतीभिर्ऋष्टिभिः साकं वाशीभिर्ऋष्टिभिः | अजायन्त स्वभानवः | ॥ 2 ॥ |
| इहेव शृण्व एषां कशा हस्तेषु यद्वदान् | नि यामञ्चित्रमृञ्जते | ॥ 3 ॥ |
| प्र वः शर्धाय घृष्वये त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे | देवत्तं ब्रह्म गायत | ॥ 4 ॥ |

| | |
|--|--------|
| प्र शंसा गोष्वय्यं क्रीळं यच्छर्धो मारुतम् । जम्भे रसस्य वावृधे | ॥ 5 ॥ |
| को वो वर्षिष्ठ आ नरो दिवश्च गमश्च धूतयः । यत्सीमन्तं न धूनुथ | ॥ 6 ॥ |
| नि वो यामाय मानुषो दुध उग्राय मन्यवे । जिहीतु पर्वतो गिरिः | ॥ 7 ॥ |
| येषामज्मेषु पृथिवी जुजुवाँइव विश्पतिः । भिया यामेषु रेजते | ॥ 8 ॥ |
| स्थिरं हि जानमेषां वयो मातुर्निरैतवे । यत्सीमनु द्विता शवः | ॥ 9 ॥ |
| उदु त्ये सूनवो गिरः काष्ठा अज्मेष्वलत । वाश्रा अभिज्ञु यातवे | ॥ 10 ॥ |
| त्यं चिद्धा दीर्घं पृथुं मिहो नपातममृध्रम् । प्र च्यावयन्ति यामभिः | ॥ 11 ॥ |
| मरुतो यद्ध वो बलं जनाँ अचुच्यवीतन । गिरौरचुच्यवीतन | ॥ 12 ॥ |
| यद्ध यान्ति मरुतः सं हं ब्रुवतेऽध्वन्ना । शृणोति कश्चिदेषाम् | ॥ 13 ॥ |
| प्र यातु शीभमाशुभिः सन्ति कण्वेषु वो दुवः । तत्रो षु मादयाध्वै | ॥ 14 ॥ |
| अस्ति हि ष्मा मदाय वः स्मसिं ष्मा वयमेषाम् । विश्वं चिदायुर्जीवसे | ॥ 15 ॥ |

(15)

38

(म.1, अनु.8)

| | | |
|-----------------|---------------|-------------|
| ऋषिः कण्वः घौरः | छन्दः गायत्री | देवता मरुतः |
|-----------------|---------------|-------------|

| | |
|--|--------|
| कद्ध नूनं कंधप्रियः पिता पुत्रं न हस्तयोः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः | ॥ 1 ॥ |
| क्क नूनं कद्धो अर्थं गन्ता दिवो न पृथिव्याः । क्व वो गावो न रण्यन्ति | ॥ 2 ॥ |
| क्क वः सुम्ना नव्यांसि मरुतः क्व सुविता । क्वो ३ विश्वानि सौभगा | ॥ 3 ॥ |
| यद्युयं पृश्निमातरो मर्तासुः स्यातन । स्तोता वो अमृतः स्यात् | ॥ 4 ॥ |
| मा वो मृगो न यवसे जरिता भूदजोष्यः । पथा यमस्य गादुप | ॥ 5 ॥ |
| मो षु णः परापरा निर्ऋतिर्दुर्हणा वधीत् । पदीष्ट तृष्ण्या सह | ॥ 6 ॥ |
| वाश्रेव विद्युन्मिमाति वृत्सं न माता सिषक्ति । यदेषां वृष्टिरसर्जि | ॥ 8 ॥ |
| दिवा चित्तमः कृण्वन्ति पर्जन्येनोदवाहेन । यत्पृथिर्वा व्युन्दन्ति | ॥ 9 ॥ |
| अध स्वानामरुतां विश्वमा सद्म पार्थिवम् । अरेजन्तु प्र मानुषाः | ॥ 10 ॥ |
| मरुतो वीळुपाणिभिश्चित्रा रोधस्वतीरनु । यातेमखिद्रयामभिः | ॥ 11 ॥ |
| स्थिरा वः सन्तु नेमयो रथा अश्वास एषाम् । सुसंस्कृता अभीशवः | ॥ 12 ॥ |
| अच्छा वदा तना गिरा जरायै ब्रह्मणस्पतिम् । अग्निं मित्रं न दर्शतम् | ॥ 13 ॥ |
| मिमीहि श्लोकमास्यै पर्जन्येव ततनः । गाय गायत्रमुक्थ्यम् | ॥ 14 ॥ |
| वन्दस्व मरुतं गुणं त्वेषं पनस्युमर्किणम् । अस्मे वृद्धा असन्निह | ॥ 15 ॥ |

(10)

39

(म.1, अनु.8)

| | | |
|-----------------|---|-------------|
| ऋषिः कण्वः घौरः | छन्दः बृहती 1,3,5,7,9 सतोबृहती 2,4,6,8,10 | देवता मरुतः |
|-----------------|---|-------------|

| | |
|---|-------|
| प्र यदित्था परावतः शोचिर्न मानमस्यथ | |
| कस्य क्रत्वा मरुतः कस्य वर्षसा कं याथ कं हं धूतयः | ॥ 1 ॥ |
| स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदै वीळू उत प्रतिष्कभे | |
| युष्मार्कमस्तु तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिनः | ॥ 2 ॥ |

परां ह यत्स्थिरं हृथ नरो वर्तयथा गुरु । वि याथन वृनिनः पृथिव्या व्याशाः पर्वतानाम् ॥ 3 ॥
 नहि वः शत्रुर्विविदे अधि द्यवि न भूम्यां रिशादसः ।
 युष्माकमस्तु तविषी तना युजा रुद्रासो नू चिदाधृषे ॥ 4 ॥
 प्र वैपयन्ति पर्वतान्वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् । प्रो आरत मरुतो दुर्मदाइव देवांसुः सर्वया विशा ॥ 5 ॥
 उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं प्रष्टिर्वहति रोहितः । आ वो यामाय पृथिवी चिदश्रोदबीभयन्त मानुषाः ॥ 6 ॥
 आ वो मक्षू तनाय कं रुद्रा अवो वृणीमहे । गन्ता नूनं नोऽवसा यथा पुरेत्या कण्वाय बिभ्युषे ॥ 7 ॥
 युष्मेषितो मरुतो मर्त्येषित आ यो नो अभ्व ईषते ।
 वि तं युयोत् शवसा व्योजसा वि युष्माकाभिरुतिभिः ॥ 8 ॥
 अस्मि हि प्रयज्यवः कण्वं दद प्रचेतसः । अस्मिभिर्मरुत् आ न ऊतिभिर्गन्ता वृष्टिं न विद्युतः ॥ 9 ॥
 अस्माम्योजो बिभृथा सुदानवोऽस्मि धूतयः शवः ।
 ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यव इषुं न सृजत् द्विषम् ॥ 10 ॥

(8)

40

(म.1, अनु.8)

| | | |
|-----------------|---------------------------------------|---------------------|
| ऋषिः कण्वः घौरः | छन्दः बृहती 1,3,5,7, सतोबृहती 2,4,6,8 | देवता ब्रह्मणस्पतिः |
|-----------------|---------------------------------------|---------------------|

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देव्यन्तस्त्वेमहे । उप प्र यन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा सचा ॥ 1 ॥
 त्वामिद्धि सहसस्पुत्र मर्त्यं उपब्रूते धने हिते । सुवीर्यं मरुत् आ स्वश्व्यं दधीत् यो व आचुके ॥ 2 ॥
 प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता । अच्छा वीरं नर्यं पङ्किराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ॥ 3 ॥
 यो वाघते ददाति सूनरं वसु स धत्ते अक्षिति श्रवः ।
 तस्मा इळां सुवीरा मा यजामहे सुप्रतूर्तिमनेहसम् ॥ 4 ॥
 प्र नूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युक्थ्यम् । यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा देवा ओकांसि चक्रिरे ॥ 5 ॥
 तमिद्धोचेमा विदथेषु शंभुवं मन्त्रं देवा अनेहसम् ।
 इमां च वाचं प्रतिहर्यथा नरो विश्वेद्वामा वो अश्रवत् ॥ 6 ॥
 को देवयन्तमश्रवज्जनं को वृक्तर्बहिषम् । प्रप्र दाश्वान्पुस्त्याभिरस्थितान्तर्वावत्क्षयं दधे ॥ 7 ॥
 उप क्षत्रं पृञ्चीत हन्ति राजभिर्भये चित्सुक्षितिं दधे ।
 नास्य वर्ता न तरुता महाधने नाभे अस्ति वृज्जिणः ॥ 8 ॥

(9)

41

(म.1, अनु.8)

| | | |
|-----------------|---------------|--|
| ऋषिः कण्वः घौरः | छन्दः गायत्री | देवता वरुणमित्रार्यमणः 1-3,7-9, आदित्याः 4-6 |
|-----------------|---------------|--|

यं रक्षन्ति प्रचेतसो वरुणो मित्रो अर्यमा । नू चित्स दभ्यते जनः ॥ 1 ॥
 यं बाहुतेव पिप्रति पान्ति मर्त्यं रिषः । अरिष्टः सर्व एधते ॥ 2 ॥
 वि दुर्गा वि द्विषः पुरो घ्नन्ति राजान एषाम् । नयन्ति दुरिता तिरः ॥ 3 ॥
 सुगः पन्था अनृक्षर आदित्यास ऋतं यते । नात्रावखादो अस्ति वः ॥ 4 ॥
 यं यज्ञं नयथा नर आदित्या ऋजुना पथा । प्र वः स धीतये नशत् ॥ 5 ॥
 स रत्नं मर्त्यो वसु विश्वं तोकमुत त्मना । अच्छा गच्छत्यस्तृतः ॥ 6 ॥
 कथा राधाम सखायुः स्तोमं मित्रस्यार्यमणः । महि प्सरो वरुणस्य ॥ 7 ॥

मा वो घ्नन्तं मा शपन्तं प्रति वोचे देवयन्तम् । सुमैरिद्ध आ विवासे ॥ 8 ॥
चतुरश्रिद्धदमानाद्विभीयादा निर्धातोः । न दुरुक्ताय स्पृहयेत् ॥ 9 ॥

(10)

42

(म.1, अनु.8)

ऋषिः कण्वः घौरः छन्दः गायत्री देवता पूषा

सं पूषन्नध्वनस्तिर व्यंहौ विमुचो नपात् । सक्ष्वा देव प्र णस्पुरः ॥ 1 ॥
यो नः पूषन्नघो वृको दुःशेव आदिदेशति । अपं स्म तं पथो जहि ॥ 2 ॥
अप त्वं परिपन्थिनं मुषीवाणं हुरश्चितम् । दूरमधि सुतेरज ॥ 3 ॥
त्वं तस्य द्याविनोऽघशंसस्य कस्य चित् । पदाभि तिष्ठ तपुषिम् ॥ 4 ॥
आ ततै दस्र मन्तुमः पूषन्नवो वृणीमहे । येन पितृनचौदयः ॥ 5 ॥
अधा नो विश्वसौभग हिरण्यवाशीमत्तम । धनानि सुषणा कृधि ॥ 6 ॥
अति नः सश्चतो नय सुगा नः सुपथा कृणु । पूषन्निह क्रतुं विदः ॥ 7 ॥
अभि सूयवसं नय न नवज्वारो अध्वने । पूषन्निह क्रतुं विदः ॥ 8 ॥
शग्धि पूर्ध प्र यंसि च शिशीहि प्रास्युदरम् । पूषन्निह क्रतुं विदः ॥ 9 ॥
न पूषणं मेथामसि सूक्तैरुभि गृणीमसि । वसूनि दुस्ममीमहे ॥ 10 ॥

(9)

43

(म.1, अनु.8)

ऋषिः कण्वः घौरः छन्दः गायत्री 1-8, अनुष्टुप् 9 देवता रुद्रः 1-2,4-6, रुद्रः मित्रावरुणौ च 3, सोमः7-9

कद्रुद्राय प्रचेतसे मीळ्हुष्टमाय तव्यसे । वोचेम शंतमं हृदे ॥ 1 ॥
यथा नो अदितिः कर्त्पश्चे नृभ्यो यथा गवे । यथा तोकाय रुद्रियम् ॥ 2 ॥
यथा नो मित्रो वरुणो यथा रुद्रश्चिकेतति । यथा विश्वे सजोषसः ॥ 3 ॥
गाथपतिं मेधपतिं रुद्रं जलाषभेषजम् । तच्छंयोः सुममीमहे ॥ 4 ॥
यः शुक्रइव सूर्यो हिरण्यमिव रोचते । श्रेष्ठो देवानां वसुः ॥ 5 ॥
शं नः कर्त्त्यवते सुगं मेषाय मेधे । नृभ्यो नारिभ्यो गवे ॥ 6 ॥
अस्मे सौम श्रियमधि नि धैहि शतस्य नृणाम् । महि श्रवस्तुविनुम्णम् ॥ 7 ॥
मा नः सोमपरिबाधो मारातयो जुहुरन्त । आ न इन्द्रो वाजे भज ॥ 8 ॥
यास्ते प्रजा अमृतस्य परस्मिन्धामनृतस्य । ॥ 9 ॥
मूर्धा नाभा सोम वेन आभूषन्तीः सोम वेदः ॥ 9 ॥

(14)

44

(म.1, अनु.9)

ऋषिः प्रस्कण्वः काण्वः छन्दः बृहती 1,3,5,7,9,11,13, सतोबृहती 2,4,6,8,10,12,14
देवता अग्निः अश्विनौ उषाः च 1-2, अग्निः 3-14

अग्ने विर्वस्वदुषसश्चित्रं राधो अमर्त्य । आ दाशुषे जातवेदो वहा त्वमद्या देवाँ उषुर्बुधः ॥ 1 ॥
जुष्टो हि दूतो असि हव्यवाहनोऽग्रं रथीरध्वरणाम् । ॥ 2 ॥
सजूरश्विभ्यामुषसा सुवीर्यमस्मे धैहि श्रवो बृहत् ॥ 2 ॥
अद्या दूतं वृणीमहे वसुमग्निं पुरुप्रियम् । धूमकेतुं भाक्रजीकं व्युष्टिषु यज्ञानामध्वरश्रियम् ॥ 3 ॥

श्रेष्ठं यविष्ठमतिथिं स्वाहुतं जुष्टं जनाय दाशुषे । देवाँ अच्छा यातवे जातवेदसमग्निमीळे व्युष्टिषु ॥ 4 ॥
 स्तविष्णामि त्वामहं विश्वस्यामृत भोजन । अग्ने त्रातारमृतं मियेध्य यजिष्ठं हव्यवाहन ॥ 5 ॥
 सुशंसो बोधि गृणते यविष्ठ्य मधुजिह्वः स्वाहुतः । प्रस्कण्वस्य प्रतिरत्रायुर्जीवसे नमस्या दैव्यं जनम् ॥ 6 ॥
 होतारं विश्ववेदसं सं हि त्वा विशं इन्धते । स आ वह पुरुहूत प्रचेतसोऽग्ने देवाँ इह द्रवत् ॥ 7 ॥
 सवितारमुषसमश्विना भगमग्निं व्युष्टिषु क्षपः । कण्वासस्त्वा सुतसोमास इन्धते हव्यवाहं स्वध्वर ॥ 8 ॥
 पतिर्होर्ध्वराणामग्ने दूतो विशामसि । उषर्बुध आ वह सोमपीतये देवाँ अद्य स्वर्दशः ॥ 9 ॥
 अग्ने पूर्वा अनूषसो विभावसो दीदेथ विश्वदर्शतः । असि ग्रामेष्वविता पुरोहितोऽसि यज्ञेषु मानुषः ॥ 10 ॥
 नि त्वा यज्ञस्य साधनमग्ने होतारमृत्विजम् । मनुष्वदैव धीमहि प्रचेतसं जीरं दूतममर्त्यम् ॥ 11 ॥
 यद्देवानां मित्रमहः पुरोहितोऽन्तरो यासि दूत्यम् । ॥ 12 ॥
 सिन्धोरिव प्रस्वनितास ऊर्मयोऽग्नेभ्राजन्ते अर्चयः ॥ 12 ॥
 श्रुधि श्रुत्कर्णं वह्निभिर्देवैरग्ने सयार्वभिः । आ सीदन्तु बर्हिषि मित्रो अर्यमा प्रातुर्यावाणो अध्वरम् ॥ 13 ॥
 शृण्वन्तु स्तोमं मरुतः सुदानवोऽग्निजिह्वा ऋतावृधः । ॥ 14 ॥
 पिबन्तु सोमं वरुणो धृतव्रतोऽश्विभ्यामुषसा सजूः ॥ 14 ॥

(10)

45

(म.1, अनु.9)

| | | |
|------------------------|-----------------|---------------------------|
| ऋषिः प्रस्कण्वः काण्वः | छन्दः अनुष्टुप् | देवता अग्निः 1-9 देवाः 10 |
|------------------------|-----------------|---------------------------|

त्वमग्ने वसूरिह रुद्राँ आदित्याँ उत । यजा स्वध्वरं जनं मनुजातं घृतप्रुषम् ॥ 1 ॥
 श्रुष्टीवानो हि दाशुषे देवा अग्ने विचेतसः । तान्नोहिदश्व गिर्वणस्त्रयस्त्रिंशत्तमा वह ॥ 2 ॥
 प्रियमेधुवदत्रिवज्जातवेदो विरूपवत् । अङ्गिरस्वन्महिव्रत् प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम् ॥ 3 ॥
 महिकेरव ऊतये प्रियमैधा अहूषत । राजन्तमध्वराणामग्निं शुक्रेण शोचिषा ॥ 4 ॥
 घृताहवन सन्त्येमा उ षु श्रुधी गिरः । याभिः कण्वस्य सूनवो हवन्तेऽवसे त्वा ॥ 5 ॥
 त्वां चित्रश्रवस्तम् हवन्ते विक्षु जन्तवः । शोचिष्केशं पुरुप्रियाग्ने हव्याय वोळहवे ॥ 6 ॥
 नि त्वा होतारमृत्विजं दधिरे वसुवित्तमम् । श्रुत्कर्णं सप्रथस्तमं विप्रा अग्ने दिविष्टिषु ॥ 7 ॥
 आ त्वा विप्रा अचुच्यवुः सुतसोमा अभि प्रयः । बृहद्भा बिभ्रतो हविरग्ने मतीय दाशुषे ॥ 8 ॥
 प्रातुर्याव्णाः सहस्कृत सोमपेयाय सन्त्य । इहाद्य दैव्यं जनं बर्हिरा सादया वसो ॥ 9 ॥
 अर्वाञ्च दैव्यं जनमग्ने यक्ष्व सहूतिभिः । अयं सोमः सुदानवस्तं पात तिरोअह्वयम् ॥ 10 ॥

(15)

46

(म.1, अनु.9)

| | | |
|------------------------|---------------|---------------|
| ऋषिः प्रस्कण्वः काण्वः | छन्दः गायत्री | देवता अश्विनौ |
|------------------------|---------------|---------------|

एषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः । स्तुषे वामश्विना बृहत् ॥ 1 ॥
 या दस्रा सिन्धुमातरा मनोतरा रयीणाम् । धिया देवा वसुविदा ॥ 2 ॥
 वच्यन्ते वां ककुहासो जूर्णायामधि विष्टपि । यद्वां रथो विभिष्मतात् ॥ 3 ॥
 हविषा जारो अपां पिपति पपुर्नरा । पिता कुटस्य चर्षणिः ॥ 4 ॥
 आदारो वां मतीनां नासत्या मतवचसा । पातं सोमस्य धृष्णुया ॥ 5 ॥
 या नः पीपरदश्विना ज्योतिष्मती तमस्तिरः । तामस्मे रासाथामिषम् ॥ 6 ॥
 आ नो नावा मतीनां यातं पाराय गन्तवे । युञ्जाथामश्विना रथम् ॥ 7 ॥

| | | |
|--|---------------------------|--------|
| अरित्रं वां दिवस्पृथु तीर्थे सिन्धूनां रथः | धिया युयुज् इन्दवः | ॥ 8 ॥ |
| दिवस्कण्वासु इन्दवो वसु सिन्धूनां पदे | स्वं वृत्रिं कुहं धित्सथः | ॥ 9 ॥ |
| अभूदु भा उ अंशवे हिरण्यं प्रति सूर्यः | व्यख्यञ्जिह्वयासितः | ॥ 10 ॥ |
| अभूदु पारमेतवे पन्था ऋतस्य साधुया | अदर्शि वि स्रुतिर्दिवः | ॥ 11 ॥ |
| तत्तदिदुश्चिनोरवो जरिता प्रति भूषति | मदे सोमस्य पिप्रतोः | ॥ 12 ॥ |
| वावसाना विवस्वति सोमस्य पीत्या गिरा | मनुष्वच्छंभू आ गतम् | ॥ 13 ॥ |
| युवोरुषा अनु श्रियं परिज्मनोरुपाचरत् | ऋता वनथो अक्तुभिः | ॥ 14 ॥ |
| उभा पिबतमश्चिनोभा नः शर्म यच्छतम् | अविद्रियाभिरूतिभिः | ॥ 15 ॥ |

| इति प्रथमाष्टके तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ।

(चतुर्थोऽध्यायः ॥ वर्गाः 1-29)

(10)

47

(म.1, अनु.9)

ऋषिः प्रस्कण्वः काण्वः छन्दः बृहती 1,3,5,7,9, सतोबृहती 2,4,6,8,10 देवता अश्विनौ

अयं वां मधुमत्तमः सुतः सोमं ऋतावृधा । तमश्विना पिबतं तिरोअह्वयं धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥ 1 ॥
त्रिवन्धुरेण त्रिवृता सुपेशसा रथेना यातमश्विना ।
कण्वासो वां ब्रह्म कृण्वन्त्यध्वरे तेषां सु शृणुतं हवम् ॥ 2 ॥
अश्विना मधुमत्तमं पातं सोममृतावृधा । अथाद्य दस्रा वसु बिभ्रता रथे दाश्वान्समुप गच्छतम् ॥ 3 ॥
त्रिषधस्थे बर्हिषि विश्ववेदसा मध्वा यज्ञं मिमिक्षतम् ।
कण्वासो वां सुतसोमा अभिद्यवो युवां हवन्ते अश्विना ॥ 4 ॥
याभिः कण्वमभिष्टिभिः प्रावतं युवमश्विना ।
ताभिः प्व १ स्माँ अवतं शुभस्पती पातं सोममृतावृधा ॥ 5 ॥
सुदासे दस्रा वसु बिभ्रता रथे पृक्षो वहतमश्विना ।
रयिं समुद्रादुत वा दिवस्पर्यस्मे धत्तं पुरुस्पृहम् ॥ 6 ॥
यन्नासत्या परावति यद्वा स्थो अधि तुर्वशे ।
अतो रथेन सुवृता न आ गतं साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥ 7 ॥
अर्वाञ्चा वां सप्तयोऽध्वरश्रियो वहन्तु सवनेदुप ।
इषं पृञ्चन्ता सुकृते सुदानव आ बर्हिः सीदतं नरा ॥ 8 ॥
तेन नासत्या गतं रथेन सूर्यत्वचा । येन शश्वद्दूहथुर्दाशुषे वसु मध्वः सोमस्य पीतये ॥ 9 ॥
उक्थेभिर्वागवसे पुरुवसू अकैश्च नि ह्वयामहे ।
शश्वत्कण्वानां सदसि प्रिये हि कं सोमं पपथुरश्विना ॥ 10 ॥

(16)

48

(म.1, अनु.9)

ऋषिः प्रस्कण्वः काण्वः छन्दः बृहती 1,3,5,7,9,11,13,15, सतोबृहती 2,4,6,8,10,12,14,16 देवता उषाः

सह वामेन न उषो व्युच्छा दुहितर्दिवः । सह द्युम्नेन बृहता विभावरि राया देवि दास्वती ॥ 1 ॥
अश्वीवतीर्गोमतीर्विश्वसुविदो भूरि च्यवन्त वस्तवे ।
उदीरयु प्रति मा सूनृता उषश्चोद राधो मघोनाम् ॥ 2 ॥
उवासोषा उच्छाञ्च नु देवी जीरा रथानाम् । ये अस्या आचरणेषु दक्षिरे समुद्रे न श्रवस्ववः ॥ 3 ॥
उषो ये ते प्र यामेषु युञ्जते मनो दानाय सूरयः ।
अत्राह तत्कण्वं एषां कण्वतमो नाम गृणाति नृणाम् ॥ 4 ॥
आ घा योषेव सूनर्युषा याति प्रभुञ्जती । जरयन्ती वृर्जनं पद्वदीयत् उत्पातयति पक्षिणः ॥ 5 ॥
वि या सृजति समनं व्य १ थिनः पदं न वेत्योदती ।
वयो नकिष्टे पतिवांस आसते व्युष्टौ वाजिनीवति ॥ 6 ॥
एषायुक्त परावतः सूर्यस्योदर्यनादधि । शतं रथेभिः सुभगोषा इयं वि यात्यभि मानुषान् ॥ 7 ॥
विश्वमस्या नानाम् चक्षसे जगुज्योतिष्कृणोति सूनरीं ।
अप द्वेषो मघोनीं दुहिता दिव उषा उच्छदप स्रिधः ॥ 8 ॥
उष आ भाहि भानुना चन्द्रेण दुहितर्दिवः । आवहन्ती भूर्यस्मभ्यं सौभगं व्युच्छन्ती दिविष्टिषु ॥ 9 ॥

| | |
|---|----|
| विश्वस्य हि प्राणं जीवं त्वे वि यदुच्छसिं सूनरि | |
| सा नो रथेन बृहता विभावरि श्रुधि चित्रामघे हवम् | 10 |
| उषो वाजं हि वंस्व यश्चित्रो मानुषे जनै । | |
| तेना वह सुकृतो अध्वरां उप ये त्वा गृणन्ति वह्नयः | 11 |
| विश्वान्देवां आ वह सोमपीतयेऽन्तरिक्षादुषस्त्वम् | |
| सास्मासु धा गोमदश्वावदुक्थ्य ऽ मुषो वाजं सुवीर्यम् | 12 |
| यस्या रुशन्तो अर्चयुः प्रति भद्रा अदक्षतासा नो रथि विश्ववारं सुपेशसमुषा दंदातु सुगम्यम् | 13 |
| ये चिद्धि त्वामृषयुः पूर्वं ऊतये जुहूरेऽवसे महि | |
| सा नः स्तोमो अभि गृणीहि राधसोषः शुक्रेण शोचिषा | 14 |
| उषो यदद्य भानुना वि द्वारावृणवो दिवः | |
| प्र नो यच्छतादवृकं पृथु च्छर्दिः प्र देवि गोमतीरिषः | 15 |
| सं नो राया बृहता विश्वपेशसा मिमिक्ष्वा समिळाभिरा | |
| सं द्युमेन विश्वतुरोषो महि सं वाजैर्वाजिनीवति | 16 |

(4)

49

(म.1, अनु.9)

| | | |
|------------------------|-----------------|------------|
| ऋषिः प्रस्कण्वः काण्वः | छन्दः अनुष्टुप् | देवता उषाः |
|------------------------|-----------------|------------|

| | | | |
|--|--|---------------------------------------|---|
| उषो भद्रेभिरा गहि दिवश्चिद्रोचनादधि | | वहन्त्वरुणप्सव उप त्वा सोमिनो गृहम् | 1 |
| सुपेशसं सुखं रथं यमध्यस्था उषस्त्वम् | | तेना सुश्रवसं जनं प्रावाद्य दुहितदिवः | 2 |
| वर्यश्चित्ते पत्रिणो द्विपच्चतुषदर्जुनि | | उषः प्रारंभ्रतूरनु दिवो अन्तैभ्यस्परि | 3 |
| व्युच्छन्ती हि रश्मिभिर्विश्वमाभासि रोचनम् | | तां त्वामुषर्वसूयवो गीभिः कण्वा अहूषत | 4 |

(13)

50

(म.1, अनु.9)

| | | |
|------------------------|------------------------------------|--------------|
| ऋषिः प्रस्कण्वः काण्वः | छन्दः गायत्री 1-9, अनुष्टुप् 10-13 | देवता सूर्यः |
|------------------------|------------------------------------|--------------|

| | | | |
|---|--|---|----|
| उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः | | दृशे विश्वायु सूर्यम् | 1 |
| अपु त्ये तायवो यथा नक्षत्रा यन्त्यक्तुभिः | | सूराय विश्वचक्षसे | 2 |
| अदश्रमस्य केतवो वि रश्मयो जनां अनु | | भ्राजन्तो अग्रयो यथा | 3 |
| तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य | | विश्वमा भासि रोचनम् | 4 |
| प्रत्यङ् देवानां विशः प्रत्यङ्गुदेषि मानुषान् | | प्रत्यङ्गुदेषि स्वर्दृशे | 5 |
| येना पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनां अनु | | त्वं वरुण पश्यसि | 6 |
| वि द्यामेषि रजस्पृथ्वहा मिमानो अक्तुभिः | | पश्यञ्जन्मानि सूर्य | 7 |
| सप्त त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य | | शोचिष्केशं विचक्षण | 8 |
| अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः सूरु रथस्य नृत्यः | | ताभिर्याति स्वयुक्तिभिः | 9 |
| उद्वयं तमस्स्परि ज्योतिष्पश्यन्त उत्तरम् | | देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् | 10 |
| उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम् | | हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय | 11 |
| शुकैषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि | | अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं नि दध्मसि | 12 |
| उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह | | द्विषन्तं मह्यं रुन्धयन्मो अहं द्विषते रधम् | 13 |

ऋषिः सव्यः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1-13, त्रिष्टुप् 14-15

देवता इन्द्रः

| | |
|---|--------|
| अभि त्यं मेषं पुरुहूतमृगमियमिन्द्रं गीर्भिर्मदता वस्वो अर्णवम् | |
| यस्य द्यावो न विचरन्ति मानुषा भुजे मंहिष्ठमभि विप्रमर्चत | ॥ 1 ॥ |
| अभीमवन्वन्स्वभिष्टिमूतयोऽन्तरिक्षप्रां तविषीभिरावृतम् | |
| इन्द्रं दक्षास ऋभवो मदच्युतं शतक्रतुं जवनी सूनृतारुहत् | ॥ 2 ॥ |
| त्वं गोत्रमङ्गिरोभ्योऽवृणोरपोतात्रये शतदुरेषु गातुवित् | |
| सुसेनं चिद्विमदायावहो वस्वाजावद्विं वावसानस्य नर्तयन् | ॥ 3 ॥ |
| त्वमपामपिधानावृणोरपाधारयः पर्वते दानुमद्वसु | |
| वृत्रं यदिन्द्र शवसावधीरहिमादित्सूर्यं दिव्यारोहयो दृशे | ॥ 4 ॥ |
| त्वं मायाभिरप मायिनोऽधमः स्वधाभिर्ये अधि शुप्तावजुह्वत | |
| त्वं पिप्रोर्नमणः प्रारुजः पुरः प्र ऋजिश्चानं दस्युहत्येष्वाविथ | ॥ 5 ॥ |
| त्वं कुत्सं शुष्णहत्येष्वाविथारन्धयोऽतिथिगवायु शम्बरम् | |
| महान्तं चिदर्बुदं नि क्रमीः पदा सनादेव दस्युहत्याय जज्ञिषे | ॥ 6 ॥ |
| त्वे विश्वा तविषी सुध्यग्घिता तव राधः सोमपीथाय हर्षते | |
| तव वज्रश्चिकिते बाह्वोर्हितो वृश्वा शत्रोरव विश्वानि वृष्ण्या | ॥ 7 ॥ |
| वि जानीह्यार्यान्ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान् | |
| शाकीं भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सध्मादेषु चाकन | ॥ 8 ॥ |
| अनुव्रताय रन्धयन्नपन्नतानाभूभिरिन्द्रः श्रथयन्ननाभुवः | |
| वृद्धस्य चिद्वर्धतो द्यामिनक्षतः स्तवानो वृमो वि जघान संदिहः | ॥ 9 ॥ |
| तक्षद्यत्त उशाना सहसा सहो वि रोदसी मज्मना बाधते शवः | |
| आ त्वा वातस्य नृमणो मनोयुज आ पूर्यमाणमवहन्नभि श्रवः | ॥ 10 ॥ |
| मन्दिष्ट यदुशनै काव्ये सचाँ इन्द्रो वृङ्क् वङ्कतराधि तिष्ठति | |
| उग्रो ययिं निरुपः स्रोतसासृजद्वि शुष्णास्य दंहिता ऐरयत्पुरः | ॥ 11 ॥ |
| आ स्मा रथं वृषपाणेषु तिष्ठसि शार्यातस्य प्रभृता येषु मन्दसे | |
| इन्द्र यथा सुतसोमेषु चाकनोऽनुर्वाणं श्लोकमा रोहसे दिवि | ॥ 12 ॥ |
| अददा अभाँ महते वचस्यवे कक्षीवते वृचयामिन्द्र सुन्वते | |
| मेनाभवो वृषणश्वस्य सुक्रतो विश्वेत्ता ते सर्वनेषु प्रवाच्या | ॥ 13 ॥ |
| इन्द्रो अश्रायि सुध्यो निरेके पज्रेषु स्तोमो दुर्यो न यूपः | |
| अश्वयुर्गव्यू रथयुर्वसूयुरिन्द्र इद्रायः क्षयति प्रयन्ता | ॥ 14 ॥ |
| इदं नमो वृषभाय स्वराजै सत्यशुष्माय त्वसेऽवाचि | |

त्यं सु मेषं महया स्वर्विदं शतं यस्य सुभ्वः साकमीरते |
 अत्यं न वाजं हवनस्यदं रथमेन्द्रं ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः || 1 ||
 स पर्वतो न धरुणेष्वच्युतः सहस्रमूतिस्तविषीषु वावृधे |
 इन्द्रो यद्वृत्रमवधीन्नदीवृतमुब्जन्नर्णांसि जहृषाणो अन्धसा || 2 ||
 स हि द्वरो द्वरिषु वत्र ऊर्धनि चन्द्रबुधो मदवृद्धो मनीषिभिः |
 इन्द्रं तमहे स्वपुस्यया धिया मंहिष्ठरातिं स हि पप्रिरन्धसः || 3 ||
 आ यं पृणन्ति दिवि सद्मर्बर्हिषः समुद्रं न सुभ्व १ः स्वा अभिष्टयः |
 तं वृत्रहत्ये अनु तस्थुरुतयः शुष्मा इन्द्रमवाता अहुतप्सवः || 4 ||
 अभि स्ववृष्टिं मदं अस्य युध्यतो रघ्वीरिव प्रवृणे संस्रुरुतयः |
 इन्द्रो यद्वृत्री धृषमाणो अन्धसा भिनद्धलस्यं परिधौरिव त्रितः || 5 ||
 परीं घृणा चरति तित्विषे शवोऽपो वृत्वी रजसो बुध्रमाशयत् |
 वृत्रस्य यत्प्रवृणे दुर्गभिश्चनो निजघन्थ हन्वोरिन्द्र तन्युतुम् || 6 ||
 हृदं न हि त्वा न्यृषन्त्यूर्मयो ब्रह्माणीन्द्र तव यानि वर्धना |
 त्वष्टा चित्ते युज्यं वावृधे शर्वस्तुतक्ष वज्रमभिभूत्योजसम् || 7 ||
 जघन्वाँ उ हरिभिः संभृतक्रतुविन्द्रं वृत्रं मनुषे गातुयन्नपः |
 अयच्छथा बाहोर्वज्रमायुसमधारयो दिव्या सूर्यं दृशे || 8 ||
 बृहत्स्वश्चन्द्रममवद्यदुक्थ्य १ मकृण्वत भियसा रोहणं दिवः |
 यन्मानुषप्रधना इन्द्रमूतयः स्वर्नृषाचो मरुतोऽमदन्ननु || 9 ||
 द्यौश्चिदस्यामवाँ अहेः स्वनादयोयवीद्धियसा वज्र इन्द्र ते |
 वृत्रस्य यद्वृद्धधानस्य रोदसी मदं सुतस्य शवसाभिन्च्छिरः || 10 ||
 यदिन्विन्द्र पृथिवी दशभुजिरहानि विश्वा ततनन्त कृष्टयः |
 अत्राह ते मघवन्विश्रुतं सहो द्यामनु शर्वसा बर्हणा भुवत् || 11 ||
 त्वमस्य पारे रजसो व्योमनः स्वभूत्योजा अवसे धृषन्मनः |
 चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोऽपः स्वः परिभूरेष्या दिवम् || 12 ||
 त्वं भुवः प्रतिमानं पृथिव्या ऋष्ववीरस्य बृहतः पतिर्भूः |
 विश्वमाप्रा अन्तरिक्षं महित्वा सत्यमद्धा नकिरन्यस्त्वावान् || 13 ||
 न यस्य द्यावापृथिवी अनु व्यचो न सिन्धवो रजसो अन्तमानुशुः |
 नोत स्ववृष्टिं मदं अस्य युध्यत एको अन्यच्चकृषे विश्वमानुषक् || 14 ||
 आर्चन्नत्र मरुतः सस्मिन्नाजौ विश्वे देवासौ अमदन्ननु त्वा |

(11)

53

(म.1, अनु.10)

ऋषिः सव्यः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1-9, त्रिष्टुप् 10-11

देवता इन्द्रः

| | |
|---|--------|
| न्यू ३ षु वाचं प्र महे भरामहे गिर इन्द्राय सदेने विवस्वतः | |
| नू चिद्धि रत्नं ससतामिवाविदन्न दुष्टुतिर्द्विणोदेषु शस्यते | ॥ 1 ॥ |
| दुरो अश्वस्य दुर इन्द्र गोरसि दुरो यवस्य वसुन इनस्पतिः | |
| शिक्षानरः प्रदिवो अकामकर्शनः सखा सखिभ्यस्तमिदं गृणीमसि | ॥ 2 ॥ |
| शचीव इन्द्र पुरुकृद्युमत्तम् तवेदिदमभितश्चेकिते वसु | |
| अतः संगृभ्याभिभूत आ भर मा त्वायतो जरितुः काममूनयीः | ॥ 3 ॥ |
| एभिद्युभिः सुमना एभिरिन्दुभिर्निरुन्धानो अमतिं गोभिरश्विना | |
| इन्द्रेण दस्युं दरयन्त इन्दुभिर्युतद्वेषसः समिषा रभेमहि | ॥ 4 ॥ |
| समिन्द्र राया समिषा रभेमहि सं वाजैभिः पुरुश्चन्द्रैरभिद्युभिः | |
| सं देव्या प्रमत्या वीरशुष्मया गोअग्रयाऽश्वावत्या रभेमहि | ॥ 5 ॥ |
| ते त्वा मदा अमदन्तानि वृष्ण्या ते सोमासो वृत्रहत्येषु सत्पते | |
| यत्कारवे दश वृत्राण्यप्रति बर्हिष्मते नि सहस्राणि बर्हयः | ॥ 6 ॥ |
| युधा युधुमुप घेदैषि धृष्णुया पुरा पुरं समिदं हंस्योर्जसा | |
| नम्या यदिन्द्र सख्या परावतिं निबर्हयो नमुचिं नाम मायिनम् | ॥ 7 ॥ |
| त्वं करञ्जमुत पूर्णयं वधीस्तेजिष्ठयातिथिग्वस्य वर्तनी | |
| त्वं शता वङ्गदस्याभिनत्पुरोऽनानुदः परिषूता ऋजिश्वना | ॥ 8 ॥ |
| त्वमेताञ्जनराज्ञो द्विर्दशाबन्धुना सुश्रवसोपजग्मुषः | |
| षष्टिं सहस्रां नवतिं नव श्रुतो नि चक्रेण रथ्या दुष्पदावृणक् | ॥ 9 ॥ |
| त्वमाविथ सुश्रवसं तवोतिभिस्तव त्रामभिरिन्द्र तूर्वयाणम् | |
| त्वमस्मै कुत्समतिथिग्वमायुं महे राज्ञे यूने अरन्धनायः | ॥ 10 ॥ |
| य उदचीन्द्र देवगोपाः सखायस्ते शिवतमा असां | |
| त्वां स्तोषाम त्वया सुवीरा द्राघीयु आयुः प्रतरं दधानाः | ॥ 11 ॥ |

(11)

54

(म.1, अनु.10)

ऋषिः सव्यः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1-5,7,10, त्रिष्टुप् 6,8-9,11

देवता इन्द्रः

| | |
|---|-------|
| मा नो अस्मिन्मघवन्मृत्स्वंहसि नहि ते अन्तः शवसः परीणशं | |
| अक्रन्दयो नद्यो ३ रोरुवद्वना कथा न क्षोणीभियसा समारत | ॥ 1 ॥ |
| अर्चा शक्राय शाकिने शचीवते शृण्वन्तमिन्द्रं महयन्नभि ष्टिहि | |
| यो धृष्णुना शवसा रोदसी उभे वृषा वृषत्वा वृषभो न्यञ्जते | ॥ 2 ॥ |

अर्चां दिवे बृहते शूष्यं वचः स्वक्षत्रं यस्य धृषतो धृषन्मनः ।
 बृहच्छ्रवा असुरो बर्हणा कृतः पुरो हरिभ्यां वृषभो रथो हि षः ॥ 3 ॥
 त्वं दिवो बृहतः सानु कोपयोऽव त्मना धृषता शम्बरं भिनत् ।
 यन्मायिनो व्रन्दिनो मन्दिना धृषच्छ्रितां गर्भस्तिमशानिं पृतन्यसि ॥ 4 ॥
 नि यद्वृणक्षिं श्वसनस्य मूर्धनि शुष्णास्य चिद्व्रन्दिनो रोरुवद्वना ।
 प्राचीनेन मनसा बर्हणावता यदद्या चित्कृणवः कस्त्वा परि ॥ 5 ॥
 त्वमाविथु नयं तुर्वशं यदुं त्वं तुर्वीतिं व्य्यं शतक्रतो ।
 त्वं रथमेतशं कृत्व्ये धने त्वं पुरो नवतिं दम्भयो नव ॥ 6 ॥
 स घा राजा सत्पतिः शूशुवज्जनो रातहव्यः प्रति यः शासमिन्वति ।
 उक्था वा यो अभिगृणाति राधसा दानुरस्मा उपरा पिन्वते दिवः ॥ 7 ॥
 असमं क्षत्रमसमा मनीषा प्र सोमपा अपसा सन्तु नेमै ।
 ये त इन्द्र ददुषो वर्धयन्ति महि क्षत्रं स्थविरं वृष्यं च ॥ 8 ॥
 तुभ्येदेते बहुला अद्रिदुग्धाश्चमूषदश्चमसा इन्द्रपानाः ।
 व्यश्रुहि तर्पया काममेषामथा मनो वसुदेयाय कृष्व ॥ 9 ॥
 अपामतिष्ठद्भूरुणह्वरं तमोऽन्तर्वृत्रस्य जठरेषु पर्वतः ।
 अभीमिन्द्रो नद्यो व्रिणा हिता विश्वा अनुष्ठाः प्रवृणेषु जिघ्रते ॥ 10 ॥
 स शेवृधमधि धा द्युम्रमस्मे महि क्षत्रं जनाषाळिन्द्र तव्यम् ।
 रक्षा च नो मघोनः पाहि सूरीनाये च नः स्वपत्या इषे धाः ॥ 11 ॥

(8)

55

(म.1, अनु.10)

ऋषिः सव्यः आङ्गिरसः

छन्दः जगती

देवता इन्द्रः

दिवश्चिदस्य वरिमा वि पप्रथु इन्द्रं न म्हा पृथिवी चन प्रति ।
 भीमस्तुविष्माञ्चर्षणिभ्य आतपः शिशीते वज्रं तेजसे न वंसगः ॥ 1 ॥
 सो अर्णवो न नद्यः समुद्रियः प्रति गृभ्णाति विश्रिता वरीमभिः ।
 इन्द्रः सोमस्य पीतये वृषायते सनात्स युध्म ओजसा पनस्यते ॥ 2 ॥
 त्वं तमिन्द्र पर्वतं न भोजसे महो नृम्णस्य धर्मणाऽभिरज्यसि ।
 प्र वीर्येण देवताऽति चेकिते विश्वस्मा उग्रः कर्मणे पुरोहितः ॥ 3 ॥
 स इद्वने नमस्युभिर्वचस्यते चारु जनेषु प्रब्रुवाण इन्द्रियम् ।
 वृषा छन्दुर्भवति हर्यतो वृषा क्षेमेण धेनां मघवा यदिन्वति ॥ 4 ॥
 स इन्महानि समिथानि मज्मना कृणोति युध्म ओजसा जनैभ्यः ।
 अथा चन श्रद्धधति त्विषीमत इन्द्राय वज्रं निघनिघ्नते वृधम् ॥ 5 ॥
 स हि श्रवस्युः सदनानि कृत्रिमा क्षमया वृधान ओजसा विनाशयन् ।
 ज्योतीषि कृण्वन्नवृकाणि यज्यवेऽव सुक्रतुः सर्तवा अपः सृजत् ॥ 6 ॥

दानाय मनः सोमपावन्नस्तु तेऽर्वाञ्चा हरी वन्दनश्रुदा कृधि |
 यमिष्ठासुः सारथयो य इन्द्र ते न त्वा केता आ दभ्रुवन्ति भूर्णयः || 7 ||
 अप्रक्षितं वसु बिभर्षि हस्तयोरषाळ्हं सहस्तन्वि श्रुतो दधे |
 आवृतासोऽवतासो न कर्तृभिस्तनूषु ते क्रतव इन्द्र भूरयः || 8 ||

(6)

56

(म.1, अनु.10)

| | | |
|---------------------|------------|---------------|
| ऋषिः सव्यः आङ्गिरसः | छन्दः जगती | देवता इन्द्रः |
|---------------------|------------|---------------|

एष प्र पूर्वोरव तस्य चमिषोऽत्यो न योषामुदयंस्त भुर्वणिः |
 दक्षं महे पाययते हिरण्मयं रथमावृत्या हरियोगमृभ्वसम् || 1 ||
 तं गूर्तयो नेमन्निषुः परीणसः समुद्रं न संचरणे सनिष्यवः |
 पतिं दक्षस्य विदथस्य नू सहो गिरिं न वेना अधि रोह तेजसा || 2 ||
 स तुर्वणिर्महाँ अरेणु पौस्ये गिरेर्भृष्टिर्न भ्राजते तुजा शवः |
 येन शुष्णं मायिनमायसो मदे दुध्र आभूषु रामयन्नि दामनि || 3 ||
 देवी यदि तविषी त्वावृधोतय इन्द्रं सिषक्त्युषसं न सूर्यः |
 यो धृष्णुना शवसा बाधते तम इर्यति रेणुं बृहदर्हरिष्वणिः || 4 ||
 वि यत्तिरो धरुणमच्युतं रजोऽतिष्ठिपो दिव आतासु बर्हणा |
 स्वर्मीळ्हे यन्मद इन्द्र हर्ष्याहन्वृत्रं निरपामौब्जो अर्णवम् || 5 ||
 त्वं दिवो धरुणं धिषु ओजसा पृथिव्या इन्द्र सदेनेषु माहिनः |
 त्वं सुतस्य मदे अरिणा अपो वि वृत्रस्य समया पाष्यारुजः || 6 ||

(6)

57

(म.1, अनु.10)

| | | |
|---------------------|------------|---------------|
| ऋषिः सव्यः आङ्गिरसः | छन्दः जगती | देवता इन्द्रः |
|---------------------|------------|---------------|

प्र महिष्ठाय बृहते बृहद्रये सत्यशुष्माय त्वसे मतिं भरे |
 अपामिव प्रवृणे यस्य दुर्धरं राधो विश्वायु शवसे अपावृतम् || 1 ||
 अध ते विश्वमनु हासदिष्टय आपो निम्नेव सर्वना हविष्मतः |
 यत्पर्वते न समशीत हर्यत इन्द्रस्य वज्रः श्रथिता हिरण्ययः || 2 ||
 अस्मै भीमाय नमसा समध्वर उषो न शुभ्र आ भरा पनीयसे |
 यस्य धाम श्रवसे नामेन्द्रियं ज्योतिरकारि हरितो नायसे || 3 ||
 इमे तं इन्द्र ते वयं पुरुष्टुत् ये त्वारभ्य चरामसि प्रभूवसो |
 नहि त्वदन्यो गिर्वणो गिरः सघत्क्षोणीरिव प्रति नो हर्य तद्वचः || 4 ||
 भूरि त इन्द्र वीर्यं तव स्मस्यस्य स्तोतुर्मघवन्काममा पृण |
 अनु ते द्यौर्बृहती वीर्यं मम इयं च ते पृथिवी नेम ओजसे || 5 ||
 त्वं तमिन्द्र पर्वतं महामुरुं वज्रेण वज्रिन्यर्वशश्चर्कतिथ |
 अवांसृजो निवृताः सर्तवा अपः सत्रा विश्वं दधिषु केवलं सहः || 6 ||

(9)

58

(म.1, अनु.11)

ऋषिः नोधाः गौतमः

छन्दः जगती 1-5, त्रिष्टुप् 6-9

देवता अग्निः

| | |
|--|-------|
| नू चित्सहोजा अमृतो नि तुन्दते होता यद्वृतो अभवद्विवस्वतः | |
| वि साधिष्ठेभिः पृथिभी रजो मम् आ देवताता हविषा विवासति | ॥ 1 ॥ |
| आ स्वमद्म युवमानो अजरस्तृष्वविष्यन्नत्सेषु तिष्ठति | |
| अत्यो न पृष्ठं प्रुषितस्य रोचते दिवो न सानु स्तनयन्नचिक्रदत् | ॥ 2 ॥ |
| क्राणा रुद्रेभिर्वसुभिः पुरोहितो होता निषत्तो रयिषाळमर्त्यः | |
| रथो न विक्ष्वृञ्जसान आयुषु व्यानुषग्वार्या देव ऋण्वति | ॥ 3 ॥ |
| वि वार्तजूतो अतसेषु तिष्ठते वृथा जुहूभिः सृण्या तुविष्वणिः | |
| तृषु यदग्रे वनिनो वृषायसे कृष्णं त एम् रुशदूर्मे अजर | ॥ 4 ॥ |
| तपुर्जम्भो वन आ वार्तचोदितो यूथे न साह्वं अवं वाति वंसंगः | |
| अभिव्रजन्नक्षितं पाजसा रजः स्थातुश्चरथं भयते पत्त्रिणः | ॥ 5 ॥ |
| दधुष्टा भृगवो मानुषेष्वारुयिं न चारुं सुहवं जनैभ्यः | |
| होतारमग्रे अतिथिं वरेण्यं मित्रं न शेवं दिव्याय जन्मने | ॥ 6 ॥ |
| होतारं सप्त जुहो ३ यजिष्ठं यं वाघतो वृणते अध्वरेषु | |
| अग्निं विश्वेषामरतिं वसूनां सपर्यामि प्रयसा यामि रत्नम् | ॥ 7 ॥ |
| अच्छिद्रा सूनो सहसो नो अद्य स्तोतृभ्यो मित्रमहः शर्म यच्छ | |
| अग्रे गृणन्तमंहस उरुष्योर्जो नपात्पूर्भिरायसीभिः | ॥ 8 ॥ |
| भवा वरूथं गृणते विभावो भवा मघवन्मघवद्भ्यः शर्म | |
| उरुष्याग्रे अंहसो गृणन्तं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् | ॥ 9 ॥ |

(7)

59

(म.1, अनु.11)

ऋषिः नोधाः गौतमः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अग्निः वैश्वानरः

| | |
|--|-------|
| व्या इदग्रे अग्रयस्ते अन्ये त्वे विश्वे अमृता मादयन्ते | |
| वैश्वानर नाभिरसि क्षितीनां स्थूणोव जना उपमिद्यन्थ | ॥ 1 ॥ |
| मूर्धा दिवो नाभिरग्निः पृथिव्या अथाभवदरती रोदस्योः | |
| तं त्वा देवासोऽजनयन्त देवं वैश्वानर ज्योतिरिदार्याय | ॥ 2 ॥ |
| आ सूर्ये न रश्मयो ध्रुवासो वैश्वानरे दधिरेऽग्रा वसूनि | |
| या पर्वतेष्वोषधीष्वप्सु या मानुषेष्वसि तस्य राजा | ॥ 3 ॥ |
| बृहतीइव सूनवे रोदसी गिरो होता मनुष्यो ३ न दक्षः | |
| स्वर्वते सत्यशुष्माय पूर्वोवैश्वानराय नृतमाय यद्भीः | ॥ 4 ॥ |
| दिवश्चित्ते बृहतो जातवेदो वैश्वानर प्र रिरिचे महित्वम् | |
| राजा कृष्टीनामसि मानुषीणां युधा देवेभ्यो वरिवश्चकथ | ॥ 5 ॥ |

प्र नू महित्वं वृषभस्य वोचं यं पूरवो वृत्रहणं सचन्ते |
 वैश्वानरो दस्युमग्निर्जघन्वाँ अधूनोत्काष्ठा अव शम्बरं भेत् || 6 ||
 वैश्वानरो महिम्ना विश्वकृष्टिर्भरद्वाजेषु यजतो विभावा |
 शात्वनेये श्तिनीभिर्ग्निः पुरुणीथे जरते सूनृतावान् || 7 ||

(5)

60

(म.1, अनु.11)

ऋषिः नोधाः गौतमः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अग्निः

वह्निं यशसं विदथस्य केतुं सुप्राव्यं दूतं सद्योअर्थम् |
 द्विजन्मानं रयिमिव प्रशस्तं रातिं भरद्गवे मातरिश्वा || 1 ||
 अस्य शासुरुभयासः सचन्ते हविष्मन्त उशिजो ये च मर्ताः |
 दिवश्चित्पूर्वो न्यसादि होतापृच्छ्यो विश्पतिर्विक्षु वेधाः || 2 ||
 तं नव्यसी हृद आ जायमानमस्मत्सुकीर्तिर्मधुजिह्वमश्याः |
 यमृत्विजो वृजने मानुषासुः प्रयस्वन्त आयवो जीजनन्त || 3 ||
 उशिक्पावको वसुर्मानुषेषु वरैण्यो होताधायि विक्षु |
 दमूना गृहपतिर्दम आँ अग्निर्भुवद्रयिपती रयीणाम् || 4 ||
 तं त्वा वयं पतिमग्रे रयीणां प्र शंसामो मृतिभिर्गोतमासः |
 आशुं न वाजंभरं मर्जयन्तः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् || 5 ||

(16)

61

(म.1, अनु.11)

ऋषिः नोधाः गौतमः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

अस्मा इदु प्र त्वसे तुराय प्रयो न हर्मिं स्तोमं माहिनाय |
 ऋचीषमायाधिगव ओहमिन्द्राय ब्रह्माणि राततमा || 1 ||
 अस्मा इदु प्रयइव प्र यंसि भराभ्याङ्गुषं बाधे सुवृक्ति |
 इन्द्राय हृदा मनसा मनीषा प्रलाय पत्ये धियो मर्जयन्त || 2 ||
 अस्मा इदु त्यमुपमं स्वर्षा भराभ्याङ्गुषमास्येन |
 महिष्ठमच्छोक्तिभिर्मतीनां सुवृक्तिभिः सूरिं वावृधध्यै || 3 ||
 अस्मा इदु स्तोमं सं हिनोमि रथं न तष्टैव तत्सिनाय |
 गिरश्चु गिर्वाहसे सुवृक्तीन्द्राय विश्वमिन्वं मेधिराय || 4 ||
 अस्मा इदु सप्तमिव श्रवस्येन्द्रायार्क जुह्वा ३ समञ्जे |
 वीरं दानौकसं वन्दध्यै पुरां गूर्तश्रवसं दुर्माणम् || 5 ||
 अस्मा इदु त्वष्टा तक्षद्वत्रं स्वपस्तमं स्वयं १ रणाय |
 वृत्रस्य चिद्विदद्येन मर्म तुजनीशानस्तुजता कियेधाः || 6 ||
 अस्येदु मातुः सर्वनेषु सद्यो महः पितुं पपिवाञ्चार्वन्ना |

| | |
|--|--------|
| मुषायद्विष्णुः पचतं सहीयान्विध्यद्वराहं तिरो अद्विमस्ता | ॥ 7 ॥ |
| अस्मा इदु ग्राश्चिद्देवपत्नीरिन्द्रायार्कमहिहत्य ऊवुः | |
| परि द्यावापृथिवी जभ्र उर्वी नास्य ते महिमानं परि ष्टः | ॥ 8 ॥ |
| अस्येदेव प्र रिरिचे महित्वं दिवस्पृथिव्याः पर्यन्तरिक्षात् | |
| स्वराळिन्द्रो दम् आ विश्वगूर्तः स्वरिरमत्रो ववक्षे रणाय | ॥ 9 ॥ |
| अस्येदेव शर्वसा शुषन्तं वि वृश्चद्वज्रेण वृत्रमिन्द्रः | |
| गा न ब्राणा अवनीरमुञ्चदभि श्रवो दावने सचेताः | ॥ 10 ॥ |
| अस्येदु त्वेषसा रन्त सिन्धवः परि यद्वज्रेण सीमयच्छत् | |
| ईशानकृद्वाशुषे दशस्यन्तुर्वीतये गाधं तुर्वणिः कः | ॥ 11 ॥ |
| अस्मा इदु प्र भरा तूतुजानो वृत्राय वज्रमीशानः कियेधाः | |
| गोर्न पर्व वि रंदा तिरश्चेष्त्रणास्यपां चरध्वै | ॥ 12 ॥ |
| अस्येदु प्र ब्रूहि पूर्व्याणि तुरस्य कर्माणि नव्य उक्थैः | |
| युधे यद्विष्णान आयुधान्यघायमाणो निरिणाति शत्रून् | ॥ 13 ॥ |
| अस्येदु भिया गिरयश्च दृळ्हा द्यावा च भूमा जनुषस्तुजेते | |
| उपो वेनस्य जोगुवान ओणि सद्यो भुवद्वीर्याय नोधाः | ॥ 14 ॥ |
| अस्मा इदु त्यदनु दाय्येषामेको यद्वत्रे भूरेरीशानः | |
| प्रेतशं सूर्ये पस्पृधानं सौवश्व्ये सुष्विमावदिन्द्रः | ॥ 15 ॥ |
| एवा ते हारियोजना सुवृक्तीन्द्र ब्रह्माणि गोतमासो अक्रन् | |
| एषु विश्वपेशसं धियं धाः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् | ॥ 16 ॥ |

| इति प्रथमाष्टके चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः ।

ऋषिः नोधाः गौतमः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

| | |
|--|--------|
| प्र मन्महे शवसानाय शूषमाङ्गुषं गिर्वणसे अङ्गिरस्वत् | |
| सुवृक्तिभिः स्तुवत ऋग्मियायार्चामार्कं नरे विश्रुताय | ॥ 1 ॥ |
| प्र वो महे महि नमो भरध्वमाङ्गुष्यं शवसानाय सामं | |
| येना नः पूर्वे पितरः पदज्ञा अर्चन्तो अङ्गिरसो गा अविन्दन् | ॥ 2 ॥ |
| इन्द्रस्याङ्गिरसां चेष्टौ विदत्सरमा तनयाय धासिम् | |
| बृहस्पतिर्भिनदद्रिं विदद्वाः समुस्त्रियाभिर्वावशन्तु नरः | ॥ 3 ॥ |
| स सुष्टुभा स स्तुभा सप्त विप्रैः स्वरेणाद्रिं स्वय्यो ३ नवगवैः | |
| सरण्युभिः फल्लिमिन्द्र शक्र वलं रवेण दरयो दशगवैः | ॥ 4 ॥ |
| गृणानो अङ्गिरोभिर्दस्म वि वरुषसा सूर्येण गोभिरन्धः | |
| वि भूम्या अप्रथय इन्द्र सानु दिवो रज् उपरमस्तभायः | ॥ 5 ॥ |
| तदु प्रयक्षतममस्य कर्म दस्मस्य चारुतममस्ति दंसः | |
| उपह्वरे यदुपरा अपिन्वन्मध्वर्णसो नद्यश्चतस्रः | ॥ 6 ॥ |
| द्विता वि वत्रे सनजा सनीळे अयास्यः स्तवमानेभिरुक्तेः | |
| भगो न मेने परमे व्योमत्रधारयद्रोदसी सुदंसाः | ॥ 7 ॥ |
| सनाद्विवं परि भूमा विरूपे पुनुर्भुवा युवती स्वेभिरेवैः | |
| कृष्णेभिरुक्तेषा रुशब्दिर्वर्षुभिरा चरतो अन्यान्या | ॥ 8 ॥ |
| सनेमि सख्यं स्वपस्यमानः सनुर्दाधार शवसा सुदंसाः | |
| आमासु चिद्वधिषे पृक्कमन्तः पर्यः कृष्णासु रुशद्रोहिणीषु | ॥ 9 ॥ |
| सनात्सनीळा अवनिरवाता व्रता रक्षन्ते अमृताः सहोभिः | |
| पुरू सहस्रा जनयो न पत्नीर्दुवस्यन्ति स्वसारो अहयाणम् | ॥ 10 ॥ |
| सनायुवो नमसा नव्यो अर्केर्वसूयवो मृतयो दस्म दद्रुः | |
| पतिं न पत्नीरुशतीरुशन्तं स्पृशन्ति त्वा शवसावन्मनीषाः | ॥ 11 ॥ |
| सनादेव तव रायो गर्भस्तौ न क्षीयन्ते नोप दस्यन्ति दस्म | |
| द्युमाँ असि क्रतुमाँ इन्द्र धीरुः शिक्षा शचीवस्तव नः शचीभिः | ॥ 12 ॥ |
| सनायुते गोतम इन्द्र नव्यमतक्षद्वह्न हरियोजनाय | |
| सुनीथाय नः शवसान नोधाः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् | ॥ 13 ॥ |

ऋषिः नोधाः गौतमः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

| | |
|--|-------|
| त्वं म्हाँ इन्द्र यो ह शुष्मैर्घावा जज्ञानः पृथिवी अमे धाः | |
| यद्ध ते विश्वा गिरयश्चिदभ्वा भिया दृळ्हासः किरणा नैजन् | ॥ 1 ॥ |

आ यद्धरीं इन्द्र विव्रता वेरा ते वज्रं जरिता बाहोर्धात् ।
 येनाविहर्यतक्रतो अमित्रान्पुरं इष्णासि पुरुहूत पूर्वीः ॥ 2 ॥
 त्वं सत्य इन्द्र धृष्णुरेतान्त्वमृभुक्षा नर्यस्त्वं षाट् ।
 त्वं शुष्णं वृजने पृक्ष आणौ यूने कुत्साय द्युमते सचाहन् ॥ 3 ॥
 त्वं ह त्यदिन्द्र चोदीः सखा वृत्रं यद्वज्रिन्वृषकर्मन्नुभ्राः ।
 यद्ध शूर वृषमणः पराचैर्वि दस्यूर्योनावकृतो वृथाषाट् ॥ 4 ॥
 त्वं ह त्यदिन्द्रारिषण्यन्दृहस्य चिन्मतीनामजुष्टौ ।
 व्यस्मदा काष्ठा अर्वते वर्धनेव वज्रिञ्छथिह्यमित्रान् ॥ 5 ॥
 त्वां ह त्यदिन्द्रार्णसातौ स्वमीळहे नरं आज्ञा हवन्ते ।
 तव स्वधाव इयमा समर्य ऊतिर्वाजेष्वत्साय्या भूत् ॥ 6 ॥
 त्वं ह त्यदिन्द्र सप्त युध्यन्पुरो वज्रिन्पुरुकुत्साय दर्दः ।
 बर्हिर्न यत्सुदासे वृथा वर्गहो रंजन्वरिवः पूरवे कः ॥ 7 ॥
 त्वं त्यां न इन्द्र देव चित्रामिषमापो न पीपयः परिज्मन् ।
 यया शूर प्रत्यस्मभ्यं यंसि त्मनमूर्जं न विश्वधु क्षरंध्यै ॥ 8 ॥
 अकारि त इन्द्र गोतमेभिर्ब्रह्माण्योक्ता नमसा हरिभ्याम् ।
 सुपेशंसं वाजमा भरा नः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥ 9 ॥

(15)

64

(म.1, अनु.11)

| | | |
|------------------|--------------------------------|-------------|
| ऋषिः नोधाः गौतमः | छन्दः जगती 1-14, त्रिष्टुप् 15 | देवता मरुतः |
|------------------|--------------------------------|-------------|

वृष्णे शर्धायु समखाय वेधसे नोधः सुवृक्तिं प्र भरा मरुद्धः ।
 अपो न धीरो मनसा सुहस्त्यो गिरः समञ्जे विदथेष्वामुवः ॥ 1 ॥
 ते जज्ञिरे दिव ऋष्वस उक्षणो रुद्रस्य मर्या असुरा अरेपसः ।
 पावकासः शुचयः सूर्याइव सत्वानो न द्रप्सिनो घोरवर्पसः ॥ 2 ॥
 युवानो रुद्रा अजरा अभोग्घनो ववक्षुरधिगावः पर्वताइव ।
 दृळ्हा चिद्विश्वा भुवनानि पार्थिवा प्र च्यावयन्ति दिव्यानि मज्मना ॥ 3 ॥
 चित्रैरञ्जिभिर्वपुषे व्यञ्जते वक्षःसु रुक्माँ अधि येतिरे शुभे ।
 अंसैष्वेषां नि मिमृक्षुर्ऋष्टयः साकं जज्ञिरे स्वधया दिवो नरः ॥ 4 ॥
 ईशानकृतो धुनयो रिशादसो वातान्विद्युत्स्तविषीभिरक्रत ।
 दुहन्त्यूर्धदिव्यानि धूतयो भूमिं पिन्वन्ति पर्यसा परिज्रयः ॥ 5 ॥
 पिन्वन्त्यपो मरुतः सुदानवः पयो घृतवद्विदथेष्वामुवः ।
 अत्यं न मिहे वि नयन्ति वाजिनमुत्सं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितम् ॥ 6 ॥
 महिषासो मायिनश्चित्रभानवो गिरयो न स्वतवसो रघुष्यदः ।

| | |
|--|--------|
| मृगाइव हस्तिनः खादथा वना यदारुणीषु तविषीरयुग्ध्वम् | ॥ 7 ॥ |
| सिंहाइव नानदति प्रचैतसः पिशाइव सुपिशो विश्ववेदसः | |
| क्षपो जिन्वन्तः पृषतीभिर्ऋष्टिभिः समित्सबाधः शवसाहिमन्यवः | ॥ 8 ॥ |
| रोदसी आ वदता गणश्रियो नृषाचः शूराः शवसाहिमन्यवः | |
| आ वन्धुरैष्वमतिर्न दर्शता विद्युन्न तस्थौ मरुतो रथेषु वः | ॥ 9 ॥ |
| विश्ववेदसो रयिभिः समोकसः संमिश्रसस्तविषीभिर्विरुषिनः | |
| अस्तार इषुं दधिरे गर्भस्त्योरनन्तशुष्मा वृषखादयो नरः | ॥ 10 ॥ |
| हिरण्ययैभिः पविभिः पयोवृध उज्जिन्नन्त आपथ्योऽ न पर्वतान् | |
| मखा अयासः स्वसृतो ध्रुवच्युतो दुध्रकृतो मरुतो भ्राजदृष्टयः | ॥ 11 ॥ |
| घृषुं पावकं वनिनं विचर्षणिं रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि | |
| रजस्तुरं तवसं मारुतं गणमृजीषिणं वृषणं सञ्चत श्रिये | ॥ 12 ॥ |
| प्र नू स मर्तः शवसा जना अति तस्थौ व ऊती मरुतो यमावत | |
| अर्विद्धिर्वाजं भरते धना नृभिरापृच्छ्यं क्रतुमा क्षेति पुष्यति | ॥ 13 ॥ |
| चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु दुष्टरं द्युमन्तं शुष्मं मघवत्सु धत्तन | |
| धनस्पृतमुक्थ्यं विश्वचर्षणिं तोकं पुष्येम् तनयं शतं हिमाः | ॥ 14 ॥ |
| नू ष्टिरं मरुतो वीरवन्तमृतीषाहं रयिमस्मासु धत्त | |
| सहस्रिणं शतिनं शूशुवांसं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् | ॥ 15 ॥ |

(10)

65

(म.1, अनु.12)

ऋषिः पराशरः शाक्त्यः

छन्दः द्विपदा विराट्

देवता अग्निः

| | |
|--|--------|
| पश्वा न तायुं गुहा चतन्तं नमो युजानं नमो वहन्तम् | ॥ 1 ॥ |
| सजोषा धीराः पदैरनुं ग्मन्नुप त्वा सीदन्विश्वे यजत्राः | ॥ 2 ॥ |
| ऋतस्य देवा अनु व्रता गुर्भुवत्परिष्टिद्यौर्न भूमं | ॥ 3 ॥ |
| वर्धन्तीमार्षः पन्वा सुशिंश्विमृतस्य योना गर्भं सुजातम् | ॥ 4 ॥ |
| पुष्टिर्न रण्वा क्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्न भुज्म क्षोदो न शंभु | ॥ 5 ॥ |
| अत्यो नाज्मन्त्सर्गप्रतक्तः सिन्धुर्न क्षोदः क ई वराते | ॥ 6 ॥ |
| जामिः सिन्धूनां भ्रातैव स्वस्त्रामिभ्यान्न राजा वनान्यत्ति | ॥ 7 ॥ |
| यद्वातजूतो वना व्यस्थादग्निर्हं दाति रोमा पृथिव्याः | ॥ 8 ॥ |
| श्वसित्यप्सु हंसो न सीदन् क्रत्वा चेतिष्ठो विशामुषर्भुत् | ॥ 9 ॥ |
| सोमो न वेधा ऋतप्रजातः पशुर्न शिश्वा विभुदूरेभाः | ॥ 10 ॥ |

(10)

66

(म.1, अनु.12)

ऋषिः पराशरः शाक्त्यः

छन्दः द्विपदा विराट्

देवता अग्निः

| | |
|---|--------|
| रयिर्न चित्रा सूरु न संहगायुर्न प्राणो नित्यो न सूनुः | ॥ 1 ॥ |
| तक्का न भूर्णिर्वना सिषक्ति पयो न धेनुः शुचिर्विभावा | ॥ 2 ॥ |
| दाधार क्षेममोको न रण्वो यवो न पको जेता जनानाम् | ॥ 3 ॥ |
| ऋषिर्न स्तुभ्वा विक्षु प्रशस्तो वाजी न प्रीतो वयो दधाति | ॥ 4 ॥ |
| दुरोकशोचिः क्रतुर्न नित्यो जायेव योनावरं विश्वस्मै | ॥ 5 ॥ |
| चित्रो यदभ्राट्छेतो न विक्षु रथो न रुक्मी त्वेषः समत्सु | ॥ 6 ॥ |
| सेनेव सृष्टामं दधात्यस्तुर्न दिद्युत्वेषप्रतीका | ॥ 7 ॥ |
| यमो ह जातो यमो जर्नित्वं जारः कनीनां पतिर्जनीनाम् | ॥ 8 ॥ |
| तं वंश्वराथा वयं वसत्यास्तं न गावो नक्षन्त इद्धम् | ॥ 9 ॥ |
| सिन्धुर्न क्षोदः प्र नीचीरैनोन्नवन्त गावः स्वर्दृशीके | ॥ 10 ॥ |

(10)

67

(म.1, अनु.12)

ऋषिः पराशरः शाक्त्यः

छन्दः द्विपदा विराट्

देवता अग्निः

| | |
|---|--------|
| वनेषु जायुर्मतेषु मित्रो वृणीते श्रुष्टिं राजैवाजुर्यम् | ॥ 1 ॥ |
| क्षेमो न साधुः क्रतुर्न भद्रो भुवत्स्वाधीर्होता हव्यवाट् | ॥ 2 ॥ |
| हस्ते दधानो नृम्णा विश्वान्यमे देवान्धाद्गुहा निषीदन् | ॥ 3 ॥ |
| विदन्तीमत्र नरो धियंधा हृदा यत्तष्टान्मन्त्रां अशंसन् | ॥ 4 ॥ |
| अजो न क्षां दाधारं पृथिवीं तस्तम्भु द्यां मन्त्रेभिः सत्यैः | ॥ 5 ॥ |
| प्रिया पदानि पश्वो नि पाहि विश्वायुरग्रे गुहा गुहं गाः | ॥ 6 ॥ |
| य ईं चिकेत गुहा भवन्तमा यः ससाद् धारामृतस्य | ॥ 7 ॥ |
| वि ये चृतन्त्यृता सर्पन्त आदिद्वसूनि प्र ववाचास्मै | ॥ 8 ॥ |
| वि यो वीरुत्सु रोधन्महित्वोत प्रजा उत प्रसूष्वन्तः | ॥ 9 ॥ |
| चित्तिरपां दमे विश्वायुः सद्भैव धीराः संमार्य चक्रुः | ॥ 10 ॥ |

(10)

68

(म.1, अनु.12)

ऋषिः पराशरः शाक्त्यः

छन्दः द्विपदा विराट्

देवता अग्निः

| | |
|---|-------|
| श्रीणन्नप स्थादिवं भुरण्युः स्थातुश्चरथमक्तूर्न्यूर्णोत् | ॥ 1 ॥ |
| परि यदेषामेको विश्वेषां भुवद्देवो देवानां महित्वा | ॥ 2 ॥ |
| आदित्ते विश्वे क्रतुं जुषन्त शुष्काद्यद्देव जीवो जनिष्ठाः | ॥ 3 ॥ |
| भजन्त विश्वे देवत्वं नाम ऋतं सर्पन्तो अमृतमेवैः | ॥ 4 ॥ |
| ऋतस्य प्रेषां ऋतस्य धीतिर्विश्वायुर्विश्वे अपांसि चक्रुः | ॥ 5 ॥ |
| यस्तुभ्यं दाशाद्यो वा ते शिक्षात्तस्मै चिकित्वान्नयिं दयस्व | ॥ 6 ॥ |

| | |
|--|--------|
| होता निषत्तो मनोरपत्ये स चिन्वासां पतीं रयीणाम् | ॥ 7 ॥ |
| इच्छन्त रेतो मिथस्तनूषु सं जानत स्वैर्दक्षैरमूराः | ॥ 8 ॥ |
| पितुर्न पुत्राः क्रतुं जुषन्त श्रोषन्त्ये अस्य शासं तुरासः | ॥ 9 ॥ |
| वि रायं और्णोदुरं पुरुक्षुः पिपेश नाकं स्तृभिर्दमूनाः | ॥ 10 ॥ |

(10)

69

(म.1, अनु.12)

| | | |
|----------------------|----------------------|--------------|
| ऋषिः पराशरः शाक्त्यः | छन्दः द्विपदा विराट् | देवता अग्निः |
|----------------------|----------------------|--------------|

| | |
|---|--------|
| शुक्रः शुशुक्लं उषो न जारः प्रप्रा समीची दिवो न ज्योतिः | ॥ 1 ॥ |
| परि प्रजातः क्रत्वा बभूथ भुवो देवानां पिता पुत्रः सन् | ॥ 2 ॥ |
| वेधा अदृप्तो अग्निर्विजानन्नूधर्न गोनां स्वाद्या पितृनाम् | ॥ 3 ॥ |
| जने न शेवं आहूर्यः सन्मध्ये निषत्तो रण्वो दुरोणे | ॥ 4 ॥ |
| पुत्रो न जातो रण्वो दुरोणे वाजी न प्रीतो विशो वि तारीत् | ॥ 5 ॥ |
| विशो यदहे नृभिः सनीळा अग्निर्देवत्वा विश्वान्यश्याः | ॥ 6 ॥ |
| नकिष्ट एता व्रता मिनन्ति नृभ्यो यदेभ्यः श्रुष्टिं चकथं | ॥ 7 ॥ |
| तत्तु ते दंसो यदहन्त्समानैर्नृभिर्यद्युक्तो विवे रपांसि | ॥ 8 ॥ |
| उषो न जारो विभावोस्रः संज्ञातरूपश्चिकेतदस्मै | ॥ 9 ॥ |
| त्मना वहन्तो दुरो व्यृण्वन्नवन्त विश्वे स्वर्दृशीके | ॥ 10 ॥ |

(11)

70

(म.1, अनु.12)

| | | |
|----------------------|----------------------|--------------|
| ऋषिः पराशरः शाक्त्यः | छन्दः द्विपदा विराट् | देवता अग्निः |
|----------------------|----------------------|--------------|

| | |
|--|--------|
| वनेम पूर्वीरयो मनीषा अग्निः सुशोको विश्वान्यश्याः | ॥ 1 ॥ |
| आ दैव्यानि व्रता चिकित्वाना मानुषस्य जनस्य जन्म | ॥ 2 ॥ |
| गर्भो यो अपां गर्भो वनानां गर्भश्च स्थातां गर्भश्चरथाम् | ॥ 3 ॥ |
| अद्रौ चिदस्मा अन्तदुरोणे विशां न विश्वो अमृतः स्वाधीः | ॥ 4 ॥ |
| स हि क्षपावाँ अग्नी रयीणां दाशद्यो अस्मा अरं सूक्तैः | ॥ 5 ॥ |
| एता चिकित्वा भूमा नि पाहि देवानां जन्म मतांश्च विद्वान् | ॥ 6 ॥ |
| वर्धान्यं पूर्वीः क्षपो विरूपाः स्थातुश्च रथमृतप्रवीतम् | ॥ 7 ॥ |
| अराधि होता स्वर्निषत्तः कृण्वन्विश्वान्यपांसि सत्या | ॥ 8 ॥ |
| गोषु प्रशस्ति वनेषु धिषे भरन्त विश्वे बलिं स्वर्णः | ॥ 9 ॥ |
| वि त्वा नरः पुरुत्रा संपर्यन्पितुर्न जिब्रेर्वि वेदो भरन्त | ॥ 10 ॥ |
| साधुर्न गृध्रस्तैव शूरो यातेव भीमस्त्वेषः समत्सु | ॥ 11 ॥ |

ऋषिः पराशरः शाक्त्यः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अग्निः

| | |
|---|----|
| उप प्र जिन्वन्नृशतीरुशन्तं पतिं न नित्यं जनयः सनीळाः | |
| स्वसारः श्यावीमरुषीमजुष्रञ्चित्रमुच्छन्तीमुषसं न गावः | 1 |
| वीळु चिहृळहा पितरो न उक्थैरद्रिं रुज्त्रङ्गिरसो रवेण | |
| चक्रुर्दिवो बृहतो गातुमस्मे अहः स्वर्विविदुः केतुमुस्राः | 2 |
| दधन्नृतं धनयन्नस्य धीतिमादिदुर्यो दिधिष्वोऽ विभृत्राः | |
| अतृष्यन्तीरपसो यन्त्यच्छा देवाञ्जन्म प्रयसा वर्धयन्तीः | 3 |
| मथीद्यदी विभृतो मातरिश्वा गृहेगृहे श्येतो जेन्यो भूत् | |
| आदीं राज्ञे न सहीयसे सचा सन्ना दूत्यं भृगवाणो विवाय | 4 |
| महे यत्पित्र ई रसं दिवे करव त्सरत्पृशन्त्यश्चिकित्वान् | |
| सृजदस्ता धृषता दिद्युमस्मै स्वायां देवो दुहितरि त्विषिं धात् | 5 |
| स्व आ यस्तुभ्यं दम् आ विभाति नमो वा दाशादुशतो अनु द्युन् | |
| वधो अग्रे वयो अस्य द्विबर्हा यासद्राया सरथं यं जुनासिं | 6 |
| अग्निं विश्वा अभि पृक्षः सचन्ते समुद्रं न स्रवतः सप्त यद्भिः | |
| न जामिभिर्वि चिकित्ते वयो नो विदा देवेषु प्रमतिं चिकित्वान् | 7 |
| आ यदिषे नृपतिं तेज आनुदृष्टुचि रेतो निषिक्तं द्यौरभीकै | |
| अग्निः शर्धमनवृद्यं युवानं स्वाध्यं जनयत्सूदयञ्च | 8 |
| मनो न योऽध्वनः सद्य एत्येकः सत्रा सूरुो वस्व ईशे | |
| राजाना मित्रावरुणा सुपाणी गोषु प्रियममृतं रक्षमाणा | 9 |
| मा नो अग्रे सख्या पित्र्याणि प्र मर्षिष्ठा अभि विदुष्कविः सन् | |
| नभो न रूपं जरिमा मिनाति पुरा तस्यां अभिशस्तेरधीहि | 10 |

ऋषिः पराशरः शाक्त्यः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अग्निः

| | |
|---|---|
| नि काव्या वेधसः शश्वतस्करहस्ते दधानो नर्या पुरुणि | |
| अग्निभुवद्रयिपती रयीणां सत्रा चक्राणो अमृतानि विश्वा | 1 |
| अस्मे वृत्सं परि षन्तं न विन्दन्निच्छन्तो विश्वे अमृता अमूराः | |
| श्रमयुवः पदव्यो धियंधास्तस्थुः पदे परमे चार्वग्रेः | 2 |
| तिस्रो यदग्रे शरदस्त्वामिच्छुचिं घृतेन शुचयः सपर्यान् | |
| नामानि चिद्धिरे यज्ञियान्यसूदयन्त तन्वः सुजाताः | 3 |
| आ रोदसी बृहती वेविदानाः प्र रुद्रियां जभिरे यज्ञियासः | |

| | |
|---|--------|
| विदन्मतो॑ नेमर्धिता चिकित्वानग्निं पदे परमे तस्थिवांसम् | ॥ 4 ॥ |
| संजानाना उप सीदन्नभिज्ञु पत्नीवन्तो नमस्यं नमस्यन् | |
| रिखिक्कांसस्तन्वः कृण्वत् स्वाः सखा सख्युर्निमिषि रक्षमाणाः | ॥ 5 ॥ |
| त्रिः सप्त यद्गुह्यानि त्वे इत्पदाविदुर्निहिता यज्ञियासः | |
| तेभीं रक्षन्ते अमृतं सजोषाः पशूञ्च स्थातृञ्चरथं च पाहि | ॥ 6 ॥ |
| विद्वाँ अग्ने व्युनानि क्षितीनां व्यानुषक्छुरुधो जीवसे धाः | |
| अन्तर्विद्वाँ अध्वनो देवयानानतन्द्रो दूतो अभवो हविर्वाट् | ॥ 7 ॥ |
| स्वाध्यो दिव आ सप्त यद्दी रायो दुरो व्यृत्ज्ञा अजानन् | |
| विदद्गव्यं सरमा दृळ्हमूर्वं येना नु कं मानुषी भोजते विट् | ॥ 8 ॥ |
| आ ये विश्वा स्वपत्यानि तस्थुः कृण्वानासो अमृतत्वार्य गातुम् | |
| महा महद्भिः पृथिवी वि तस्थे माता पुत्रैरदितिर्धायसे वेः | ॥ 9 ॥ |
| अधि श्रियं नि दधुश्चारुमस्मिन्दिवो यदक्षी अमृता अकृण्वन् | |
| अध क्षरन्ति सिन्धवो न सृष्टाः प्र नीचीरग्रे अरुषीरजानन् | ॥ 10 ॥ |

(10)

73

(म.1, अनु.12)

| | | |
|----------------------|------------------|--------------|
| ऋषिः पराशरः शाक्त्यः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अग्निः |
|----------------------|------------------|--------------|

| | |
|---|-------|
| रयिर्न यः पितृवित्तो वयोधाः सुप्रणीतिश्चिकितुषो न शासुः | |
| स्यो न शीरतिथिर्न प्रीणानो होतैव सद्य विधतो वि तारीत् | ॥ 1 ॥ |
| देवो न यः सविता सत्यमन्मा क्रत्वा निपाति वृजनानि विश्वा | |
| पुरुप्रशस्तो अमतिर्न सत्य आत्मेव शेवो दिधिषाय्यो भूत् | ॥ 2 ॥ |
| देवो न यः पृथिवी विश्वधाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा | |
| पुरःसदः शर्मसदो न वीरा अनवद्या पतिजुष्टेव नारी | ॥ 3 ॥ |
| तं त्वा नरो दम् आ नित्यमिद्धमग्रे सचन्त क्षितिषु ध्रुवासु | |
| अधि द्युमं नि दधुर्भूर्यस्मिन्भवा विश्वार्युर्धरुणो रयीणाम् | ॥ 4 ॥ |
| वि पृक्षो अग्ने मघवानो अश्रुर्वि सूरयो ददतो विश्वमायुः | |
| सनेम् वाजं समिथेष्वर्यो भागं देवेषु श्रवसे दधानाः | ॥ 5 ॥ |
| ऋतस्य हि धेनवो वावशानाः स्मदूधीः पीपयन्त द्युभक्ताः | |
| प्रावतः सुमतिं भिक्षमाणा वि सिन्धवः समया ससुरद्रिम् | ॥ 6 ॥ |
| त्वे अग्ने सुमतिं भिक्षमाणा दिवि श्रवो दधिरे यज्ञियासः | |
| नक्ता च चक्रुरुषसा विरूपे कृष्णं च वर्णमरुणं च सं धुः | ॥ 7 ॥ |
| यान्नाये मर्तान्तसुषूदो अग्ने ते स्याम मघवानो वयं च | |
| छायेव विश्वं भुवनं सिसक्ष्यापप्रिवात्रोदसी अन्तरिक्षम् | ॥ 8 ॥ |
| अर्वद्विरग्रे अर्वतो नृभिर्नृन्वीरैवीरान्वनुयामा त्वोताः | |

ईशानासः पितृवित्तस्य रायो वि सूरयः शतहिमा नो अश्रुः ॥ 9 ॥
 एता ते अग्र उचथानि वेधो जुष्टानि सन्तु मनसे हृदे च
 शक्रेम रायः सुधुरो यमं तेऽधि श्रवो देवभक्तं दधानाः ॥ 10 ॥

(9) **74** (म.1, अनु.13)

| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः गायत्री | देवता अग्निः |
|---|--------------------------|--------------|
| उपप्रयन्तो अध्वरं मन्त्रं वोचेमाग्रये | आरे अस्मे च शृण्वते | ॥ 1 ॥ |
| यः स्त्रीहितीषु पूर्यः संजग्मानासु कृष्टिषु | अरक्षद्वाशुषे गर्यम् | ॥ 2 ॥ |
| उत ब्रुवन्तु जन्तव उदग्निर्वृत्रहार्जनि | धनंजयो रणैरणे | ॥ 3 ॥ |
| यस्य दूतो असि क्षये वेषि हव्यानि वीतये | दस्मत्कृणोष्यध्वरम् | ॥ 4 ॥ |
| तमित्सुहव्यमङ्गिरः सुदेवं सहसो यहो | जना आहुः सुबर्हिषम् | ॥ 5 ॥ |
| आ च वहासि तां इह देवां उप प्रशस्तये | हव्या सुश्चन्द्र वीतये | ॥ 6 ॥ |
| न योरुपद्विरश्र्यः शृण्वे रथस्य कञ्चन | यदग्रे यासि दूत्यम् | ॥ 7 ॥ |
| त्वोतो वाज्यहयोऽभि पूर्वस्मादपरः | प्र दाश्वो अग्रे अस्थात् | ॥ 8 ॥ |
| उत द्युमत्सुवीर्यं बृहदग्रे विवाससि | देवेभ्यो देव दाशुषे | ॥ 9 ॥ |

(5) **75** (म.1, अनु.13)

| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः गायत्री | देवता अग्निः |
|---|------------------------|--------------|
| जुषस्व सप्रथस्तमं वचो देवप्सरस्तमम् | हव्या जुह्वान आसनि | ॥ 1 ॥ |
| अथा ते अङ्गिरस्तमाग्रे वेधस्तम प्रियम् | वोचेम ब्रह्म सानसि | ॥ 2 ॥ |
| कस्ते जामिर्जनानामग्रे को दाश्वध्वरः | को ह कस्मिन्नसि श्रितः | ॥ 3 ॥ |
| त्वं जामिर्जनानामग्रे मित्रो असि प्रियः | सखा सखिभ्यु ईड्यः | ॥ 4 ॥ |
| यजा नो मित्रावरुणा यजा देवां ऋतं बृहत् | अग्रे यक्षि स्वं दमम् | ॥ 5 ॥ |

(5) **76** (म.1, अनु.13)

| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अग्निः |
|---|------------------|--------------|
| का तु उपेतिर्मनसो वराय भुवदग्रे शंतमा का मनीषा | | |
| को वा यज्ञैः परि दक्षं त आप् केन वा ते मनसा दाशेम | ॥ 1 ॥ | |
| एह्यग्र इह होता नि षीदादब्धः सु पुरएता भवा नः | | |
| अवतां त्वा रोदसी विश्वमिन्वे यजा महे सौमनसाय देवान् | ॥ 2 ॥ | |
| प्र सु विश्वान्नक्षसो धक्ष्यग्रे भवा यज्ञानामभिशस्तिपावा | | |
| अथा वह सोमपतिं हरिभ्यामातिथ्यमस्मै चकृमा सुदाव्रं | ॥ 3 ॥ | |
| प्रजावता वचसा वहिरासा च हुवे नि च सत्सीह देवैः | | |
| वेषि होत्रमुत पोत्रं यजत्र बोधि प्रयन्तर्जनितर्वसूनाम् | ॥ 4 ॥ | |
| यथा विप्रस्यु मनुषो हविर्भिर्देवां अयजः क्विर्भिः क्विः सन् | | |
| एवा होतः सत्यतरु त्वमद्याग्रे मन्द्रया जुहा यजस्व | ॥ 5 ॥ | |

(5)

77

(म.1, अनु.13)

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अग्निः

| | | |
|---|---|--|
| कथा दाशेमाग्रये कास्मै देवजुष्टोच्यते भूमिने गीः | | |
| यो मर्त्येष्वमृतं ऋतावा होता यजिष्ठ इत्कृणोति देवान् | 1 | |
| यो अध्वरेषु शंतम ऋतावा होता तमू नमोभिरा कृणुध्वम् | | |
| अग्रियद्वेर्मतीय देवान्त्स चा बोधाति मनसा यजाति | 2 | |
| स हि क्रतुः स मर्युः स साधुर्मित्रो न भूदद्भुतस्य रथीः | | |
| तं मेधेषु प्रथमं देव्यन्तीर्विशु उप ब्रुवते दुस्ममारीः | 3 | |
| स नो नृणां नृतमो रिशादा अग्निगिरोऽवसा वेतु धीतिम् | | |
| तना च ये मघवानः शविष्ठा वाजप्रसूता इषयन्त मन्म | 4 | |
| एवाग्निर्गोतमेभिर्ऋतावा विप्रैर्भिरस्तोष्ट जातवेदाः | | |
| स एषु द्युम्रं पीपयत्स वाजं स पुष्टिं याति जोषमा चिकित्वान् | 5 | |

(5)

78

(म.1, अनु.13)

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः गायत्री

देवता अग्निः

| | | |
|--|----------------------|---|
| अभि त्वा गोतमा गिरा जातवेदो विचर्षणे | द्युमैरभि प्र णोनुमः | 1 |
| तमु त्वा गोतमो गिरा रायस्कामो दुवस्यति | द्युमैरभि प्र णोनुमः | 2 |
| तमु त्वा वाजसातममङ्गिरस्वद्धवामहे | द्युमैरभि प्र णोनुमः | 3 |
| तमु त्वा वृत्रहन्तमं यो दस्यूरवधूनुषे | द्युमैरभि प्र णोनुमः | 4 |
| अवौचाम् रहूगणा अग्रये मधुमद्वचः | द्युमैरभि प्र णोनुमः | 5 |

(12)

79

(म.1, अनु.13)

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः त्रिष्टुप् 1-3, उष्णिक् 4-6, गायत्री 7-12

देवता वैद्युतः अग्निः शुद्धाग्निः वा 1-3, अग्निः 4-12

| | | |
|--|---|--|
| हिरण्यकेशो रजसो विसारेऽहिर्धुनिर्वातइव धर्जीमान् | | |
| शुचिभ्राजा उषसो नवेदा यशस्वतीरपस्युवो न सत्याः | 1 | |
| आ ते सुपर्णा अमिनन्तु एवैः कृष्णो नोनाव वृषभो यदीदम् | | |
| शिवाभिर्न स्मर्यमानाभिरागात्पतन्ति मिहः स्तनयन्त्यभ्रा | 2 | |
| यदीमृतस्य पर्यसा पियानो नयन्नृतस्य पथिभी रजिष्ठैः | | |
| अर्यमा मित्रो वरुणः परिज्मा त्वचं पृञ्चन्त्युपरस्य योनौ | 3 | |
| अग्रे वाजस्य गोमत् ईशानः सहसो यहो। अस्मे धेहि जातवेदो महि श्रवः | 4 | |
| स इधानो वसुष्कविरगिरीलेन्यो गिरा। रेवदुस्मभ्यं पुर्वणीक दीदिहि | 5 | |
| क्षपो राजनुत त्मनाग्रे वस्तोरुतोषसः। स तिग्मजम्भ रक्षसो दह प्रति | 6 | |
| अवा नो अग्र ऊतिभिर्गायत्रस्य प्रभर्मणि। विश्वासु धीषु वन्द्य | 7 | |
| आ नो अग्रे रयिं भर सत्रासाहं वरेण्यम्। विश्वासु पृत्सु दुष्टरम् | 8 | |

| | |
|--|--------|
| आ नो अग्रे सुचेतुना रयिं विश्वायुपोषसम् । माडीकं धेहि जीवसे | ॥ 9 ॥ |
| प्र पूतास्तिग्मशोचिषे वाचो गोतमाग्रये । भरस्व सुम्रयुगिरः | ॥ 10 ॥ |
| यो नो अग्रेऽभिदासत्यन्ति दूरे पदीष्ट सः । अस्माकमिद्वधे भव | ॥ 11 ॥ |
| सहस्राक्षो विचर्षणिरग्री रक्षांसि सेधति । होता गृणीत उक्थ्यः | ॥ 12 ॥ |

(16)

80

(म.1, अनु.13)

| | | |
|--------------------|----------------|---------------|
| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः पङ्क्तिः | देवता इन्द्रः |
|--------------------|----------------|---------------|

| | |
|---|--------|
| इत्था हि सोम इन्मदे ब्रह्मा चकार वर्धनम् | |
| शविष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निः शशा अहिमर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 1 ॥ |
| स त्वामददृषा मदः सोमः श्येनाभृतः सुतः | |
| येना वृत्रं निरुद्धो जघन्थ वज्रिन्नोजसार्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 2 ॥ |
| प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नि यंसते | |
| इन्द्रं नृम्णं हि ते शवो हनो वृत्रं जया अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 3 ॥ |
| निरिन्द्र भूम्या अधि वृत्रं जघन्थ निर्दिवः | |
| सृजा मरुत्वतीरव जीवधन्या इमा अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 4 ॥ |
| इन्द्रो वृत्रस्य दोधतः सानुं वज्रेण हीळितः | |
| अभिक्रम्याव जिघ्रतेऽपः समीय चोदयन्नर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 5 ॥ |
| अधि सानो नि जिघ्रते वज्रेण शतपर्वणा | |
| मन्दान इन्द्रो अन्धसः सखिभ्यो गातुमिच्छत्यर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 6 ॥ |
| इन्द्र तुभ्यमिदद्विवोऽनुत्तं वज्रिन्वीर्यम् । | |
| यद्ध त्यं मायिनं मृगं तमु त्वं माययावधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 7 ॥ |
| वि ते वज्रासो अस्थिरन्नवृतिं नाव्याः अनु | |
| महत्त इन्द्र वीर्यं बाह्वोस्ते बलं हितमर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 8 ॥ |
| सहस्रं साकमर्चत परिं षोभत विशतिः । | |
| शतैनुमन्वनोनवुरिन्द्राय ब्रह्मोद्यतमर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 9 ॥ |
| इन्द्रो वृत्रस्य तविषीं निरहन्त्सहसा सहः | |
| महत्तदस्य पौंस्यं वृत्रं जघन्वाँ असृजदर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 10 ॥ |
| इमे चित्तव मन्यवे वेपेते भियसा मही | |
| यदिन्द्र वज्रिन्नोजसा वृत्रं मरुत्वाँ अवधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 11 ॥ |
| न वेपसा न तन्यतेन्द्रं वृत्रो वि बीभयत् | |
| अभ्येनुं वज्र आयसः सहस्रभृष्टिरायतार्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 12 ॥ |
| यद्धृत्रं तव चाशनिं वज्रेण समयोधयः | |
| अहिमिन्द्र जिघांसतो दिवि ते बद्धे शवोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् | ॥ 13 ॥ |

अभिष्टने तै अद्रिवो यत्स्था जगच्च रेजते |
त्वष्टा चित्तव मन्यव इन्द्र वेविज्यते भियार्चन्ननु स्वराज्यम् || 14 ||
नहि नु यादधीमसीन्द्र को वीर्या परः |
तस्मिन्मृगामुत क्रतुं देवा ओजांसि सं दधुरर्चन्ननु स्वराज्यम् || 15 ||
यामथर्वा मनुषिता दध्यङ् धियमलत |
तस्मिन्ब्रह्माणि पूर्वथेन्द्र उक्था समग्मृतार्चन्ननु स्वराज्यम् || 16 ||

| इति प्रथमाष्टके पञ्चमोऽध्यायः समाप्तः |

(षष्ठोऽध्यायः ॥ वर्गाः 1-32)

(9)

81

(म.1, अनु.13)

| | | |
|--------------------|----------------|---------------|
| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः पङ्क्तिः | देवता इन्द्रः |
|--------------------|----------------|---------------|

| | |
|--|-------|
| इन्द्रो मदाय वावृधे शर्वसे वृत्रहा नृभिः | |
| तमिन्महत्स्वाजिषूतेमर्भे हवामहे स वाजेषु प्र नोऽविषत् | ॥ 1 ॥ |
| असि हि वीरु सेन्योऽसि भूरि परादुदिः | |
| असि द्रुभ्रस्य चिद्रुधो यजमानाय शिक्षसि सुन्वते भूरि ते वसु | ॥ 2 ॥ |
| यदुदीरत आजयो धृष्णवे धीयते धना | |
| युक्त्वा मद्दुच्युता हरी कं हनुः कं वसौ दधोऽस्मां इन्द्र वसौ दधः | ॥ 3 ॥ |
| क्रत्वा म्हां अनुष्णधं भीम आ वावृधे शर्वः | |
| श्रिय ऋष्व उपाकयोनि शिप्री हरिवान्दधे हस्तयोर्वज्रमायसम् | ॥ 4 ॥ |
| आ पप्रौ पार्थिवं रजो बद्धधे रोचना दिवि | |
| न त्वावां इन्द्र कश्चन न जातो न जनिष्यतेऽति विश्वं ववक्षिथ | ॥ 5 ॥ |
| यो अर्यो मर्तभोजनं पराददाति दाशुषे | |
| इन्द्रो अस्मभ्यं शिक्षतु वि भजा भूरि ते वसु भक्षीय तव राधसः | ॥ 6 ॥ |
| मदैमदे हि नो ददिर्युथा गवामृजुक्रतुः । | |
| सं गृभाय पुरू शतोभयाहस्त्या वसु शिशीहि राय आ भर | ॥ 7 ॥ |
| मादयस्व सुते सचा शर्वसे शूर राधसे | |
| विद्या हि त्वा पुरूवसुमुप कामान्ससृज्महेऽथा नोऽविता भव | ॥ 8 ॥ |
| एते तं इन्द्र जन्तवो विश्वं पुष्यन्ति वार्यम् | |
| अन्तर्हि ख्यो जनानामर्यो वेदो अदाशुषां तेषां नो वेद आ भर | ॥ 9 ॥ |

(6)

82

(म.1, अनु.13)

| | | |
|--------------------|----------------------------|---------------|
| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः पङ्क्तिः 1-5, जगती 6 | देवता इन्द्रः |
|--------------------|----------------------------|---------------|

| | |
|--|-------|
| उपो षु शृणुही गिरो मघवन्मातथाइव। यदा नः सूनृतावतः कर् आदर्थयास् इद्योजा न्विन्द्र ते हरीं ॥1॥ | |
| अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत।अस्तौषत् स्वभानवो विप्रा नविष्टया मृती योजा न्विन्द्र ते हरीं ॥2 ॥ | |
| सुसंहशं त्वा वयं मघवन्वन्दिषीमहि।प्र नूनं पूर्णवन्धुरः स्तुतो याहि वशां अनु योजा न्विन्द्र ते हरीं ॥3॥ | |
| स घा तं वृषणं रथमधि तिष्ठाति गोविदम् | |
| यः पात्रं हारियोजनं पूर्णमिन्द्र चिकेतति योजा न्विन्द्र ते हरीं | ॥ 4 ॥ |
| युक्तस्तै अस्तु दक्षिण उत सव्यः शतक्रतो | |
| तेन जायामुप प्रियां मन्दानो याह्यन्धसो योजा न्विन्द्र ते हरीं | ॥ 5 ॥ |
| युनज्मि ते ब्रह्मणा केशिना हरी उप प्र याहि दधिषे गर्भस्त्योः | |
| उत्वा सुतासो रभसा अमन्दिषुः पूषणवान्वज्रिन्त्समु पल्यामदः | ॥ 6 ॥ |

(6)

83

(म.1, अनु.13)

| | | |
|--------------------|------------|---------------|
| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः जगती | देवता इन्द्रः |
|--------------------|------------|---------------|

| | |
|--|-------|
| अश्वावति प्रथमो गोषु गच्छति सुप्रावीरिन्द्र मर्त्यस्तवोतिभिः | |
| तमित्पृणक्षि वसुना भवीयसा सिन्धुमापो यथाभितो विचेतसः | ॥ 1 ॥ |

| | |
|---|---|
| आपो न देवीरुपं यन्ति होत्रियमवः पश्यन्ति विततं यथा रजः | |
| प्राचैर्देवासः प्र णयन्ति देव्युं ब्रह्मप्रियं जोषयन्ते व्राड्व | 2 |
| अधि द्वयोरदधा उक्थ्यं वचो यत्सुचा मिथुना या संपर्यतः | |
| असंयत्तो व्रते तै क्षेति पुष्यति भद्रा शक्तिर्यजमानाय सुन्वते | 3 |
| आदङ्गिराः प्रथमं दधिरे वयं इन्द्राग्रयः शम्या ये सुकृत्या | |
| सर्वं पुणेः समविन्दन्त भोजनमश्वावन्तं गोमन्तमा पशुं नरः | 4 |
| यज्ञैरथर्वा प्रथमः पथस्तते ततः सूर्यो व्रतपा वेन आर्जनि | |
| आ गा आजदुशना काव्यः सचा यमस्य जातममृतं यजामहे | 5 |
| बर्हिर्वा यत्स्वपत्याय वृज्यतेऽको वा श्लोकमाघोषते दिवि | |
| ग्रावा यत्र वदति कारुरुक्थ्यंस्तस्येदिन्द्रो अभिपित्वेषु रण्यति | 6 |

(20)

84

(म.1, अनु.13)

| | |
|--------------------|---|
| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः अनुष्टुप् 1-6, उष्णिक 7-9, पङ्क्तिः 10-12, गायत्री 13-15, |
| | त्रिष्टुप् 16-18, बृहती 19, सतोबृहती 20 |
| | देवता इन्द्रः |

| | |
|---|----|
| असावि सोमं इन्द्र ते शविष्ठ धृष्णवा गंहि । आ त्वां पृणक्त्विन्द्रियं रजः सूर्यो न रुश्मिभिः | 1 |
| इन्द्रमिद्धरीं वहतोऽप्रतिधृष्टशवसम् । षीणां च स्तुतीरुपं यज्ञं च मानुषाणाम् | 2 |
| आ तिष्ठ वृत्रहन्त्रथं युक्ता ते ब्रह्मणा हरीं । अर्वाचीनं सु ते मनो ग्रावा कृणोतु वृष्टनां | 3 |
| इममिन्द्र सुतं पिब ज्येष्ठममर्त्यं मदम् । शुक्रस्य त्वाभ्यक्षरन्धारा ऋतस्य सार्दने | 4 |
| इन्द्राय नूनमर्चतोक्थानि च ब्रवीतन । सुता अमत्सुरिन्दवो ज्येष्ठं नमस्यता सहः | 5 |
| नकिष्ट्वद्वितीतरो हरी यदिन्द्र यच्छसे । नकिष्ट्वानु मज्मना नकिः स्वश्व आनशे | 6 |
| य एक इद्विदयते वसु मर्तीय दाशुषे । ईशानो अप्रतिष्कृत इन्द्रो अङ्ग | 7 |
| कदा मर्तमराधसं पदा क्षुम्पामिव स्फुरत् । कदा नः शुश्रवद्विर इन्द्रो अङ्ग | 8 |
| यश्चिद्धि त्वा बहुभ्य आ सुतावाँ आविवासति | |
| उग्रं तर्पत्यते शव इन्द्रो अङ्ग | 9 |
| स्वादोरित्था विषूवतो मध्वः पिबन्ति गौर्यैः | |
| या इन्द्रेण स्यावरीर्वृष्णा मदन्ति शोभसे वस्वीरनु स्वराज्यम् | 10 |
| ता अस्य पशनायुवः सोमं श्रीणन्ति पृश्रयः | |
| प्रिया इन्द्रस्य धेनवो वज्रं हिन्वन्ति सायकं वस्वीरनु स्वराज्यम् | 11 |
| ता अस्य नमसा सहः सपर्यन्ति प्रचैतसः | |
| व्रतान्यस्य सश्चिरे पुरुणि पूर्वचित्तये वस्वीरनु स्वराज्यम् | 12 |
| इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कृतः । जघान नवतीर्नव | 13 |
| इच्छन्नश्वस्य यच्छिरः पर्वतेष्वपश्रितम् । तद्विदच्छर्यणावति | 14 |
| अत्राह गोरमन्वत् नाम त्वष्टुरपीच्यम् । इत्था चन्द्रमसो गृहे | 15 |
| को अद्य युङ्क्ते धुरि गा ऋतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्हणायून् | |
| आसन्निषूहृत्स्वसो मयोभून्य एषां भृत्यामृणधत्स जीवात् | 16 |

| | |
|---|--------|
| क ईषते तुज्यते को बिभायु को मंसते सन्तमिन्द्रं को अन्ति | |
| कस्तोकायु क इभायोत रायेऽधि ब्रवत्तन्वेरे को जनाय | ॥ 17 ॥ |
| को अग्निमीष्टे हविषा घृतेन सुचा यजाता ऋतुभिर्ध्रुवेभिः | |
| कस्मै देवा आ वहानाशु होम् को मंसते वीतिहोत्रः सुदेवः | ॥ 18 ॥ |
| त्वमङ्ग प्र शंसिषो देवः शविष्ट मर्त्यम् । | |
| न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्दितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः | ॥ 19 ॥ |
| मा ते राधांसि मा त ऊतयो वसोऽस्मान्कदा चना दभन् | |
| विश्वा च न उपमिमीहि मानुष वसूनि चर्षणिभ्य आ | ॥ 20 ॥ |

(12)

85

(म.1, अनु.14)

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः जगती 1-4,6-11, त्रिष्टुप् 5,12

देवता मरुतः

| | |
|---|--------|
| प्र ये शुम्भन्ते जनयो न सप्तयो यामनुद्रस्य सूनवः सुदंससः | |
| रोदसी हि मरुतश्चक्रिरे वृधे मदन्ति वीरा विदथेषु घृष्वयः | ॥ 1 ॥ |
| त उक्षितासौ महिमानमाशत दिवि रुद्रासो अधि चक्रिरे सदः | |
| अर्चन्तो अर्कं जनयन्त इन्द्रियमधि श्रियो दधिरे पृश्निमातरः | ॥ 2 ॥ |
| गोमातरो यच्छुभयन्ते अञ्जिभिस्तनूषु शुभ्रा दधिरे विरुक्मतः | |
| बाधन्ते विश्वमभिमातिनमप वत्मान्येषामनु रीयते घृतम् | ॥ 3 ॥ |
| वि ये भ्राजन्ते सुमखास ऋष्टिभिः प्रच्यावयन्तो अच्युता चिदोर्जसा | |
| मनोजुवो यन्मरुतो रथेष्व्वा वृषत्रतासुः पृषतीरयुग्ध्वम् | ॥ 4 ॥ |
| प्र यद्रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं वाजे अर्द्रिं मरुतो रंहयन्तः | |
| उतारुषस्य वि ष्यन्ति धाराश्चमेवोदभिव्युन्दन्ति भूम | ॥ 5 ॥ |
| आ वा वहन्तु सप्तयो रघुष्यदो रघुपत्वानुः प्र जिगात बाहुभिः | |
| सीदता बर्हिरुरु वः सदस्कृतं मादयध्वं मरुतो मध्वो अन्धसः | ॥ 6 ॥ |
| तेऽवर्धन्त स्वतवसो महित्वना नाकं तस्थुरु चक्रिरे सदः | |
| विष्णुर्यद्भावद्वृषणं मदच्युतं वयो न सीदन्नधि बर्हिषि प्रिये | ॥ 7 ॥ |
| शूराइवेद्युधयो न जग्मयः श्रवस्यवो न पृतनासु येतिरे | |
| भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यो राजानइव त्वेषसंष्टशो नरः | ॥ 8 ॥ |
| त्वष्टा यद्वज्रं सुकृतं हिरण्ययं सहस्रभृष्टिं स्वपा अवर्तयत् | |
| धत्त इन्द्रो नर्यपांसि कर्तवेऽहन्वृत्रं निरपामौब्जदर्णवम् | ॥ 9 ॥ |
| ऊर्ध्वं नुनुरेऽवृतं त ओर्जसा दादृहाणं चिद्विभिदुर्वि पर्वतम् | |
| धर्मन्तो वाणं मरुतः सुदानवो मदे सोमस्य रण्यानि चक्रिरे | ॥ 10 ॥ |
| जिह्वं नुनुरेऽवृतं तथा दिशासिञ्चुत्सं गोतमाय तृष्णजे | |
| आ गच्छन्तीमवसा चित्रभानवः कामं विप्रस्य तर्पयन्त धामभिः | ॥ 11 ॥ |
| या वः शर्म शशमानाय सन्ति त्रिधातूनि दाशुषे यच्छताधि | |
| अस्मभ्यं तानि मरुतो वि यन्त रयिं नो धत्त वृषणः सुवीरम् | ॥ 12 ॥ |

(10)

86

(म.1, अनु.14)

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः गायत्री

देवता मरुतः

| | | |
|---|------------------------|----|
| मरुतो यस्य हि क्षये पाथा दिवो विमहसः | स सुगोपातमो जनः | 1 |
| यज्ञैर्वा यज्ञवाहसो विप्रस्य वा मतीनाम् | मरुतः शृणुता हवम् | 2 |
| उत वा यस्य वाजिनोऽनु विप्रमतक्षत | स गन्ता गोमति वृजे | 3 |
| अस्य वीरस्य बर्हिषि सुतः सोमो दिविष्टिषु | उक्थं मदश्च शस्यते | 4 |
| अस्य श्रौषन्त्वा भुवो विश्वा यश्चर्षणीरभि | सूरं चित्ससुषीरिषः | 5 |
| पूर्वाभिर्हि ददाशिम शरद्धर्मरुतो व्यम् | अवोभिश्चर्षणीनाम् | 6 |
| सुभगः स प्रयज्यवो मरुतो अस्तु मर्त्यः | यस्य प्रयांसि पर्वथ | 7 |
| शशमानस्य वा नरः स्वेदस्य सत्यशवसः | विदा कामस्य वेनतः | 8 |
| यूयं तत्सत्यशवस आविष्कर्त महित्वना | विध्यता विद्युता रक्षः | 9 |
| गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम् | ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि | 10 |

(6)

87

(म.1, अनु.14)

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः जगती

देवता मरुतः

| | | |
|---|---|--|
| प्रत्वक्षसः प्रतवसो विरुष्णिनोऽनानता अविथुरा ऋजीषिणः | | |
| जुष्टमासो नृत्मासो अञ्जिभिव्यान्त्रे के चिदुस्त्राड्व स्तृभिः | 1 | |
| उपह्वरेषु यदचिध्वं ययि वयइव मरुतः केन चित्पथा | | |
| श्रोतन्ति कोशा उप वो रथेष्व्वा घृतमुक्षता मधुवर्णमर्चते | 2 | |
| प्रेषामज्मेषु विथुरेव रेजते भूमिर्यामेषु यद्ध युञ्जते शुभे | | |
| ते क्रीळयो धुनयो भ्राजदृष्टयः स्वयं महित्वं पनयन्त धृतयः | 3 | |
| स हि स्वसृतृषदश्चो युवा गृणोऽया ईशानस्तविषीभिरावृतः | | |
| असि सत्य ऋणयावानेद्योऽस्या धियः प्राविताथा वर्षा गृणः | 4 | |
| पितुः प्रत्स्य जन्मना वदामसि सोमस्य जिह्वा प्र जिगाति चक्षसा | | |
| यदीमिन्द्रं शम्यृक्काण आशतादिनामानि यज्ञियानि दधिरे | 5 | |
| श्रियसे कं भानुभिः सं मिमिक्षिरे ते रश्मिभिस्त ऋक्भिः सुखादयः | | |
| ते वाशीमन्त इष्मिणो अभीरवो विद्रे प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः | 6 | |

(6)

88

(म.1, अनु.14)

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः प्रस्तारपङ्क्तिः 1,6, त्रिष्टुप् 2-4, विराडूपा 5

देवता मरुतः

| | | |
|---|---|--|
| आ विद्युन्मद्धर्मरुतः स्वके रथेभिर्यात ऋष्टिमद्धिरश्वपर्णेः | | |
| आ वर्षिष्ठया न इषा वयो न पतता सुमायाः | 1 | |
| तेऽरुणोभिवरमा पिशङ्गैः शुभे कं यान्ति रथतूर्भिरश्वैः | | |
| रुक्मो न चित्रः स्वधितीवान्पुव्या रथस्य जङ्घनन्त भूम | 2 | |
| श्रिये कं वो अधि तनूषु वाशीमैधा वना न कृणवन्त ऊर्ध्वा | | |
| युष्मभ्यं कं मरुतः सुजातास्तुविद्युन्नासौ धनयन्ते अद्रिम् | 3 | |

अहानि गृध्राः पर्या व आगुरिमां धियं वार्कार्यां च देवीम् |
 ब्रह्म कृण्वन्तो गोतमासो अर्कैरूर्ध्वं नुनुद्र उत्सृधि पिबध्ये || 4 ||
 एतत्त्यन्न योजनमचेति सूस्वर्ह यन्मरुतो गोतमो वः |
 पश्यन्हिरण्यचक्रानयोदंष्ट्रान्विधावतो वराहून् || 5 ||
 एषा स्या वो मरुतोऽनुभर्त्री प्रति षोभति वाघतो न वाणी |
 अस्तोभयद्वथासामनु स्वधां गभस्त्योः || 6 ||

(10)

89

(म.1, अनु.14)

ऋषिः गोतमः राहूगणः छन्दः जगती 1-5,7, विराट्स्थाना 6, त्रिष्टुप् 8-10 देवता विश्वे देवाः 1-7,
 देवाः 8-9, अदितिः 10

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः |
 देवा नो यथा सदमिद्वधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे || 1 ||
 देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानां रातिरभि नो नि वर्तताम् |
 देवानां सख्यमुप सेदिमा वयं देवा न आयुः प्र तिरन्तु जीवसे || 2 ||
 तान् पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम् |
 अर्यमणं वरुणं सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् || 3 ||
 तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः |
 तद् ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्यया युवम् || 4 ||
 तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम् |
 पूषा नो यथा वेदसामसद्वधे रक्षिता प्रायुरदब्धः स्वस्तये || 5 ||
 स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः |
 स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु || 6 ||
 पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभ्यावानो विदथेषु जग्मयः |
 अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसा गमन्निह || 7 ||
 भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः |
 स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः || 8 ||
 शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् |
 पुत्रासो यत्र पित्रो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तौः || 9 ||
 अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः |
 विश्वे देवा अदितिः पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् || 10 ||

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः गायत्री 1-8, अनुष्टुप् 9

देवता विश्वे देवाः

| | | |
|--|-------------------------|---|
| ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान् | अर्यमा देवैः सजोषाः | 1 |
| ते हि वस्वो वसवानास्ते अप्रमूरा महोभिः | व्रता रक्षन्ते विश्वाहा | 2 |
| ते अस्मभ्यं शर्मं यंसन्नमृता मर्त्येभ्यः | बाधमाना अप द्विषः | 3 |
| वि नः पथः सुविताय चियन्त्विन्द्रो मरुतः | पूषा भगो वन्द्यासः | 4 |
| उत नो धियो गोअग्राः पूषन्विष्णवेवयावः | कर्ता नः स्वस्तिमतः | 5 |
| मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः | माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः | 6 |
| मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः | मधु द्यौरस्तु नः पिता | 7 |
| मधुमात्रो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः | माध्वीर्गावो भवन्तु नः | 8 |
| शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वयमा | | |
| शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुक्रमः | | 9 |

ऋषिः गोतमः राहूगणः

छन्दः त्रिष्टुप् 1-4, 18-23, गायत्री 5-16, उष्णिक 17

देवता सोमः

| | | |
|---|------------------------|----|
| त्वं सोम प्र चिकितो मनीषा त्वं रजिष्ठमनु नेषि पन्थाम् | | |
| तव प्रणीती पितरो न इन्दो देवेषु रत्नमभजन्त धीराः | | 1 |
| त्वं सोम क्रतुभिः सुक्रतुर्भुस्त्वं दक्षैः सुदक्षो विश्ववेदाः | | |
| त्वं वृषा वृषत्वेभिर्महित्वा द्युम्नेभिर्द्युम्नभवो नृचक्षाः | | 2 |
| राज्ञो नु ते वरुणस्य व्रतानि बृहद्भीरं तव सोम धाम | | |
| शुचिष्टमसि प्रियो न मित्रो दक्षाय्यो अर्यमेवासि सोम | | 3 |
| या ते धामानि दिवि या पृथिव्यां या पर्वतेष्वोषधीष्वप्सु | | |
| तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहैः नराजन्तसोम प्रति हव्या गृभाय | | 4 |
| त्वं सोमासि सत्पतिस्त्वं राजोत वृत्रहा | त्वं भद्रो असि क्रतुः | 5 |
| त्वं च सोम नो वशो जीवातुं न मरामहे | प्रियस्तोत्रो वनस्पतिः | 6 |
| त्वं सोम महे भगं त्वं यून ऋतायते | दक्षं दधासि जीवसे | 7 |
| त्वं नः सोम विश्वतो रक्षा राजन्नघायतः | न रिष्येत्त्वावतः सखा | 8 |
| सोम यास्तै मयोभुव ऊतयः सन्ति दाशुषे | ताभिर्नोऽविता भव | 9 |
| इमं यज्ञमिदं वचो जुजुषाण उपागहि | सोम त्वं नो वृधे भव | 10 |
| सोम गीर्भिष्टा वयं वर्धयामो वचोविदः | सुमृळीको न आ विश | 11 |
| गयस्फानो अमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्धनः | सुमित्रः सोम नो भव | 12 |
| सोम रारन्धि नो हृदि गावो न यवसेष्वा | मर्य इव स्व ओक्ये | 13 |
| यः सोम सख्ये तव रारणद्वेव मर्त्यैः | तं दक्षः सचते कविः | 14 |

| | | |
|--|------------------------------|--------|
| उरुष्या णो अभिशस्तेः सोम नि पाह्यंहसः | सखा सुशेव एधि नः | ॥ 15 ॥ |
| आ प्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्यम् | भवा वाजस्य संगुथे | ॥ 16 ॥ |
| आ प्यायस्व मदिन्तम् सोम विश्वेभिरंशुभिः | भवा नः सुश्रवस्तम्ः सखा वृधे | ॥ 17 ॥ |
| सं ते पर्यासि समु यन्तु वाजाः सं वृष्यान्यभिमातिषाहः | | |
| आप्यायमानो अमृताय सोम दिवि श्रवांस्युत्तमानि धिष्व | | ॥ 18 ॥ |
| या ते धामानि हविषा यजन्ति ता ते विश्वा परिभूरस्तु यज्ञम् | | |
| गयस्फानः प्रतरणः सुवीरोऽवीरहा प्र चरा सोम दुर्यान् | | ॥ 19 ॥ |
| सोमो धेनुं सोमो अर्वन्तमाशुं सोमो वीरं कर्मण्यं ददाति | | |
| सादन्यं विदथ्यं सभेयं पितृश्रवणं यो ददाशदस्मै | | ॥ 20 ॥ |
| अषाहं युत्सु पृतनासु परि स्वर्षामप्सां वृजनस्य गोपाम् | | |
| भुरेषुजां सुक्षिति सुश्रवसं जयन्तं त्वामनु मदेम सोम | | ॥ 21 ॥ |
| त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वम्पो अजनयस्त्वं गाः | | |
| त्वमा ततन्थोर्वशन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ | | ॥ 22 ॥ |
| देवेन नो मनसा देव सोम रायो भागं सहसावन्नभि युध्य | | |
| मा त्वा तनदीशिषे वीर्यस्योभयैभ्युः प्र चिकित्सा गविष्टौ | | ॥ 23 ॥ |

(18)

92

(म.1, अनु.14)

| |
|--|
| ऋषिः गोतमः राहूगणः छन्दः जगती 1-4, त्रिष्टुप् 5-12, उष्णिक् 13-18 देवता उषाः 1-15, अश्विनौ 16-18 |
|--|

| | | |
|--|--|-------|
| एता उ त्या उषसः केतुमक्रतु पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते | | |
| निष्कृण्वाना आयुधानीव धृष्णवः प्रति गावोऽरुषीर्यन्ति मातरः | | ॥ 1 ॥ |
| उदपत्नन्नरुणा भानवो वृथा स्वायुजो अरुषीर्गा अयुक्षत | | |
| अक्रन्नुषासो वयुनानि पूर्वथा रुशन्तं भानुमरुषीरशिश्रयुः | | ॥ 2 ॥ |
| अर्चन्ति नारीरपसो न विष्टिभिः समानेन योजनेना परावतः | | |
| इषुं वहन्तीः सुकृते सुदानवे विश्वेदह यजमानाय सुन्वते | | ॥ 3 ॥ |
| अधि पेशांसि वपते नृतूरिवापोर्णुते वक्ष उखेव बर्जहम् | | |
| ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युषा आवर्तमः | | ॥ 4 ॥ |
| प्रत्यर्ची रुशदस्या अदर्शि वि तिष्ठते बाधते कृष्णमभ्वम् | | |
| स्वरुं न पेशो विदथेष्वञ्जञ्जित्रं दिवो दुहिता भानुमश्रेत् | | ॥ 5 ॥ |
| अतारिष्म तमसस्पारमस्योषा उच्छन्ती वयुना कृणोति | | |
| श्रिये छन्दो न स्मयते विभाती सुप्रतीका सौमनसायाजीगः | | ॥ 6 ॥ |
| भास्वती नेत्री सूनृतानां दिवः स्तवे दुहिता गोतमेभिः | | |
| प्रजावतो नृवतो अश्वबुध्यानुषो गोअग्रं उप मासि वाजान् | | ॥ 7 ॥ |
| उषस्तमश्यां यशसं सुवीरं दासप्रवर्गं रयिमश्वबुध्यम् | | |
| सुदंससा श्रवसा या विभासि वाजप्रसूता सुभगे बृहन्तम् | | ॥ 8 ॥ |
| विश्वानि देवी भुवनाभिचक्ष्यां प्रतीची चक्षुरुर्विया वि भाति | | |

| | |
|--|-----------------------------|
| विश्वं जीवं चरसें बोधयन्ती विश्वस्य वाचमविदन्मनायोः | ॥ 9 ॥ |
| पुनःपुनर्जायमाना पुराणी संमानं वर्णमभि शुम्भमाना | |
| श्वघ्नीव कृत्तुर्विजं आमिनाना मर्तस्य देवी जरयन्त्यायुः | ॥ 10 ॥ |
| व्यूर्ण्वती दिवो अन्ताँ अबोध्यप् स्वसारं सनुतर्युयोति | |
| प्रमिन्ती मनुष्या युगानि योषां जारस्य चक्षसा वि भाति | ॥ 11 ॥ |
| पशून् चित्रा सुभगा प्रथाना सिन्धुर्न क्षोद उर्विया व्यश्नैत् | |
| अमिनती दैव्यानि व्रतानि सूर्यस्य चेति रश्मिभिर्दृशाना | ॥ 12 ॥ |
| उष्टस्त्रिचित्रमा भरास्मभ्यं वाजिनीवति | येनं तोकं च तनयं च धामहे |
| उषो अद्येह गोमृत्यश्वावति विभावरि | रेवदस्मे व्युच्छ सूनृतावति |
| युक्ष्वा हि वाजिनीवृत्यश्वाँ अद्यारुणाँ उषः | अथा नो विश्वा सौभगान्या वह |
| अश्विना वर्तिरस्मदा गोमदस्त्रा हिरण्यवत् | अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतम् |
| यावित्था श्लोकमा दिवो ज्योतिर्जनाय चक्रथुः | आ न ऊर्जं वहतमश्विना युवम् |
| एह देवा मयोभुवा दस्त्रा हिरण्यवर्तनी | उष्टर्बुधो वहन्तु सोमपीतये |

(12)

93

(म.1, अनु.14)

| | |
|--------------------|--|
| ऋषिः गोतमः राहूगणः | छन्दः अनुष्टुप् 1-3, त्रिष्टुप् 4-7,12, जगती त्रिष्टुप् वा 8, गायत्री 9-11 |
| देवता अग्नीषोमौ | |

| | |
|--|--------|
| अग्नीषोमाविमं सु मे शृणुतं वृषणा हवम् । प्रति सूक्तानि हर्यतं भवतं दाशुषे मयः | ॥ 1 ॥ |
| अग्नीषोमा यो अद्य वामिदं वचः सपर्यति । तस्मै धत्तं सुवीर्यं गवां पोषं स्वश्व्यम् | ॥ 2 ॥ |
| अग्नीषोमा य आहुतिं यो वां दाशाद्धविष्कृतिम् । स प्रजया सुवीर्यं विश्वमायुर्व्यश्रवत् | ॥ 3 ॥ |
| अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वां यदमुष्णीतमवसं पुणि गाः | |
| अवातिरतं बृसयस्य शेषोऽविन्दतं ज्योतिरेकं भाहुभ्यः | ॥ 4 ॥ |
| युवमेतानि दिवि रौचनान्यग्निश्च सोम सक्रतू अधत्तम् | |
| युवं सिन्धूरभिर्शस्तेरवद्यादग्नीषोमावमुञ्चतं गृभीतान् | ॥ 5 ॥ |
| आन्यं दिवो मातरिश्वा जभारामश्रादन्यं परि श्येनो अद्रैः | |
| अग्नीषोमा ब्रह्मणा वावृधानोरुं यज्ञाय चक्रथुरु लोकम् | ॥ 6 ॥ |
| अग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य वीतं हर्यतं वृषणा जुषेथाम् | |
| सुशर्माणा स्ववसा हि भूतमथा धत्तं यजमानाय शं योः | ॥ 7 ॥ |
| यो अग्नीषोमा हविषा सपर्याद्वैवद्रीचा मनसा यो घृतेन | |
| तस्य व्रतं रक्षतं पातमंहसो विशे जनाय महि शर्म यच्छतम् | ॥ 8 ॥ |
| अग्नीषोमा सवेदसा सहृती वनतं गिरः । सं देवत्रा बभूवथुः | ॥ 9 ॥ |
| अग्नीषोमावनेन वां यो वां घृतेन दाशति । तस्मै दीदयतं बृहत् | ॥ 10 ॥ |
| अग्नीषोमाविमानि नो युवं हव्या जुजोषतम् । आ यातमुप नः सचा | ॥ 11 ॥ |

अग्नीषोमा पिपृतमर्वतो न आ प्यायन्तामुस्त्रिया हव्यसूदः |
अस्मे बलानि मघवत्सु धत्तं कृणुतं नो अध्वरं श्रुष्टिमन्तम् || 12 ||

(16)

94

(म.1, अनु.15)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः छन्दः जगती 1-14, त्रिष्टुप् 15-16 देवता अग्निः

इमं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया |
भद्रा हि नः प्रमतिरस्य संसद्यग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 1 ||
यस्मै त्वमायजसे स साधत्यनुवा क्षेति दधते सुवीर्यम् |
स तूताव नैनमश्रोत्यंहतिरग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 2 ||
शकेम त्वा समिधं साधया धियुस्त्वे देवा हविरदन्त्याहुतम् |
त्वमादित्याँ आ वह तान्ह्युश्मस्यग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 3 ||
भरामेधं कृणवामा हवीषि ते चितयन्तः पर्वणापर्वणा वयम् |
जीवातवे प्रतुरं साधया धियोऽग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 4 ||
विशां गोपा अस्य चरन्ति जन्तवो द्विपञ्च यदुत चतुष्पदकुभिः |
चित्रः प्रकेत उषसो महां अस्यग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 5 ||
त्वमध्वर्युरुत होतासि पूर्व्यः प्रशास्ता पोता जनुषा पुरोहितः |
विश्वा विद्वाँ आर्त्विज्या धीर पुष्यस्यग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 6 ||
यो विश्वतः सुप्रतीकः सदृङ्गसि दूरे चित्सन्तुळिदिवाति रोचसे |
रात्र्याश्चिदन्धो अति देव पश्यस्यग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 7 ||
पूर्वो देवा भवतु सुन्वतो रथोऽस्माकं शंसो अभ्यस्तु दूढ्यः |
तदा जानीतोत पुष्यता वचोऽग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 8 ||
वधैर्दुःशंसाँ उप दूढ्यो जहि दूरे वा ये अन्ति वा के चिदत्रिणः |
अथा यज्ञाय गृणते सुगं कृध्यग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 9 ||
यदयुक्था अरुषा रोहिता रथे वार्तजूता वृषभस्यैव ते रवः |
आदिन्वसि वनिनो धूमकेतुनाग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 10 ||
अध स्वनादुत बिभ्युः पत्रिणो द्रप्सा यत्तै यवसादो व्यस्थिरन् |
सुगं तत्तै तावकेभ्यो रथेभ्योऽग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 11 ||
अयं मित्रस्य वरुणस्य धार्यसेऽवयातां मरुतां हेळो अद्भुतः |
मृळा सु नो भूत्वेषां मनः पुनरग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 12 ||
देवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसूनामसि चारुरध्वरे |
शर्मन्त्स्याम् तव सप्रथस्तमेऽग्रै सख्ये मा रिषामा वयं तव || 13 ||
तत्तै भद्रं यत्समिद्धः स्वे दमे सोमाहुतो जरसे मृळ्यत्तमः |

दधासि रत्नं द्रविणं च दाशुषेऽग्रे सुख्ये मा रिषामा वृयं तव ॥ 14 ॥
यस्मै त्वं सुद्रविणो ददाशोऽनागास्त्वमदिते सर्वताता |
यं भद्रेण शर्वसा चोदयासि प्रजावता राधसा ते स्याम ॥ 15 ॥
स त्वमग्रे सौभगत्वस्य विद्वानस्माकमायुः प्र तिरेह देव |
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ 16 ॥

| इति प्रथमाष्टके षष्ठोऽध्यायः समाप्तः ।

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अग्निः औषसः अग्निः वा

| | |
|--|--------|
| द्वे विरूपे चरतः स्वर्थे अन्यान्या वृत्समुप धापयेते | |
| हरिरन्यस्यां भवति स्वधावाञ्छुक्रो अन्यस्यां ददृशे सुवर्चाः | ॥ 1 ॥ |
| दशेमं त्वष्टुर्जनयन्तु गर्भमर्तन्द्रासो युवतयो विभृत्रम् | |
| तिग्मानीकं स्वयंशसं जनेषु विरोचमानं परि षीं नयन्ति | ॥ 2 ॥ |
| त्रीणि जाना परि भूषन्त्यस्य समुद्र एकं दिव्येकमुप्सु | |
| पूर्वामनु प्र दिशं पार्थिवानामृतून्प्रशासद्वि दधावनुष्टु | ॥ 3 ॥ |
| क इमं वो निण्यमा चिकेत वृत्सो मातृर्जनयत स्वधाभिः | |
| ब्रह्मीनां गर्भो अपसामुपस्थान्महान्कविर्निश्चरति स्वधावान् | ॥ 4 ॥ |
| आविष्ट्यो वर्धते चारुरासु जिह्वानामूर्ध्वः स्वयंशा उपस्थे | |
| उभे त्वष्टुर्बिभ्यतुर्जायमानात्प्रतीची सिंहं प्रति जोषयेते | ॥ 5 ॥ |
| उभे भद्रे जोषयेते न मेने गावो न वाश्रा उप तस्थुरेवैः | |
| स दक्षाणां दक्षपतिर्बभूवाञ्जन्ति यं दक्षिणतो हविर्भिः | ॥ 6 ॥ |
| उद्यंयमीति सवितेव ब्राहू उभे सिचौ यतते भीम ऋञ्जन् | |
| उच्छुक्रमत्कमजते सिमस्मान्नावा मातृभ्यो वसना जहाति | ॥ 7 ॥ |
| त्वेषं रूपं कृणुत उत्तरं यत्संपृञ्चानः सदेने गोभिरद्भिः | |
| कविर्बुध्नं परि मर्मज्यते धीः सा देवताता समितिर्बभूव | ॥ 8 ॥ |
| उरु ते ज्रयः पर्येति बुध्नं विरोचमानं महिषस्य धामं | |
| विश्वेभिरग्रे स्वयंशोभिरिद्धोऽदब्धेभिः पायुभिः पाह्यस्मान् | ॥ 9 ॥ |
| धन्वन्त्स्रोतः कृणुते गातुमूर्मिं शुक्रैरूर्मिभिरुभि नक्षति क्षाम् | |
| विश्व्वा सनानि जठरेषु धत्तेऽन्तर्नवासु चरति प्रसूषु | ॥ 10 ॥ |
| एवा नो अग्रे समिधा वृधानो रेवत्पावक श्रवसे वि भाहि | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | ॥ 11 ॥ |

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता द्रविणोदाः शुद्धः वा अग्निः

| | |
|--|-------|
| स प्रलथा सहसा जायमानः सद्यः काव्यानि बळधत्त विश्वा | |
| आपश्च मित्रं धिषणां च साधन्देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् | ॥ 1 ॥ |
| स पूर्वया निविदा कव्यतायोरिमाः प्रजा अजनयन्मनूनाम् | |
| विवस्वता चक्षसा द्यामपश्च देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् | ॥ 2 ॥ |
| तमीळत प्रथमं यज्ञसाधुं विश्वा आरीराहुतमृञ्जसानम् | |
| ऊर्जः पुत्रं भरतं सृप्रदानुं देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् | ॥ 3 ॥ |

स मातरिश्वा पुरुवारपुष्टिर्विदद्वातुं तनयाय स्वर्वित् |
 विशां गोपा जनिता रोदस्योर्देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् || 4 ||
 नक्तोषासा वर्णमामेम्याने धापयेते शिशुमेकं समीची |
 द्यावाक्षामा रुक्मो अन्तर्वि भाति देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् || 5 ||
 रायो बुध्नः संगमनो वसूनां यज्ञस्य केतुर्मन्मसार्धनो वेः |
 अमृतत्वं रक्षमाणास एनं देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् || 6 ||
 नू च पुरा च सदनं रयीणां जातस्य च जायमानस्य च क्षाम् |
 सतश्च गोपां भवतश्च भूरैर्देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् || 7 ||
 द्रविणोदा द्रविणसस्तुरस्य द्रविणोदाः सनरस्य प्र यंसत् |
 द्रविणोदा वीरवतीमिषं नो द्रविणोदा रांसते दीर्घमायुः || 8 ||
 एवा नो अग्रे समिधा वृधानो रेवत्पावक श्रवसे वि भाहि |
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः || 9 ||

(8)

97

(म.1, अनु.15)

| | | |
|----------------------|---------------|------------------------------|
| ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः | छन्दः गायत्री | देवता शुचिः शुद्धः वा अग्निः |
|----------------------|---------------|------------------------------|

अपं नः शोशुचदुघमग्रै शुशुग्ध्या रयिम् | अपं नः शोशुचदुघम् || 1 ||
 सुक्षेत्रिया सुगातुया वसूया च यजामहे | अपं नः शोशुचदुघम् || 2 ||
 प्र यद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकासश्च सूरयः | अपं नः शोशुचदुघम् || 3 ||
 प्र यत्तै अग्रे सूरयो जायेमहि प्र ते वयम् | अपं नः शोशुचदुघम् || 4 ||
 प्र यदग्रेः सहस्वतो विश्वतो यन्ति भानवः | अपं नः शोशुचदुघम् || 5 ||
 त्वं हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसि | अपं नः शोशुचदुघम् || 6 ||
 द्विषो नो विश्वतोमुखाति नावेव पारय | अपं नः शोशुचदुघम् || 7 ||
 स नः सिन्धुमिव नावयाति पर्षा स्वस्तये | अपं नः शोशुचदुघम् || 8 ||

(3)

98

(म.1, अनु.15)

| | | |
|----------------------|------------------|------------------------|
| ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता वैश्वानरः अग्निः |
|----------------------|------------------|------------------------|

वैश्वानरस्य सुमतौ स्याम् राजा हि कं भुवनानामभिःश्रीः |
 इतो जातो विश्वमिदं वि चष्टे वैश्वानरो यतते सूर्येण || 1 ||
 पृष्टो द्विवि पृष्टो अग्निः पृथिव्यां पृष्टो विश्वा ओषधीरा विवेश |
 वैश्वानरः सहसा पृष्टो अग्निः स नो दिवा स रिषः पातु नक्तम् || 2 ||
 वैश्वानर तव तत्सत्यमस्त्वस्मान्नायो मघवानः सचन्ताम् |
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः || 3 ||

(1)

99

(म.1, अनु.15)

ऋषिः कश्यपः मारीचः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता जातवेदाः शुद्धः वा अग्निः

जातवेदसे सुनवाम् सोममरातीयतो नि दहाति वेदः |
 स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः || 1 ||

(19)

100

(म.1, अनु.15)

ऋषिः ऋज्राश्व-अम्बरीष-सहदेव-भयमान-सुराधसः वार्षागिराः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

स यो वृषा वृष्यैभिः समौका महो दिवः पृथिव्याश्च सम्राट् |
 सतीनसत्वा हव्यो भरैषु मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 1 ||
 यस्यानाप्तः सूर्यस्येव यामो भरैभरे वृत्रहा शुष्मो अस्ति |
 वर्षन्तमः सखिभिः स्वेभिरेवैर्मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 2 ||
 दिवो न यस्य रेतसो दुर्घानाः पन्थासो यन्ति शवसापरीताः |
 त्रद्वेषाः सासहिः पौंस्यैभिर्मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 3 ||
 सो अङ्गिरोभिरङ्गिरस्तमो भूद्वेषा वृषभिः सखिभिः सखा सन् |
 ऋग्मिभिर्ऋग्मी गातुभिर्ज्येष्ठो मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 4 ||
 स सूनुभिर्न रुद्रेभिर्ऋभ्वा नृषाह्ये सासह्यं अमित्रान् |
 सनीळेभिः श्रवस्यानि तूर्वन्मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 5 ||
 स मन्युमीः समर्दनस्य कर्तास्माकेभिर्नृभिः सूर्यं सनत् |
 अस्मिन्नहन्तसर्पतिः पुरुहूतो मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 6 ||
 तमूतयो रणयञ्छूरसातौ तं क्षेमस्य क्षितयः कृण्वत् त्राम् |
 स विश्वस्य करुणस्येश एको मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 7 ||
 तमप्सन्त शर्वस उत्सवेषु नरो नरमवसे तं धनाय |
 सो अन्धे चित्तमसि ज्योतिर्विदन्मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 8 ||
 स सव्येन यमति ब्राधतश्चित्स दक्षिणे संगृभीता कृतानि |
 स कीरिणा चित्सनिता धनानि मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 9 ||
 स ग्रामैभिः सनिता स रथैर्भिर्विदे विश्वाभिः कृष्टिभिर्नृशद्य |
 स पौंस्यैभिरभिभूरशस्तीर्मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 10 ||
 स जामिभिर्यत्समजाति मीळहेऽजामिभिर्वा पुरुहूत एवैः |
 अपां तोकस्य तनयस्य जेषे मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 11 ||
 स वज्रभृदस्युहा भीम उग्रः सहस्रचेताः शतनीथ ऋभ्वा |
 चम्रीषो न शर्वसा पाञ्चजन्यो मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती || 12 ||
 तस्य वज्रः क्रन्दति स्मत्स्वर्षा दिवो न त्वेषो र्वथः शिमीवान् |

| | |
|--|--------|
| तं सचन्ते सनयुस्तं धनानि मरुत्वात्रो भवत्विन्द्र ऊती | ॥ 13 ॥ |
| यस्याजस्रं शवसा मानमुक्थं परिभुजद्रोदसी विश्वतः सीम् | |
| स पारिषत्क्रतुभिर्मन्दसानो मरुत्वात्रो भवत्विन्द्र ऊती | ॥ 14 ॥ |
| न यस्य देवा देवता न मर्ता आपश्चन शवसो अन्तमापुः | |
| स प्ररिक्वा त्वक्षसा क्षमो दिवश्च मरुत्वात्रो भवत्विन्द्र ऊती | ॥ 15 ॥ |
| रोहिच्छ्यावा सुमदंशुर्लामीर्द्युक्षा राये ऋज्राश्वस्य | |
| वृषण्वन्तं बिभ्रती धूर्षु रथं मन्द्रा चिकेत नाहुषीषु विक्षु | ॥ 16 ॥ |
| एतत्त्यत्त इन्द्र वृष्णा उक्थं वार्षागिरा अभि गृणन्ति राधः | |
| ऋज्राश्वः प्रष्टिभिरम्बरीषः सहदेवो भयमानः सुरार्धाः | ॥ 17 ॥ |
| दस्युञ्छिम्यँश्च पुरुहूत एवैर्हत्वा पृथिव्यां शर्वा नि बर्हीत् | |
| सनत्क्षेत्रं सखिभिः श्वित्येभिः सन्त्सूर्यं सनदुपः सुवज्रः | ॥ 18 ॥ |
| विश्वाहेन्द्रो अधिवक्ता नो अस्त्वपरिहृताः सनुयाम् वाजम् | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | ॥ 19 ॥ |

(11)

101

(म.1, अनु.15)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1-7 त्रिष्टुप् 8-11

देवता इन्द्रः

| | |
|--|-------|
| प्र मुन्दिने पितुमदर्चता वचो यः कृष्णगर्भा निरहं नृजिश्चना | |
| अवस्यवो वृषणं वज्रदक्षिणं मरुत्वंतं सख्याय हवामहे | ॥ 1 ॥ |
| यो व्यंसं जाहृषाणेन मन्युना यः शम्बरं यो अहन्पिप्रुमव्रतम् | |
| इन्द्रो यः शुष्णामशुषुं न्यावृणङ्गुरुत्वंतं सख्याय हवामहे | ॥ 2 ॥ |
| यस्य द्यावापृथिवी पौंस्यं महद्यस्य व्रते वरुणो यस्य सूर्यः | |
| यस्येन्द्रस्य सिन्धवः सञ्चति व्रतं मरुत्वंतं सख्याय हवामहे | ॥ 3 ॥ |
| यो अश्वानां यो गवां गोपतिर्वशी य आरितः कर्मणि कर्मणि स्थिरः | |
| वीळोश्चिदिन्द्रो यो असुन्वतो वधो मरुत्वंतं सख्याय हवामहे | ॥ 4 ॥ |
| यो विश्वस्य जगतः प्राणतस्पतियो ब्रह्मणे प्रथमो गा अविन्दत् | |
| इन्द्रो यो दस्यूरधरां अवातिरन्मरुत्वंतं सख्याय हवामहे | ॥ 5 ॥ |
| यः शूरैर्भिर्हव्यो यश्च भीरुभिर्यो धार्वद्भिर्हूयते यश्च जिग्युभिः | |
| इन्द्रं यं विश्वा भुवनाभि संदधुर्मरुत्वंतं सख्याय हवामहे | ॥ 6 ॥ |
| रुद्रणामेति प्रदिशा विचक्षणो रुद्रेभिर्योषां तनुते पृथु ज्रयः | |
| इन्द्रं मनीषा अभ्यर्चति श्रुतं मरुत्वंतं सख्याय हवामहे | ॥ 7 ॥ |
| यद्वा मरुत्वः परमे सुधस्थे यद्वावमे वृजनै मादयासे | |
| अत् आ याह्यध्वरं नो अच्छा त्वाया हविश्चकृमा सत्यराधः | ॥ 8 ॥ |

त्वायेन्द्र सोमं सुषुमा सुदक्ष त्वाया हविश्चकृमा ब्रह्मवाहः ।
 अर्धा नियुत्वः सर्गणो मरुद्भिर्स्मिन्यज्ञे बर्हिषि मादयस्व ॥ 9 ॥
 मादयस्व हरिभिर्ये तं इन्द्र वि ष्यस्व शिप्रे वि सृजस्व धेने ।
 आ त्वा सुशिप्र हरयो वहन्तूशन्हुव्यानि प्रति नो जुषस्व ॥ 10 ॥
 मरुत्स्तोत्रस्य वृजनस्य गोपा व्यमिन्द्रेण सनुयाम् वाजम् ।
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ 11 ॥

(11)

102

(म.1, अनु.15)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1-10 त्रिष्टुप् 11

देवता इन्द्रः

इमां ते धियं प्र भरे महो महीमस्य स्तोत्रे धिषणा यत्त आनुजे ।
 तर्मुत्सवे च प्रसवे च सासहिमिन्द्रं देवासुः शर्वसामदन्नन् ॥ 1 ॥
 अस्य श्रवो नद्यः सप्त बिभ्रति द्यावाक्षामा पृथिवी दर्शतं वपुः ।
 अस्मे सूर्याचन्द्रमसाभिचक्षे श्रद्धे कर्मिन्द्र चरतो वितर्तुरम् ॥ 2 ॥
 तं स्मा रथं मघवन्प्राव सातये जैत्रं यं तं अनुमदाम संगमे ।
 आजान इन्द्र मनसा पुरुष्टुत त्वायद्ध्यो मघवञ्छर्म यच्छ नः ॥ 3 ॥
 व्यं जयेम त्वया युजा वृत्तमस्माकमंशमुदवा भरेभरे ।
 अस्मभ्यमिन्द्र वरिवः सुगं कृधि प्र शत्रूणां मघवन्वृष्या रुज ॥ 4 ॥
 नाना हि त्वा हवमाना जना इमे धनानां धर्तुरवसा विपन्यवः ।
 अस्माकं स्मा रथमा तिष्ठ सातये जैत्रं हीन्द्र निभृतं मनस्तव ॥ 5 ॥
 गोजिता बाहू अमितक्रतुः सिमः कर्मन्कर्मञ्छतमूतिः खजंकरः ।
 अकल्प इन्द्रः प्रतिमानमोजसाथा जना वि ह्वयन्ते सिषासवः ॥ 6 ॥
 उत्ते शतान्मघवन्नृञ्च भूर्यसु उत्सहस्राद्रिरिचे कृष्टिषु श्रवः ।
 अमात्रं त्वा धिषणा तित्विषे मृह्यधा वृत्राणि जिघ्रसे पुरंदर ॥ 7 ॥
 त्रिविष्टिधातुं प्रतिमानमोजसस्त्रिस्तो भूमिर्नृपते त्रीणि रोचना ।
 अतीदं विश्वं भुवनं ववक्षिथाशत्रुरिन्द्र जनुषा सनादसि ॥ 8 ॥
 त्वां देवेषु प्रथमं हवामहे त्वं बभूथ पृतनासु सासहिः ।
 सेमं नः कारुमुपमन्युमुद्भिदमिन्द्रः कृणोतु प्रसवे रथं पुरः ॥ 9 ॥
 त्वं जिगेथ न धना रुरोधिताभेष्वजा मघवन्महत्सु च ।
 त्वामुग्रमवसे सं शिशीमस्यथा न इन्द्र हवनेषु चोदय ॥ 10 ॥
 विश्वाहेन्द्रो अधिवक्ता नो अस्त्वपरिहृताः सनुयाम् वाजम् ।
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ 11 ॥

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

| | |
|---|-------|
| तत्तं इन्द्रियं परमं पराचैरधारयन्त कवयः पुरेदम् | |
| क्षमेदमन्यद्विव्यं न्यदस्य समीं पृच्यते समनेव केतुः | ॥ 1 ॥ |
| स धारयत्पृथिवीं प्रथञ्च वज्रेण हत्वा निरुपः संसर्ज | |
| अहन्नहिमभिनद्रौहिणं व्यहन्यंसं मघवा शचीभिः | ॥ 2 ॥ |
| स जातूर्भर्मा श्रद्धधान् ओजः पुरो विभिन्दन्नचरद्वि दासीः | |
| विद्वान्वज्रिन्दस्यवे हेतिमस्यार्यं सहो वर्धया द्युम्रमिन्द्र | ॥ 3 ॥ |
| तदूचुषे मानुषेमा युगानि कीर्तेन्यं मघवा नाम् बिभ्रत् | |
| उपप्रयन्दस्युहत्याय वज्री यद्ध सूनुः श्रवसे नाम् दुधे | ॥ 4 ॥ |
| तदस्येदं पश्यता भूरिं पुष्टं श्रदिन्द्रस्य धत्तन वीर्याय | |
| स गा अविन्दुत्सो अविन्दुदश्वान्त्स ओषधीः सो अपः स वनानि | ॥ 5 ॥ |
| भूरिकर्मणे वृषभाय वृष्णे सत्यशुष्माय सुनवाम् सोमम् | |
| य आदृत्या परिपन्थीव शूरोऽयज्वनो विभजन्नेति वेदः | ॥ 6 ॥ |
| तदिन्द्र प्रेव वीर्यं चकर्त्त यत्ससन्तं वज्रेणाबोधयोऽहिम् | |
| अनु त्वा पत्नीर्हृषितं वयश्च विश्वे देवासो अमदन्ननु त्वा | ॥ 7 ॥ |
| शुष्णं पिपुं कुयवं वृत्रमिन्द्र यदावधीर्वि पुरः शम्बरस्य | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | ॥ 8 ॥ |

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

| | |
|---|-------|
| योनिष्ट इन्द्र निषदे अकारि तमा नि षीद स्वानो नार्वा | |
| विमुच्या वयोऽवसायाश्चान्दोषा वस्तोर्वहीयसः प्रपित्वे | ॥ 1 ॥ |
| ओ त्ये नरु इन्द्रमूतये गुनू चित्तान्तसृद्यो अध्वनो जगम्यात् | |
| देवासो मन्युं दासस्य श्रमन्ते न आ वक्षन्त्सुविताय वर्णम् | ॥ 2 ॥ |
| अव त्मना भरते केतवेदा अव त्मना भरते फेनमुदन् | |
| क्षीरेण स्नातः कुयवस्य योषे हते ते स्यातां प्रवृणे शिफायाः | ॥ 3 ॥ |
| युयोप नाभिरुपरस्यायोः प्र पूर्वाभिस्तिरते राष्ट्रि शूरः | |
| अञ्जसी कुलिशी वीरपत्नी पयो हिन्वाना उदभिर्भरन्ते | ॥ 4 ॥ |
| प्रति यत्स्या नीथार्दिशि दस्योरोको नाच्छा सदनं जानती गात् | |
| अध स्मा नो मघवञ्चकृतादिन्मा नो मघेव निष्पी परा दाः | ॥ 5 ॥ |
| स त्वं न इन्द्र सूर्ये सो अप्स्वनागास्त्व आ भज जीवशंसे | |
| मान्तरां भुज्मा रीरिषो नः श्रद्धितं ते महत इन्द्रियाय | ॥ 6 ॥ |

| | |
|---|-------|
| अर्धा मन्ये श्रुते अस्मा अधायि वृषा चोदस्व महते धनाय | |
| मा नो अकृते पुरुहूत योनाविन्द्र क्षुध्यद्भ्यो वय आसुतिं दाः | ॥ 7 ॥ |
| मा नो वधीरिन्द्र मा परा दा मा नः प्रिया भोजनानि प्र मोषीः | |
| आण्डा मा नो मघवञ्छक्र निर्भेन्मा नः पात्रा भेत्सहजानुषाणि | ॥ 8 ॥ |
| अर्वाडेहि सोमकामं त्वाहुरयं सुतस्तस्य पिबा मदाय | |
| उरुव्यचा जठर आ वृषस्व पितेव नः शृणुहि ह्यमानः | ॥ 9 ॥ |

(19)

105

(म.1, अनु.15)

| |
|--|
| ऋषिः त्रितः आस्यः, कुत्सः वा छन्दः पङ्क्तिः 1-7,9-18, महाबृहती 8, त्रिष्टुप् 19 देवता विश्वे देवाः |
|--|

| | |
|--|--------|
| चन्द्रमा अस्वश्न्तरा सुपर्णो धावते दिवि | |
| न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 1 ॥ |
| अर्थमिद्धा उ अर्थिन् आ जाया युवते पतिम् | |
| तुञ्जाते वृष्यं पर्यः परिदाय रसं दुहे वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 2 ॥ |
| मो षु देवा अदः स्वश्रव पादि दिवस्परि | |
| मा सोम्यस्य शंभुवः शूनं भूम कदा चन वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 3 ॥ |
| यज्ञं पृच्छाम्यवमं स तद्दुतो वि वोचति । | |
| क्व ऋतं पूर्वं गतं कस्तद्विभति नूतनो वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 4 ॥ |
| अमी ये देवाः स्थनं त्रिष्वा रोचने दिवः । | |
| कद्व ऋतं कदनृतं क्व प्रत्वा व आहुतिर्वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 5 ॥ |
| कद्व ऋतस्य धर्णासि कद्वरुणस्य चक्षणम् | |
| कद्वर्यम्णो महस्पथार्ति क्रामेम दूढ्यो वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 6 ॥ |
| अहं सो अस्मि यः पुरा सुते वदामि कानि चित् | |
| तं मा व्यन्त्याध्योः वृको न तृष्णजं मृगं वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 7 ॥ |
| सं मा तपन्त्यभितः सपत्नीरिव पर्शवः । | |
| मूषो न शिश्रा व्यदन्ति माध्यः स्तोतारं ते शतक्रतो वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 8 ॥ |
| अमी ये सप्त रश्मयस्तत्रा मे नाभिरातता | |
| त्रितस्तद्वेदास्यः स जामित्वायं रेभति वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 9 ॥ |
| अमी ये पञ्चोक्षणो मध्ये तस्थुर्महो दिवः । | |
| देवत्रा नु प्रवाच्यं सधीचीना नि वावृतुर्वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 10 ॥ |
| सुपर्णा एत आसते मध्यं आरोधने दिवः | |
| ते सैधन्ति पथो वृकं तरन्तं युह्वतीरपो वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 11 ॥ |
| नव्यं तदुक्थ्यं हितं देवासः सुप्रवाचनम् | |
| ऋतमर्षन्ति सिन्धवः सत्यं तातान् सूर्यो वित्तं मे अस्य रोदसी | ॥ 12 ॥ |

| | |
|--|----|
| अग्ने तव त्यदुक्थ्यं देवेष्वस्त्याप्यम् | |
| स नः सत्तो मनुष्वदा देवान्यक्षि विदुष्टरो वित्तं मे अस्य रौदसी | 13 |
| सत्तो होता मनुष्वदा देवाँ अच्छा विदुष्टरः | |
| अग्निर्हव्या सुषूदति देवो देवेषु मेधिरो वित्तं मे अस्य रौदसी | 14 |
| ब्रह्मा कृणोति वरुणो गातुविदं तमीमहे | |
| व्यूर्णोति हृदा मतिं नव्यो जायतामृतं वित्तं मे अस्य रौदसी | 15 |
| असौ यः पन्था आदित्यो दिवि प्रवाच्यं कृतः | |
| न स देवा अतिक्रमे तं मर्तासो न पश्यथ वित्तं मे अस्य रौदसी | 16 |
| त्रितः कूपेऽवहितो देवान्हवत ऊतये | |
| तच्छुश्राव बृहस्पतिः कृण्वन्नहूरणादुरु वित्तं मे अस्य रौदसी | 17 |
| अरुणो मा सकृद्वकः पथा यन्तं ददर्श हि | |
| उज्जिहीते निचाय्या तष्टेव पृष्ट्यामयी वित्तं मे अस्य रौदसी | 18 |
| एनाङ्गूषेण व्यमिन्द्रवन्तोऽभि ध्याम वृजने सर्ववीराः | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | 19 |

(7)

106

(म.1, अनु.16)

| | | |
|----------------------|------------------------------|--------------------|
| ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः | छन्दः जगती 1-6, त्रिष्टुप् 7 | देवता विश्वे देवाः |
|----------------------|------------------------------|--------------------|

| | |
|--|---|
| इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमृतये मारुतं शर्धो अदितिं हवामहे | |
| रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निषिपर्तन | 1 |
| त आदित्या आ गता सर्वतातये भूत देवा वृत्रतूर्येषु शंभुवः | |
| रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निषिपर्तन | 2 |
| अवन्तु नः पितरः सुप्रवाचना उत देवी देवपुत्रे ऋतावृधा | |
| रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निषिपर्तन | 3 |
| नराशंसं वाजिनं वाजर्यन्निह क्षयद्वीरं पूषणं सुप्रेरीमहे | |
| रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निषिपर्तन | 4 |
| बृहस्पते सदमिन्नः सुगं कृधि शं योर्यत्ते मनुर्हितं तदीमहे | |
| रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निषिपर्तन | 5 |
| इन्द्रं कुत्सो वृत्रहणं शचीपतिं काटे निबाळह ऋषिरह्वदूतये | |
| रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निषिपर्तन | 6 |
| देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु देवस्त्राता त्रायतामप्रयुच्छन् | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | 7 |

(3)

107

(म.1, अनु.16)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता विश्वे देवाः

यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्रमादित्यासो भवता मृळयन्तः |
 आ वोऽर्वाचीं सुमतिर्वृत्यादुंहोश्चिद्या वरिवोवित्तरासत् || 1 ||
 उप नो देवा अवसा गमन्त्वङ्गिरसां सामभिः स्तुयमानाः |
 इन्द्र इन्द्रियैर्मरुतो मरुद्भिरादित्यैर्नो अदितिः शर्म यंसत् || 2 ||
 तन्न इन्द्रस्तद्वरुणस्तदग्निस्तदर्यमा तत्सविता चनो धात् |
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः || 3 ||

(13)

108

(म.1, अनु.16)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्राग्नी

य इन्द्राग्नी चित्रतमो रथो वामभि विश्वानि भुवनानि चष्टे |
 तेना यातं सुरथं तस्थिवांसाथा सोमस्य पिबतं सुतस्य || 1 ||
 यावदिदं भुवनं विश्वमस्त्युरुव्यचा वरिमता गभीरम् |
 तावाँ अयं पातवे सोमो अस्त्वरमिन्द्राग्नी मनसे युवभ्याम् || 2 ||
 चक्राथे हि सृध्यंङ्गाम भद्रं संधीचीना वृत्रहणा उत स्थः |
 तारिन्द्राग्नी सृध्यञ्चा निषद्या वृष्णः सोमस्य वृष्णा वृषेथाम् || 3 ||
 समिद्धेष्वग्निष्वानजाना यत्स्रुचा बर्हिरु तिस्तिराणा |
 तीव्रैः सोमैः परिषिक्तेभिरर्वागेन्द्राग्नी सौमनसाय यातम् || 4 ||
 यानीन्द्राग्नी चक्रथुर्वीर्याणि यानि रूपाण्युत वृष्ण्यानि |
 या वाँ प्रत्नानि सृख्या शिवानि तेभिः सोमस्य पिबतं सुतस्य || 5 ||
 यदब्रवं प्रथमं वा वृणानोऽयं सोमो असुरैर्नो विहव्यः |
 तां सत्यां श्रद्धामभ्या हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य || 6 ||
 यदिन्द्राग्नी मदथः स्वे दुरोणे यद्वह्मणि राजनि वा यजत्रा |
 अतः परि वृष्णावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य || 7 ||
 यदिन्द्राग्नी यदुषु तुर्वशेषु यदद्बहुष्वनुषु पूरुषु स्थः |
 अतः परि वृष्णावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य || 8 ||
 यदिन्द्राग्नी अवमस्यां पृथिव्यां मध्यमस्यां परमस्यामुत स्थः |
 अतः परि वृष्णावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य || 9 ||
 यदिन्द्राग्नी परमस्यां पृथिव्यां मध्यमस्यामवमस्यामुत स्थः |
 अतः परि वृष्णावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य || 10 ||
 यदिन्द्राग्नी दिवि ष्ठो यत्पृथिव्यां यत्पर्वतेष्वोषधीष्वप्सु |
 अतः परि वृष्णावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य || 11 ||

यदिन्द्राग्नी उदिता सूर्यस्य मध्ये दिवः स्वधया मादयेथे |
 अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य || 12 ||
 एवेन्द्राग्नी पपिवांसा सुतस्य विश्वास्मभ्यं सं जयतं धनानि |
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः || 13 ||

(8)

109

(म.1, अनु.16)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्राग्नी

वि ह्यख्यं मनसा वस्य इच्छन्निन्द्राग्नी ज्ञास उत वा सजातान् |
 नान्या युवत्प्रमतिरस्ति मह्यं स वां धियं वाजयन्तीमतक्षम् || 1 ||
 अश्रवं हि भूरिदावत्तरा वां विजामातुरुत वा घा स्यालात् |
 अथा सोमस्य प्रयती युवभ्यामिन्द्राग्नी स्तोमं जनयामि नव्यम् || 2 ||
 मा छेद्व रश्मौरिति नार्धमानाः पितृणां शक्तीरनुयच्छमानाः |
 इन्द्राग्निभ्यां कं वृषणो मदन्ति ता ह्यद्रीं धिषणाया उपस्थे || 3 ||
 युवाभ्यां देवी धिषणा मदायेन्द्राग्नी सोममुशती सुनोति |
 तार्वश्विना भद्रहस्ता सुपाणी आ धावतं मधुना पृङ्गमप्सु || 4 ||
 युवामिन्द्राग्नी वसुनो विभागे त्वस्तमा शुश्रव वृत्रहत्ये |
 तावासद्या बर्हिषि यज्ञे अस्मिन् चर्षणी मादयेथां सुतस्य || 5 ||
 प्र चर्षणिभ्यः पृतनाहवेषु प्र पृथिव्या रिरिचाथे दिवश्च |
 प्र सिन्धुभ्यः प्र गिरिभ्यो महित्वा प्रेन्द्राग्नी विश्वा भुवनात्यन्या || 6 ||
 आ भरतं शिक्षतं वज्रबाहू अस्माँ इन्द्राग्नी अवतं शचीभिः |
 इमे नु ते रश्मयः सूर्यस्य येभिः सपित्वं पितरो न आसन् || 7 ||
 पुरंदरा शिक्षतं वज्रहस्तास्माँ इन्द्राग्नी अवतं भरेषु |
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः || 8 ||

(9)

110

(म.1, अनु.16)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1-4,6-8, त्रिष्टुप् 5,9

देवता ऋभवः

ततं मे अपस्तदुं तायते पुनः स्वादिष्टा धीतिरुचथाय शस्यते |
 अयं समुद्र इह विश्वदैव्यः स्वाहाकृतस्य समुं तृष्णुत ऋभवः || 1 ||
 आभोगयं प्र यदिच्छन्त एतनापाकाः प्राञ्चो मम के चिदापयः |
 सौधन्वनासश्चरितस्य भूमनागच्छत सवितुर्दाशुषो गृहम् || 2 ||
 तत्सविता वोऽमृतत्वमासुवदगोह्यं यच्छ्रवयन्त एतेन |
 त्यं चिञ्चमसमसुरस्य भक्षणमेकं सन्तमकणुता चतुर्वयम् || 3 ||
 विष्टी शमी तरणित्वेन वाघतो मर्तासुः सन्तो अमृतत्वमानशुः |

| | |
|---|-------|
| सौधन्वना ऋभवः सूरचक्षसः संवत्सरे समपृच्यन्त धीतिभिः | ॥ 4 ॥ |
| क्षेत्रमिव वि ममुस्तेजनेन एकं पात्रमृभवो जेहमानम् | |
| उपस्तुता उपमं नाधमाना अमर्त्येषु श्रवं इच्छमानाः | ॥ 5 ॥ |
| आ मनीषामन्तरिक्षस्य नृभ्यः स्रुचेव घृतं जुहवाम विद्वानां | |
| तरणित्वा ये पितुरस्य सश्चिर ऋभवो वाजमरुहन्दिवो रजः | ॥ 6 ॥ |
| ऋभुर्न इन्द्रः शर्वसा नवीयानृभुर्वाजेभिर्वसुभिर्वसुर्दुदिः | |
| युष्माकं देवा अवसाहनि प्रियेभ्यो तिष्ठेम पृत्सुतीरसुन्वताम् | ॥ 7 ॥ |
| निश्चर्मण ऋभवो गार्मपिंशत् सं वत्सेनासृजता मातरं पुनः | |
| सौधन्वनासः स्वपुस्यया नरो जित्री युवाना पितराकृणोतन | ॥ 8 ॥ |
| वाजेभिर्नो वाजसातावविङ्क्यभुमां इन्द्र चित्रमा दर्षि राधः | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | ॥ 9 ॥ |

(5)

111

(म.1, अनु.16)

| | | |
|----------------------|-----------------------------|------------|
| ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः | छन्दः जगती 1-4 त्रिष्टुप् 5 | देवता ऋभवः |
|----------------------|-----------------------------|------------|

| | |
|--|-------|
| तक्षत्रथं सुवृतं विद्वानापसस्तक्षन्हरीं इन्द्रवाहा वृषण्वसू | |
| तक्षन्पितृभ्यामृभवो युवद्वयस्तक्षन्वत्साय मातरं सचाभुवम् | ॥ 1 ॥ |
| आ नो यज्ञाय तक्षत ऋभुमद्वयः क्रत्वे दक्षाय सुप्रजावतीमिषम् | |
| यथा क्षयाम् सर्ववीरया विशा तन्नः शर्धाय धासथा स्विन्द्रियम् | ॥ 2 ॥ |
| आ तक्षत सातिमस्मभ्यमृभवः सातिं रथाय सातिमर्वते नरः | |
| सातिं नो जैत्री सं महेत विश्वहा जामिमजामिं पृत्नासु सक्षणिम् | ॥ 3 ॥ |
| ऋभुक्षणमिन्द्रमा हुव ऊतयं ऋभून्वाजान्मरुतः सोमपीतये | |
| उभा मित्रावरुणा नूनमश्विना ते नो हिन्वन्तु सातये धिये जिषे | ॥ 4 ॥ |
| ऋभुर्भराय सं शिशातु सातिं समर्यजिद्वाजो अस्मां अविष्टु | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | ॥ 5 ॥ |

(25)

112

(म.1, अनु.16)

| |
|--|
| ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः छन्दः जगती 1-23, त्रिष्टुप् 24-25 देवता द्यावापृथिव्यग्निश्चिनः 1, अश्विनौ 2-25 |
|--|

| | |
|---|-------|
| ईळे द्यावापृथिवी पूर्वचित्तयेऽग्निं घर्मं सुरुचं यामन्निष्टये | |
| याभिर्भरे कारमंशाय जिन्वथस्ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 1 ॥ |
| युवोर्दानाय सुभरा असश्चतो रथमा तस्थुर्वचसं न मन्तवे | |
| याभिर्धियोऽवथः कर्मन्निष्टये ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 2 ॥ |
| युवं तासां दिव्यस्य प्रशासने विशां क्षयथो अमृतस्य मज्जना | |
| याभिर्धेनुमस्वं पिवन्थो नरा ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 3 ॥ |

| | |
|--|--------|
| याभिः परिज्मा तनयस्य मज्मना द्विमाता तूर्षु त्रणिर्विभूषति | |
| याभिस्त्रिमन्तुरभवद्विचक्षणस्ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 4 ॥ |
| याभी रेभं निवृतं सितमद्ध्य उद्वन्दनमैरयतं स्वदृशे | |
| याभिः कण्वं प्र सिषासन्तमावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 5 ॥ |
| याभिरन्तकं जसमानमारणे भुज्युं याभिरव्यथिभिर्जिज्न्वथुः | |
| याभिः कर्कन्धुं व्ययं च जिन्वथस्ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 6 ॥ |
| याभिः शुचन्ति धनसां सुषंसदं तप्तं घर्ममोम्यावन्तमत्रये | |
| याभिः पृश्निगुं पुरुकुत्समावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 7 ॥ |
| याभिः शचीभिर्वृषणा परावृजं प्रान्धं श्रोणं चक्षस् एतवे कृथः | |
| याभिर्वितिकां ग्रसिताममुञ्चतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 8 ॥ |
| याभिः सिन्धुं मधुमन्तमसञ्चतं वसिष्ठं याभिरजरावजिन्वतम् | |
| याभिः कुत्सं श्रुतर्यं नर्यमावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 9 ॥ |
| याभिर्विशपलां धनसामथ्व्यं सहस्रमीळह आजावजिन्वतम् | |
| याभिर्वशमश्व्यं प्रेणिमावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 10 ॥ |
| याभिः सुदानू औशिजायं वणिजे दीर्घश्रवसे मधु कोशो अक्षरत् | |
| कक्षीवन्तं स्तोतारं याभिरावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 11 ॥ |
| याभी रसां क्षोदसोद्रः पिपिन्वथुरनश्वं याभी रथमावतं जिषे | |
| याभिस्त्रिशोकं उस्त्रिया उदाजत् ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 12 ॥ |
| याभिः सूर्यं परियाथः परावति मन्धातारं क्षैत्रपत्येष्वावतम् | |
| याभिर्विप्रं प्र भ्रद्वाजमावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 13 ॥ |
| याभिर्महामतिथिग्वं कशोजुवं दिवोदासं शम्बरहत्य आवतम् | |
| याभिः पूभिद्यै त्रसदस्युमावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 14 ॥ |
| याभिर्वृष्टं विपिपानमुपस्तुतं कलिं याभिर्वित्तजानिं दुवस्यथः | |
| याभिर्व्यश्वमुत पृथिमावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 15 ॥ |
| याभिर्नरा शयवे याभिरत्रये याभिः पुरा मनवे गातुमीषथुः | |
| याभिः शारीराजतं स्यूमरश्मये ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 16 ॥ |
| याभिः पठर्वा जठरस्य मज्मनाग्निर्नादीदैच्चित इद्धो अज्मन्ना | |
| याभिः शर्यातमवथो महाधने ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 17 ॥ |
| याभिरङ्गिरो मनसा निरण्यथोऽग्रं गच्छथो विवरे गोअर्णसः | |
| याभिर्मनुं शूरमिषा समावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 18 ॥ |
| याभिः पत्नीर्विमदायं न्यूहथुरा घं वा याभिररुणीरशिक्षतम् | |
| याभिः सुदासं ऊहथुः सुदेव्यं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 19 ॥ |
| याभिः शंताती भवथो ददाशुषे भुज्युं याभिरवथो याभिरधिगुम् | |
| ओम्यावतीं सुभरामृतस्तुभं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 20 ॥ |
| याभिः कृशानुमसने दुवस्यथो जवे याभिर्यूनो अर्वन्तमावतम् | |
| मधु प्रियं भरथो यत्सरङ्ग्यस्ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् | ॥ 21 ॥ |

याभिर्नरं गोषुयुधं नृषाह्ये क्षेत्रस्य साता तनयस्य जिन्वथः ।
याभी रथाँ अवथो याभिरर्वतस्ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ 22 ॥
याभिः कुत्समार्जुनेयं शतक्रतू प्र तुर्वीति प्र च दुभीतिमावतम् ।
याभिर्ध्वसन्ति पुरुषन्तिमावतं ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ 23 ॥
अप्रस्वतीमश्विना वाचमस्मे कृतं नो दस्त्रा वृषणा मनीषाम् ।
अघृत्येऽवसे नि ह्वये वां वृधे च नो भवतं वाजसातौ ॥ 24 ॥
द्युभिरक्तुभिः परि पातमस्मानरिष्टेभिरश्विना सौभगेभिः ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ 25 ॥

। इति प्रथमाष्टके सप्तमोऽध्यायः समाप्तः ।

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता उषाः रात्रिः च 1 उषाः 2-20

| | |
|--|--------|
| इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाञ्छित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विभ्वा | |
| यथा प्रसूता सवितुः सवायँ एवा रात्र्युषसे योनिमारैक् | ॥ 1 ॥ |
| रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्यागादारैगु कृष्णा सदनान्यस्याः | |
| समानबन्धू अमृते अनुची द्यावा वर्णं चरत आमिनाने | ॥ 2 ॥ |
| समानो अध्वा स्वस्रोरनुत्तस्तमन्यान्या चरतो देवशिष्टे | |
| न मैथेते न तस्थतुः सुमेके नक्तोषासा समनसा विरूपे | ॥ 3 ॥ |
| भास्वती नेत्री सूनृतानामचेति चित्रा वि दुरो न आवः | |
| प्रार्थ्या जगद्भ्यु नो रायो अख्यदुषा अजीगर्भुवनानि विश्वा | ॥ 4 ॥ |
| जिह्वशयेर् चरितवे मघोन्याभोगय इष्टये राय उ त्वम् | |
| दुभ्रं पश्यद्भ्य उर्विया विचक्ष उषा अजीगर्भुवनानि विश्वा | ॥ 5 ॥ |
| क्षत्राय त्वं श्रवसे त्वं महीया इष्टये त्वमर्थमिव त्वमित्यै | |
| विसदृशा जीविताभिप्रचक्ष उषा अजीगर्भुवनानि विश्वा | ॥ 6 ॥ |
| एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि व्युच्छन्ती युवतिः शुक्रवासाः | |
| विश्वस्येशाना पार्थिवस्य वस्व उषो अद्येह सुभगे व्युच्छ | ॥ 7 ॥ |
| परायतीनामन्वेति पार्थ आयतीनां प्रथमा शश्वतीनाम् | |
| व्युच्छन्ती जीवमुदीरयन्त्युषा मृतं कं च न बोधयन्ती | ॥ 8 ॥ |
| उषो यदग्निं समिधे चकथ वि यदावश्चक्षसा सूर्यस्य | |
| यन्मानुषान्यक्ष्यमाणौ अजीगस्तद्वेषु चकषे भद्रमप्रः | ॥ 9 ॥ |
| कियात्या यत्समया भवाति या व्युषुर्याश्च नूनं व्युच्छान् | |
| अनु पूर्वाः कृपते वावशाना प्रदीध्याना जोषमन्याभिरिति | ॥ 10 ॥ |
| इयुष्टे ये पूर्वतरामपश्यन्व्युच्छन्तीमुषसं मर्त्यासः | |
| अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्याभूदो ते यन्ति ये अपरीषु पश्यान् | ॥ 11 ॥ |
| यावयद्वेषा ऋत्पा ऋतेजाः सुम्रावरी सूनृता इरयन्ती | |
| सुमङ्गलीर्बिभ्रती देववीतिमिहाद्योषः श्रेष्ठतमा व्युच्छ | ॥ 12 ॥ |
| शश्वत्पुरोषा व्युवास देव्यथो अद्येदं व्यावो मघोनी | |
| अथो व्युच्छादुत्तरां अनु द्यूजरामृता चरति स्वधाभिः | ॥ 13 ॥ |
| व्यंजिभिर्दिव आतास्वद्यौदप कृष्णां निर्णिजं देव्यावः | |
| प्रबोधयन्त्यरुणेभिरश्वैरोषा याति सुयुजा रथेन | ॥ 14 ॥ |

| | |
|---|--------|
| आवहन्ती पोष्या वार्याणि चित्रं केतुं कृणुते चेकिताना | |
| ईयुषीणामुपमा शश्वतीनां विभातीनां प्रथमोषा व्यश्वैत् | ॥ 15 ॥ |
| उदीर्ध्वं जीवो असुर्न आगादप प्रागात्तम् आ ज्योतिरेति | |
| आरैक्पन्थां यातवे सूर्यायागन्म् यत्र प्रतिरन्त् आयुः | ॥ 16 ॥ |
| स्यूर्मना वाच उदिर्यति वह्निः स्तवानो रेभ उषसो विभातीः | |
| अद्या तदुच्छ गृणुते मघोन्यस्मे आयुर्नि दिदीहि प्रजावत् | ॥ 17 ॥ |
| या गोमतीरुषसः सर्ववीरा व्युच्छन्ति दाशुषे मर्त्याय | |
| वायोरिव सूनृतानामुदुर्के ता अश्वदा अश्रवत्सोमसुत्वा | ॥ 18 ॥ |
| माता देवानामदितेरनीकं यज्ञस्य केतुर्बृहती वि भाहि | |
| प्रशस्तिकृद्ब्रह्मणे नो व्युच्छा नो जनै जनय विश्ववारे | ॥ 19 ॥ |
| यच्चित्रमप्र उषसो वहन्तीजानाय शशमानाय भद्रम् | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | ॥ 20 ॥ |

(11)

114

(म.1, अनु.16)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः जगती 1-9, त्रिष्टुप् 10-11

देवता रुद्रः

| | |
|--|-------|
| इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्र भरामहे मतीः | |
| यथा शमसद्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम् | ॥ 1 ॥ |
| मृळा नो रुद्रोत नो मयस्कृधि क्षयद्वीराय नमसा विधेम ते | |
| यच्छं च योश्च मनुरायेजे पिता तदश्याम् तव रुद्र प्रणीतिषु | ॥ 2 ॥ |
| अश्याम ते सुमतिं देवयज्यया क्षयद्वीरस्य तव रुद्र मीढ्वः | |
| सुम्नायन्निद्विशो अस्माकमा चरारिष्टवीरा जुहवाम ते हविः | ॥ 3 ॥ |
| त्वेषं व्यं रुद्रं यज्ञसाधं वृद्धं कविमवसे नि ह्वयामहे | |
| आरे अस्मदैव्यं हेळो अस्यतु सुमतिमिद्वयमस्या वृणीमहे | ॥ 4 ॥ |
| दिवो वराहमरुषं कपर्दिनं त्वेषं रूपं नमसा नि ह्वयामहे | |
| हस्ते बिभ्रद्भेषजा वार्याणि शर्म वर्म च्छर्दिरस्मभ्यं यंसत् | ॥ 5 ॥ |
| इदं पित्रे मरुतामुच्यते वचः स्वादोः स्वादीयो रुद्राय वर्धनम् | |
| रास्वा च नो अमृत मर्तभोजनं त्मने तोकाय तनयाय मृळ | ॥ 6 ॥ |
| मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् | |
| मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः | ॥ 7 ॥ |
| मा नस्तोके तनये मा न आयौ मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः | |
| वीरान्मा नो रुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे | ॥ 8 ॥ |
| उप ते स्तोमान्यशुपाइवाकरं रास्वा पितर्मरुतां सुम्नस्मे | |
| भद्रा हि ते सुमतिर्मृळयत्तमाथा व्यमव इत्ते वृणीमहे | ॥ 9 ॥ |
| आरे ते गोम्नमुत पूरुषुघ्नं क्षयद्वीर सुम्नस्मे ते अस्तु | |

मृळा च नो अर्धि च ब्रूहि देवाधा च नः शर्म यच्छ द्विबर्हीः ॥ 10 ॥
 अवोचाम् नमो अस्मा अवस्यवः शृणोतु नो हवं रुद्रो मरुत्वान् ।
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ 11 ॥

(6)

115

(म.1, अ.16)

ऋषिः कुत्सः आङ्गिरसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता सूर्यः

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्रेः ।
 आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्यं आत्मा जगत्स्तस्थुषश्च ॥ 1 ॥
 सूर्यो देवीमुषसं रोचमानां मर्यो न योषामभ्येति पश्चात् ।
 यत्रा नरो देव्यन्तो युगानि वितन्वते प्रति भद्राय भद्रम् ॥ 2 ॥
 भद्रा अश्वा हरितः सूर्यस्य चित्रा एतग्वा अनुमाद्यासः ।
 नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमस्थुः परि द्यावापृथिवी यन्ति सद्यः ॥ 3 ॥
 तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्या कर्तोर्विततं सं जभार ।
 यदेदयुक्त हरितः सधस्थादाद्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै ॥ 4 ॥
 तन्मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षे सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थे ।
 अनुन्तमन्यद्रुशदस्य पाजः कृष्णमन्यद्धरितः सं भरन्ति ॥ 5 ॥
 अद्या देवा उदिता सूर्यस्य निरंहसः पिपृता निरवद्यात् ।
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ 6 ॥

(25)

116

(म.1, अनु.17)

ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः औशिजः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अश्विनौ

नासत्याभ्यां बर्हिरिव प्र वृञ्जे स्तोमो इयर्म्यभ्रियेव वातः ।
 यावर्भगाय विमदाय जायां सेनाजुवा न्यूहतू रथेन ॥ 1 ॥
 व्रीळुपत्माभिराशुहेमभिर्वा देवानां वा जूतिभिः शाशदाना ।
 तद्रासभो नासत्या सहस्रमाजा यमस्य प्रधने जिगाय ॥ 2 ॥
 तुग्रो ह भुज्युमश्विनोदमेघे रयिं न कश्चिन्ममृवां अवाहाः ।
 तमूहथुनोभिरात्मन्वतीभिरन्तरिक्षप्रुद्धिरपोदकाभिः ॥ 3 ॥
 तिस्रः क्षपस्त्रिरहातिव्रजद्विर्नासत्या भुज्युमूहथुः पतङ्गैः ।
 समुद्रस्य धन्वन्नार्द्रस्य पारे त्रिभी रथैः शतपद्भिः षळश्वैः ॥ 4 ॥
 अनारम्भणे तदवीरयेथामनास्थाने अग्रभणे समुद्रे ।
 यदश्विना ऊहथुर्भुज्युमस्तं शतारित्रां नावमातस्थिवांसम् ॥ 5 ॥
 यमश्विना ददथुः श्वेतमश्वमघाश्वाय शश्वदित्स्वस्ति ।
 तद्वो दात्रं महि कीर्तेन्यं भूत्पैद्रो वाजी सदमिद्धव्यो अर्यः ॥ 6 ॥
 युवं नरा स्तुवते पञ्जियाय कक्षीवते अरदतं पुरंधिम् ।

| | |
|---|--------|
| कारोत्राच्छफादश्वस्य वृष्णः शतं कुम्भां असिञ्चतं सुरायाः | ॥ 7 ॥ |
| हिमेनाग्निं घ्नंसमवारयेथां पितुमतीमूर्जमस्मा अधत्तम् | |
| ऋबीसे अत्रिमश्विनावनीतमुन्निन्यथुः सर्वगणं स्वस्ति | ॥ 8 ॥ |
| परावृतं नासत्यानुदेथामुञ्चाबुध्रं चक्रथुर्जिह्वबारम् | |
| क्षरन्नापो न पायनाय राये सहस्राय तृष्यते गोतमस्य | ॥ 9 ॥ |
| जुजुरुषो नासत्योत वृत्रिं प्रामुञ्चतं द्वापिमिव च्यवानात् | |
| प्रातिरतं जहितस्यार्युर्दुस्त्रादित्पतिमकृणुतं कनीनाम् | ॥ 10 ॥ |
| तद्वान् नरा शंस्यं राध्यं चाभिष्टिमन्नासत्या वरूथम् | |
| यद्विद्वांसा निधिमिवापगूळहमुद्दर्शतादूपथुर्वन्दनाय | ॥ 11 ॥ |
| तद्वान् नरा सनये दंसं उग्रमाविष्कृणोमि तन्यतुर्न वृष्टिम् | |
| दुध्यद् ह यन्मध्वाथर्वणो वामश्वस्य शीष्णां प्र यदीमुवाच | ॥ 12 ॥ |
| अजोहवीन्नासत्या करा वां महे यामन्पुरुभुजा पुरंधिः | |
| श्रुतं तच्छासुरिव वधिमत्या हिरण्यहस्तमश्विनावदत्तम् | ॥ 13 ॥ |
| आस्रो वृकस्य वर्तिकामभीके युवं नरा नासत्यामुमुक्तम् | |
| उतो क्विं पुरुभुजा युवं ह कृपमाणमकृणुतं विचक्षे | ॥ 14 ॥ |
| चरित्रं हि वेरिवाच्छेदि पर्णमाजा खेलस्य परितक्म्यायाम् | |
| सद्यो जङ्घामायसीं विश्पलायै धने हिते सर्तवे प्रत्यधत्तम् | ॥ 15 ॥ |
| शतं मेषान्वृक्ये चक्षदानमृत्राश्वं तं पितान्धं चकार | |
| तस्मा अक्षी नासत्या विचक्षु आधत्तं दस्त्रा भिषजावन्वन् | ॥ 16 ॥ |
| आ वां रथं दुहिता सूर्यस्य कार्ष्णीवातिष्ठदर्वता जयन्ती | |
| विश्वे देवा अन्वमन्यन्त हृद्भिः समु श्रिया नासत्या सचेथे | ॥ 17 ॥ |
| यदयातं दिवोदासाय वर्तिर्भरद्वाजायाश्विना हर्यन्ता | |
| रेवदुवाह सचनो रथो वां वृषभश्च शिशुमारश्च युक्ता | ॥ 18 ॥ |
| रथिं सुक्षत्रं स्वपत्यमार्युः सुवीर्यं नासत्या वहन्ता | |
| आ जुह्वावीं समनसोप वाजैस्त्रिरहो भागं दधतीमयातम् | ॥ 19 ॥ |
| परिविष्टं जाहुषं विश्वतः सीं सुगोभिर्नक्तमूहथु रजोभिः | |
| विभिन्दुना नासत्या रथेन वि पर्वतां अजरयू अयातम् | ॥ 20 ॥ |
| एकस्या वस्तोरावतं रणाय वशमश्विना सनये सहस्रा | |
| निरहतं दुच्छुना इन्द्रवन्ता पृथुश्रवसो वृषणावरातीः | ॥ 21 ॥ |
| शरस्यं चिदार्चत्कस्यावतादा नीचादुञ्चा चक्रथुः पातवे वाः | |
| शयवे चिन्नासत्या शचीभिर्जसुरये स्तर्यं पिप्यथुर्गाम् | ॥ 22 ॥ |
| अवस्यते स्तुवते कृष्ण्याय ऋजूयते नासत्या शचीभिः | |
| पशुं न नष्टमिव दर्शनाय विष्णाप्वं ददथुर्विश्वकाय | ॥ 23 ॥ |
| दश रात्रीरशिवेना नव द्यूनवन्दं श्रथितमप्स्वन्तः | |

विप्रुतं रेभमुदनि प्रवृक्तमुन्नियथुः सोममिव सुवेण ॥ 24 ॥
 प्र वां दंसांस्यश्विनाववोचमस्य पतिः स्यां सुगवः सुवीरः |
 उत पश्यन्नश्रुवन्दीर्घमायुरस्तमिवेज्जिरिमाणं जगम्याम् ॥ 25 ॥

(25)

117

(म.1, अनु.17)

ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः औशिशः छन्दः त्रिष्टुप् देवता अश्विनौ

मध्वः सोमस्याश्विना मदाय प्रलो होता विवासते वाम् |
 बर्हिष्मती रातिर्विश्रिता गीरिषा यातं नासत्योप् वाजैः ॥ 1 ॥
 यो वामश्विना मनसो जवीयान्नथः स्वश्वो विश आजिगीति |
 येन गच्छथः सुकृतो दुरोणं तेन नरा वर्तिरस्मभ्यं यातम् ॥ 2 ॥
 ऋषिं नरावंहसः पाञ्चजन्यमृबीसादत्रिं मुञ्चथो गुणेन |
 मिन्ता दस्योरशिवस्य माया अनुपूर्वं वृषणा चोदयन्ता ॥ 3 ॥
 अश्वं न गूळहमश्विना दुरेवैर्ऋषिं नरा वृषणा रेभमप्सु |
 सं तं रिणीथो विप्रुतं दंसोभिर्न वां जूर्यन्ति पूर्व्या कृतानि ॥ 4 ॥
 सुषुप्वांसं न निर्ऋतेरुपस्थे सूर्यं न दसा तमसि क्षियन्तम् |
 शुभे रुक्मं न दर्शतं निखातमुदूपथुरश्विना वन्दनाय ॥ 5 ॥
 तद्वां नरा शंस्यं पञ्चियेण कक्षीवता नासत्या परिज्मन् |
 श्फादश्वस्य वाजिनो जनाय शतं कुम्भां असिञ्चतं मधूनाम् ॥ 6 ॥
 युवं नरा स्तुवते कृष्णियाय विष्णाप्वं ददथुर्विश्वकाय |
 घोषायै चित्पितृषदे दुरोणे पतिं जूर्यन्त्या अश्विनावदत्तम् ॥ 7 ॥
 युवं श्यावाय रुशतीमदत्तं महः क्षोणस्याश्विना कण्वाय |
 प्रवाच्यं तद्वृषणा कृतं वां यन्नार्षदाय श्रवो अध्यधत्तम् ॥ 8 ॥
 पुरू वर्षास्यश्विना दधाना नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम् |
 सहस्रसां वाजिनमप्रतीतमहिर्न श्रवस्यं तरुत्रम् ॥ 9 ॥
 एतानि वां श्रवस्या सुदानु ब्रह्माङ्गुषं सदन् रोदस्योः |
 यद्वां पञ्जासो अश्विना हवन्ते यातमिषा च विदुषे च वाजम् ॥ 10 ॥
 सूनोर्मानैनाश्विना गृणाना वाजं विप्राय भुरणा रदन्ता |
 अगस्त्ये ब्रह्मणा वावृधाना सं विश्पलां नासत्यारिणीतम् ॥ 11 ॥
 कुह यान्ता सुष्टुतिं काव्यस्य दिवो नपाता वृषणा शयुत्रा |
 हिरण्यस्येव कलशं निखातमुदूपथुर्दशमे अश्विनाहन् ॥ 12 ॥
 युवं च्यवानमश्विना जरन्तं पुनर्युवानं चक्रथुः शचीभिः |
 युवो रथं दुहिता सूर्यस्य सह श्रिया नासत्यावृणीत ॥ 13 ॥
 युवं तुग्राय पूर्व्येभिरेवैः पुनर्मन्यावभवतं युवाना |
 युवं भुज्युमर्णसो निः समुद्राद्विभिरूहथुर्ऋजेभिरश्वैः ॥ 14 ॥

| | |
|---|--------|
| अजोहवीदश्विना तौग्र्यो वां प्रोळ्हः समुद्रमव्यथिर्जगन्वान् | |
| निष्टमूहथुः सुयुजा रथेन मनोजवसा वृषणा स्वस्ति | ॥ 15 ॥ |
| अजोहवीदश्विना वर्तिका वामास्रो यत्सीममुञ्चतं वृकस्य | |
| वि ज्युषा ययथुः सान्वद्रेजातं विष्वाचो अहतं विषेण | ॥ 16 ॥ |
| शतं मेषान्वृक्ये मामहानं तम्ः प्रणीतमशिवेन पित्रा | |
| आक्षी ऋज्राश्वे अश्विनावधत्तं ज्योतिरन्धायं चक्रथुर्विचक्षे | ॥ 17 ॥ |
| शुनमन्धाय भरमहयत्सा वृकीरश्विना वृषणा नरेति | |
| जारः कनीनइव चक्षदान ऋज्राश्वः शतमेकं च मेषान् | ॥ 18 ॥ |
| मही वामूतिरश्विना मयोभूरुत स्नामं धिष्यया सं रिणीथः | |
| अथा युवामिदहयत्पुरंधिरागच्छतं सीं वृषणाववोभिः | ॥ 19 ॥ |
| अधेनुं दस्रा स्तर्यं विषक्तामपिन्वतं शयवे अश्विना गाम् | |
| युवं शचीभिर्विमदाय जायां न्यूहथुः पुरुमित्रस्य योषाम् | ॥ 20 ॥ |
| यवं वृकेणाश्विना वपन्तेषं दुहन्ता मनुषाय दस्रा | |
| अभि दस्युं बकुरेणा धर्मन्तोरु ज्योतिश्चक्रथुरायीय | ॥ 21 ॥ |
| आथर्वणायाश्विना दधीचेऽश्व्यं शिरः प्रत्यैरयतम् | |
| स वां मधु प्र वोचदतायन्त्वाष्ट्रं यदस्रावपिकक्ष्यं वाम् | ॥ 22 ॥ |
| सदा कवी सुमतिमा चके वां विश्वा धियो अश्विना प्रावतं मे | |
| अस्मे रयिं नासत्या बृहन्तमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथाम् | ॥ 23 ॥ |
| हिरण्यहस्तमश्विना रराणा पुत्रं नरा वधिमत्या अदत्तम् | |
| त्रिधा ह श्यावमश्विना विकस्तमुञ्जीवस एरयतं सुदानू | ॥ 24 ॥ |
| एतानि वामश्विना वीर्याणि प्र पूर्व्याण्यायवोऽवोचन् | |
| ब्रह्म कृण्वन्तो वृषणा युवभ्यां सुवीरासो विदथमा वदेम | ॥ 25 ॥ |

(11)

118

(म.1, अनु.17)

| | | |
|--------------------------------|------------------|---------------|
| ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः औशिजः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अश्विनौ |
|--------------------------------|------------------|---------------|

| | |
|--|-------|
| आ वां रथो अश्विना श्येनपत्वा सुमृळीकः स्ववाँ यात्वर्वाङ् | |
| यो मर्त्यस्य मनसो जवीयान्त्रिवन्धुरो वृषणा वातरंहाः | ॥ 1 ॥ |
| त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेन त्रिचक्रेण सुवृता यातमर्वाक् | |
| पिन्वतं गा जिन्वतमर्वतो नो वर्धयतमश्विना वीरमस्मे | ॥ 2 ॥ |
| प्रवद्यामना सुवृता रथेन दस्राविमं शृणुतं श्लोकमद्रैः | |
| किमङ्ग वां प्रत्यवर्ति गमिष्ठाहुर्विप्रासो अश्विना पुराजाः | ॥ 3 ॥ |
| आ वां श्येनासो अश्विना वहन्तु रथे युक्तास आशवः पतङ्गाः | |
| ये अमुरो दिव्यासो न गृध्रा अभि प्रयो नासत्या वहन्ति | ॥ 4 ॥ |

| | |
|---|----|
| आ वां रथं युवतिस्तिष्ठदत्र जुष्टी नरा दुहिता सूर्यस्य | |
| परि वामश्वा वपुषः पतङ्गा वयो वहन्त्वरुषा अभीके | 5 |
| उद्वन्दनमैरतं दुंसनाभिरुद्रेभं दस्रा वृषणा शचीभिः | |
| निष्टौग्रं पारयथः समुद्रात्पुनश्चवानं चक्रथुर्युवानम् | 6 |
| युवमत्रयेऽवनीताय तप्तमूर्जमोमानमश्विनावधत्तम् | |
| युवं कण्वायापिरिप्ताय चक्षुः प्रत्यधत्तं सुष्टुतिं जुजुषाणा | 7 |
| युवं धेनुं शयवे नाधितायापिन्वतमश्विना पूर्व्याय | |
| अमुञ्चतं वर्तिकामंहसो निः प्रति जङ्गं विश्पलाया अधत्तम् | 8 |
| युवं श्वेतं पेदव इन्द्रजूतमहिहनमश्विनादत्तमश्वम् | |
| जोहूत्रमर्यो अभिभूतिमुग्रं सहस्रसां वृषणं वीङ्गम् | 9 |
| ता वां नरा स्ववसे सुजाता हवामहे अश्विना नाधमानाः | |
| आ न उप वसुमता रथेन गिरौ जुषाणा सुविताय यातम् | 10 |
| आ श्येनस्य जवसा नूतनेनास्मे यातं नासत्या सजोषाः | |
| हवे हि वामश्विना रातहव्यः शश्वत्तमाया उषसो व्युष्टौ | 11 |

(10)

119

(म.1, अनु.17)

| | | |
|--------------------------------|------------|---------------|
| ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः औशिजः | छन्दः जगती | देवता अश्विनौ |
|--------------------------------|------------|---------------|

| | |
|---|---|
| आ वां रथं पुरुमायं मनोजुवं जीराश्वं युज्ञियं जीवसे हुवे | |
| सहस्रकेतुं वनिनं शतद्वसुं श्रुष्टीवानं वरिवोधाम्भि प्रयः | 1 |
| ऊर्ध्वा धीतिः प्रत्यस्य प्रयामन्यधायि शस्मन्त्समयन्त् आ दिशः | |
| स्वदामि घर्मं प्रति यन्त्युतय आ वामूर्जानी रथमश्विनारुहत् | 2 |
| सं यन्मिथः पस्पृधानासो अगमन्त शुभे मखा अमिता जायवो रणे | |
| युवोरुहं प्रवृणे चैकिते रथो यदश्विना वहथः सूरिमा वरम् | 3 |
| युवं भुज्युं भुरमाणं विभिर्गतं स्वयुक्तिभिर्निवहन्ता पितृभ्य आ | |
| यासिष्टं वर्तिवृषणा विजेन्यं दिवोदासाय महिं चेति वामवः | 4 |
| युवोरश्विना वपुषे युवायुजं रथं वाणीं येमतुरस्य शर्ध्यम् | |
| आ वां पतित्वं सख्याय जग्मुषी योषावृणीत् जेन्या युवां पतीं | 5 |
| युवं रेभं परिषूतेरुष्यथो हिमेन घर्मं परितप्तमत्रये | |
| युवं शयोरवसं पिष्यथुर्गवि प्र दीर्घेण वन्दनस्तार्यायुषा | 6 |
| युवं वन्दनं निर्र्गतं जरण्यया रथं न दस्रा करणा समिन्वथः | |
| क्षेत्रादा विप्रं जनथो विपन्यया प्र वामत्र विधत्ते दुंसना भुवत् | 7 |
| अगच्छतं कृपमाणं परावति पितुः स्वस्य त्यजसा निबाधितम् | |
| स्वर्वतीरित ऊतीर्युवोरहं चित्रा अभीके अभवन्नभिष्टयः | 8 |

उत स्या वां मधुमन्मक्षिकारपुन्मदे सोमस्यौशिजो हुवन्यति |
युवं दधीचो मन् आ विवासुथोऽथा शिरः प्रति वामश्व्यं वदत् || 9 ||
युवं पेदवै पुरुवारमश्विना स्पृधां श्वेतं तरुतारं दुवस्यथः |
शर्यैरभिद्युं पृतनासु दुष्टरं चर्कृत्यमिन्द्रमिव चर्षणीसहम् || 10 ||

(12)

120

(म.1, अनु.17)

ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः औशिजः छन्दः गायत्री 1,10-12, ककुप् 2, काविराट् 3, नष्टरूपी 4,
तनुशिराः 5, उष्णिक् 6, विष्टारवृहती 7, कृतिः 8, विराट् 9 देवता अश्विनौ

का राधुद्धोत्राश्विना वां को वां जोष उभयोः |
कथा विधात्यप्रचेताः || 1 ||
विद्वांसाविद्दुरः पृच्छेदविद्वानित्थापरो अचेताः |
नू चिन्नु मर्ते अक्रौ || 2 ||
ता विद्वांसा हवामहे वां ता नो विद्वांसा मन्म वोचेतमद्य |
प्रार्चद्वयमानो युवाकुः || 3 ||
वि पृच्छामि पाक्याः न देवान्वषट्कृतस्याद्भुतस्य दस्रा |
पातं च सह्यसो युवं च रभ्यसो नः || 4 ||
प्र या घोषे भृगवाणे न शोभे यया वाचा यजति पञ्जियो वाम् |
प्रेषयुर्न विद्वान् || 5 ||
श्रुतं गायत्रं तर्कवानस्याहं चिद्धि रिरेभाश्विना वाम् |
आक्षी शुभस्पती दन् || 6 ||
युवं ह्यास्तं महो रन्युवं वा यन्निरतंतंसतम् |
ता नो वसू सुगोपा स्यातं पातं नो वृकादघायोः || 7 ||
मा कस्मै धातमभ्यमित्रिणे नो माकुत्रा नो गृहेभ्यो धेनवो गुः |
स्तनाभुजो अशिश्वीः || 8 ||
दुहीयन्मित्रधितये युवाकु राये च नो मिमीतं वाजवत्यै |
इषे च नो मिमीतं धेनुमत्यै || 9 ||
अश्विनोरसनं रथमन्श्वं वाजिनीवतोः |
तेनाहं भूरि चाकन || 10 ||
अयं समह मा तनूह्या ते जनां अनु |
सोमपेयं सुखो रथः || 11 ||
अधु स्वप्नस्य निर्विदेऽभुञ्जतश्च रेवतः |
उभा ता बसिं नश्यतः || 12 ||

ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः औशिजः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता विश्वे देवाः इन्द्रः वा

| | |
|---|--------|
| कदित्था नूः पात्रं देवयतां श्रवद्भिरो अङ्गिरसां तुरण्यन् | |
| प्र यदानद्विश आ हर्म्यस्योरु क्रंसते अध्वरे यजत्रः | ॥ 1 ॥ |
| स्तम्भीद्ध द्यां स धरुणं प्रुषायदृभुर्वाजाय द्रविणं नरो गोः | |
| अनु स्वजां महिषश्क्षत् त्रां मेनामश्वस्य परि मातरं गोः | ॥ 2 ॥ |
| नक्षद्भवमरुणीः पूर्व्यं राट् तुरो विशामङ्गिरसामनु द्यून् | |
| तक्षद्भ्रं नियुतं तस्तम्भद्द्यां चतुष्पदे नर्याय द्विपादे | ॥ 3 ॥ |
| अस्य मदे स्वयं दा ऋतायापीवृतमुस्त्रियाणामनीकम् | |
| यद्ध प्रसर्गे त्रिककुम्भिवर्तदप द्रुहो मानुषस्य दुरो वः | ॥ 4 ॥ |
| तुभ्यं पयो यत्पितरावनीतां राधः सुरेतस्तुरणं भुरण्यू | |
| शुचि यत्ते रेक्ण आयजन्त सबर्दुघायाः पर्य उस्त्रियायाः | ॥ 5 ॥ |
| अध प्र जज्ञे तुरणिर्ममत्तु प्र रोच्यस्या उषसो न सूरः | |
| इन्दुर्येभिराष्ट स्वेदुहव्यैः सुवेणं सिञ्चञ्जराभि धामं | ॥ 6 ॥ |
| स्विध्मा यद्वनधिदिरपस्यात्सुरो अध्वरे परि रोधना गोः | |
| यद्ध प्रभासि कृत्व्यां अनु द्यूनर्निविशे पश्चिषे तुराय | ॥ 7 ॥ |
| अष्टा महो दिव आदो हरी इह द्यून्नासाहमभि योधान उत्सम् | |
| हरिं यत्ते मन्दिनं दुक्षन्वृधे गोरभसमर्द्रिभिर्वाताप्यम् | ॥ 8 ॥ |
| त्वमायसं प्रति वर्तयो गोर्दिवो अश्मानमुपनीतमृध्वा | |
| कुत्साय यत्र पुरुहूत वन्वञ्छुष्णामन्तैः परियासि वधैः | ॥ 9 ॥ |
| पुरा यत्सूरस्तमसो अपीतेस्तमद्रिवः फलिगं हेतिमस्य | |
| शुष्णास्य चित्परिहितं यदोजो दिवस्परि सुग्रथितं तदादः | ॥ 10 ॥ |
| अनु त्वा मही पाजसी अचक्रे द्यावाक्षामा मदतामिन्द्र कर्मन् | |
| त्वं वृत्रमाशयानं सिरासु महो वज्रेण सिष्वपो वराहुम् | ॥ 11 ॥ |
| त्वमिन्द्र नर्यो यां अवो नृन्तिष्ठा वातस्य सुयुजो वहिष्ठान् | |
| यं ते काव्य उशना मन्दिनं दाद्वृत्रहणं पार्यं ततक्ष वज्रम् | ॥ 12 ॥ |
| त्वं सूरौ हरितौ रामयो नृन्भरञ्चक्रमेतशो नायमिन्द्र | |
| प्रास्यं पारं नवतिं नाव्यानामपि कर्तमवर्तयोऽयज्यन् | ॥ 13 ॥ |
| त्वं नो अस्या इन्द्र दुर्हणायाः पाहि वज्रिवो दुरितादुभीके | |
| प्र नो वाजानृथ्योर् अश्वबुध्यानिषे यन्धि श्रवसे सूनृतायै | ॥ 14 ॥ |
| मा सा ते अस्मत्सुमृतिर्वि दसद्वाजप्रमहः समिषो वरन्त | |

आ नो भज मघवृन्गोष्वर्यो मंहिष्ठास्ते सधुमादः स्याम

॥ 15 ॥

| इति प्रथमाष्टके अष्टमोऽध्यायः समाप्तः ।

| इति प्रथमाष्टकः समाप्तः ।

| अथ द्वितीयाष्टकः |
(प्रथमोऽध्यायः ॥ वर्गाः 1-26)

(15)

122

(म.1, अनु.18)

| | | |
|--------------------------|------------------|--------------------|
| ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता विश्वे देवाः |
|--------------------------|------------------|--------------------|

| | | |
|--|--------|--|
| प्र वः पान्तं रघुमन्यवोऽन्धो यज्ञं रुद्राय मीळहुषै भरध्वम् | | |
| दिवो अस्तोष्यसुरस्य वीरैरिषुध्येव मरुतो रोदस्योः | ॥ 1 ॥ | |
| पत्नीव पूर्वहृतिं वावृधध्या उषासानक्ता पुरुधा विदाने | ॥ 2 ॥ | |
| स्त्रीर्नात्कं व्युतं वसाना सूर्यस्य श्रिया सुदृशी हिरण्यैः | ॥ 3 ॥ | |
| ममत्तु नः परिज्मा वसर्हा ममत्तु वातो अपां वृषण्वान् | ॥ 4 ॥ | |
| शिशीतमिन्द्रापर्वता युवं नस्तन्नो विश्वे वरिवस्यन्तु देवाः | ॥ 5 ॥ | |
| उत त्या मे यशसा श्वेतनायै व्यन्ता पान्तौशिजो हुवध्यै | ॥ 6 ॥ | |
| प्र वो नपातमपां कृणुध्वं प्र मातरा रास्पिनस्यायोः | ॥ 7 ॥ | |
| आ वो रुवण्युमौशिजो हुवध्यै घोषैव शंसमर्जुनस्य नंशे | ॥ 8 ॥ | |
| प्र वः पूष्णे दावन् आं अच्छा वोचेय वसुतातिमग्रेः | ॥ 9 ॥ | |
| श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमोत श्रुतं सद्ने विश्वतः सीम् | ॥ 10 ॥ | |
| श्रोतुं नः श्रोतुरातिः सुश्रोतुः सुक्षेत्रा सिन्धुरद्धिः | ॥ 11 ॥ | |
| स्तुषे सा वां वरुण मित्र रातिर्गवां शता पृक्षयामेषु पञ्चे | ॥ 12 ॥ | |
| श्रुतरथे प्रियरथे दधानाः सद्यः पुष्टिं निरुन्धानासौ अगमन् | ॥ 13 ॥ | |
| अस्य स्तुषे महिमघस्य राधुः सचा सनेम् नहुषः सुवीराः | ॥ 14 ॥ | |
| जनो यः पञ्चेभ्यो वाजिनीवानश्वावतो रथिनो मह्यं सूरिः | ॥ 15 ॥ | |
| जनो यो मित्रावरुणावभिधुगपो न वां सुनोत्यक्षण्याधुक् | ॥ 16 ॥ | |
| स्वयं स यक्ष्मं हृदये नि धत्त आप यदी होत्राभिर्ऋतावा | ॥ 17 ॥ | |
| स ब्राधतो नहुषो दंसुजूतः शर्धस्तरौ नरां गूर्तश्रवाः | ॥ 18 ॥ | |
| विसृष्टरातिर्याति बाळहसृत्वा विश्वासु पृत्सु सदमिच्छूरः | ॥ 19 ॥ | |
| अधु गमन्ता नहुषो हवं सूरैः श्रोता राजानो अमृतस्य मन्द्राः | ॥ 20 ॥ | |
| नभोजुवो यन्निरवस्य राधुः प्रशस्तये महिना रथवते | ॥ 21 ॥ | |
| एतं शर्धं धाम यस्य सूरैरित्यवोचन्दशतयस्य नंशे | ॥ 22 ॥ | |
| द्युम्नानि येषु वसुताती रारन्विश्वे सन्वन्तु प्रभृथेषु वाजम् | ॥ 23 ॥ | |
| मन्दांमहे दशतयस्य धासेद्विर्यत्पञ्च बिभ्रतो यन्त्यन्ना | ॥ 24 ॥ | |
| किमिष्टाश्व इष्टरश्मिरेत ईशानासुस्तरुष ऋञ्जते नृन् | ॥ 25 ॥ | |
| हिरण्यकर्णं मणिग्रीवमर्णस्तन्नो विश्वे वरिवस्यन्तु देवाः | ॥ 26 ॥ | |
| अर्यो गिरः सद्य आ जग्मुषीरोस्त्राश्चाकन्तूभयैष्वस्मे | ॥ 27 ॥ | |
| चत्वारो मा मशर्शारस्य शिश्वस्त्रयो राज्ञ आयवसस्य जिष्णोः | ॥ 28 ॥ | |

ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता उषाः

| | |
|---|--------|
| पृथू रथो दक्षिणाया अयोज्यैर्न देवासै अमृतासो अस्थुः | |
| कृष्णादुदस्थादुर्यां विहायाश्चिकित्सन्ती मानुषाय क्षयाय | ॥ 1 ॥ |
| पूर्वा विश्वस्माद्भुवनादबोधि जयन्ती वाजं बृहती सनुत्री | |
| उच्चा व्यख्यद्युवतिः पुनर्भूरोषा अगन्प्रथमा पूर्वहृतौ | ॥ 2 ॥ |
| यदुद्य भागं विभजासि नृभ्य उषो देवि मर्त्यत्रा सुजाते | |
| देवो नो अत्र सविता दमूना अनागसो वोचति सूर्याय | ॥ 3 ॥ |
| गृहंगृहमहना यात्यच्छा द्विवेदिवे अधि नामा दधाना | |
| सिषासन्ती द्योतना शश्वदागादग्रमग्रमिद्भजते वसूनाम् | ॥ 4 ॥ |
| भगस्य स्वसा वरुणस्य जामिरुषः सूनृते प्रथमा जरस्व | |
| पश्चा स दध्या यो अघस्य धाता जयैम् तं दक्षिणया रथेन | ॥ 5 ॥ |
| उदीरतां सूनृता उत्पुरंधीरुदग्रयः शुशुचानासो अस्थुः | |
| स्पार्हा वसूनि तमसापंगूळहाविष्कृण्वन्त्युषसो विभातीः | ॥ 6 ॥ |
| अपान्यदेत्यभ्यंन्यदेति विषुरूपे अहनी सं चरेते | |
| परिक्षितोस्तमो अन्या गुर्हाकरद्यौदुषाः शोशुचता रथेन | ॥ 7 ॥ |
| सदृशीरुद्य सदृशीरिदु श्वो दीर्घं संचन्ते वरुणस्य धामं | |
| अनवद्यास्त्रिंशत् योजनान्येकैका क्रतुं परि यन्ति सद्यः | ॥ 8 ॥ |
| जानत्यह्नः प्रथमस्य नाम शुक्रा कृष्णादजनिष्ट श्वितीची | |
| ऋतस्य योषा न मिनाति धामाहरहर्निष्कृतमाचरन्ती | ॥ 9 ॥ |
| कन्यैव तन्वां शाशदानां एषि देवि देवमियक्षमाणम् | |
| संस्मर्यमाना युवतिः पुरस्तादाविर्वक्षांसि कृणुषे विभाती | ॥ 10 ॥ |
| सुसंकाशा मातृमृष्टेव योषाविस्तन्वं कृणुषे दृशे कम् | |
| भद्रा त्वमुषो वितरं व्युच्छ न तत्तै अन्या उषसो नशन्त | ॥ 11 ॥ |
| अश्वावतीर्गोमतीर्विश्ववारा यतमाना रश्मिभिः सूर्यस्य | |
| परा च यन्ति पुनरा च यन्ति भद्रा नाम वहमाना उषासः | ॥ 12 ॥ |
| ऋतस्य रश्मिमनुयच्छमाना भद्रंभद्रं क्रतुमस्मासु धेहि | |
| उषो नो अद्य सुहवा व्युच्छास्मासु रायो मघवत्सु च स्युः | ॥ 13 ॥ |

ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता उषाः

| | |
|--|--------|
| उषा उच्छन्तीं समिधाने अग्रा उद्यन्त्सूर्यं उर्विया ज्योतिरश्रेत् | |
| देवो नो अत्रं सविता न्वर्थं प्रासावीद्विपत्र चतुष्पदित्यै | ॥ 1 ॥ |
| अमिनती दैव्यानि व्रतानि प्रमिनती मनुष्या युगानि | |
| ईयुषीणामुपमा शश्वतीनामायतीनां प्रथमोषा व्यद्यौत् | ॥ 2 ॥ |
| एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि ज्योतिर्वसाना समना पुरस्तात् | |
| ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजानतीव न दिशो मिनाति | ॥ 3 ॥ |
| उपो अदर्शि शुन्ध्यवो न वक्षो नोधाईवाविरकृत प्रियाणि | |
| अद्भ्यसन्न संसृतो बोधयन्ती शश्वत्तमागात्पुनरेयुषीणाम् | ॥ 4 ॥ |
| पूर्वं अर्धे रजसो अत्यस्य गवां जनित्र्यकृत प्र केतुम् | |
| व्यु प्रथते वितरं वरीय ओभा पृणन्तीं पित्रोरुपस्था | ॥ 5 ॥ |
| एवेदेषा पुरुतमा दृशे कं नाजामिं न परि वृणक्ति जामिम् | |
| अरेपसा तन्वाइ शाशदाना नार्धादीषते न महो विभाती | ॥ 6 ॥ |
| अभ्रातेव पुंस एति प्रतीची गर्तारुगिव सनये धर्नानाम् | |
| जायेव पत्य उशती सुवासा उषा हस्त्रेव नि रिणीते अप्सः | ॥ 7 ॥ |
| स्वसा स्वस्त्रे ज्यायस्यै योनिमारैगपैत्यस्याः प्रतिचक्ष्यैव | |
| व्युच्छन्तीं रश्मिभिः सूर्यस्याञ्जङ्गे समनगाईव वाः | ॥ 8 ॥ |
| आसां पूर्वासामहसु स्वसृणामपरा पूर्वाभ्येति पश्चात् | |
| ताः प्रब्रवन्नव्यसीर्नूनमस्मे रेवदुच्छन्तु सुदिना उषासः | ॥ 9 ॥ |
| प्र बोधयोषः पृणतो मघोन्यबुध्यमानाः पणयः ससन्तु | |
| रेवदुच्छ मघवद्भ्यो मघोनि रेवत्स्तोत्रे सूनते जारयन्ती | ॥ 10 ॥ |
| अवेयमश्वैद्यवतिः पुरस्ताद्युङ्गे गवामरुणानामनीकम् | |
| वि नूनमुच्छादसति प्र केतुर्गृहंगृहमुप तिष्ठाते अग्निः | ॥ 11 ॥ |
| उत्ते वर्यश्चिद्वसृतेरपत्नरंश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ | |
| अमा सते वहसि भूरिं वाममुषो देवि दाशुषे मर्त्याय | ॥ 12 ॥ |
| अस्तोद्वं स्तोम्या ब्रह्मणा मेऽवीवधध्वमुशतीरुषासः | |
| युष्माकं देवीरवसा सनेम सहस्रिणं च शतिनं च वाजम् | ॥ 13 ॥ |

(7)

125

(म.1, अनु.18)

ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः

छन्दः त्रिष्टुप् 1-5, जगती 6-7

देवता स्वनयस्य दानस्तुतिः

| | |
|--|-------|
| प्राता रत्नं प्रातरित्वा दधाति तं चिकित्त्वान्प्रतिगृह्या नि धत्ते | |
| तेन प्रजां वर्धयमान् आयुं रायस्पोषेण सचते सुवीरः | ॥ 1 ॥ |
| सुगुरंसत्सुहिरुण्यः स्वश्वो बृहदस्मै वयु इन्द्रो दधाति | |
| यस्त्वायन्तं वसुना प्रातरित्वा मुक्षीजयेव पदिमुत्सिनति | ॥ 2 ॥ |
| आर्यमद्य सुकृतं प्रातरिच्छन्निष्टेः पुत्रं वसुमता रथेन | |
| अंशोः सुतं पायय मत्सरस्य क्षयद्वीरं वर्धय सूनृताभिः | ॥ 3 ॥ |
| उप क्षरन्ति सिन्धवो मयोभुव ईजानं च युक्ष्यमाणं च धेनवः | |
| पृणन्तं च पपुंरिं च श्रवस्यवो घृतस्य धारा उप यन्ति विश्वतः | ॥ 4 ॥ |
| नाकस्य पृष्ठे अधितिष्ठति श्रितो यः पृणाति स ह देवेषु गच्छति | |
| तस्मा आपो घृतमर्षन्ति सिन्धवस्तस्मा इयं दक्षिणा पिन्वते सदा | ॥ 5 ॥ |
| दक्षिणावतामिदिमानि चित्रा दक्षिणावतां दिवि सूर्यासः | |
| दक्षिणावन्तो अमृतं भजन्ते दक्षिणावन्तः प्र तिरन्तु आयुः | ॥ 6 ॥ |
| मा पृणन्तो दुरितमेन आरन्मा जारिषुः सूरयः सुव्रतासः | |
| अन्यस्तेषां परिधिरस्तु कश्चिदपृणन्तमभि सं यन्तु शोकाः | ॥ 7 ॥ |

(7)

126

(म.1, अनु.18)

ऋषिः कक्षीवान् दैर्घतमसः 1-5, स्वनयः भावयव्यः 6, रोमशा 7

छन्दः त्रिष्टुप् 1-5, अनुष्टुप् 6-7

देवता स्वनयः भावयव्यः 1-5,7 रोमशा 6

| | |
|--|-------|
| अमन्दान्तसोमान् भरे मनीषा सिन्धावधिं क्षियतो भाव्यस्य | |
| यो मे सहस्रममिमीत स्वानतूतो राजा श्रव इच्छमानः | ॥ 1 ॥ |
| शतं राज्ञो नार्धमानस्य निष्काञ्छतमश्वान्प्रयतान्तसद्य आदम् | |
| शतं कक्षीवाँ असुरस्य गोनां दिवि श्रवोऽजरुमा ततान | ॥ 2 ॥ |
| उप मा श्यावाः स्वनयेन दत्ता वधूमन्तो दश रथासो अस्थुः | |
| षष्टिः सहस्रमनु गव्यमागात्सनत्कक्षीवाँ अभिपित्वे अह्वाम् | ॥ 3 ॥ |
| चत्वारिंशदशरथस्य शोणाः सहस्रस्याग्रे श्रेणिं नयन्ति | |
| मदच्युतः कृशनावतो अत्यान्कक्षीवन्त उदमृक्षन्त पज्राः | ॥ 4 ॥ |
| पूर्वामनु प्रयतिमा ददे वस्त्रीन्युक्ताँ अष्टावरिधायसो गाः | |
| सुबन्धवो ये विश्याइव् वा अनस्वन्तः श्रव एषन्त पज्राः | ॥ 5 ॥ |

आगधिता परिगधिता या कशीकेव जङ्गहे । ददाति मह्यं यादुरी याशूनां भोज्यां शता ॥ 6 ॥

उपोप मे परां मृश मा मे दभ्राणि मन्यथाः । सर्वाहमस्मि रोमशा गन्धारीणामिवाविका ॥ 7 ॥

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः छन्दः अत्यष्टिः 1-5,7-11, अतिधृतिः 6 देवता अग्निः

अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसुं सूनुं सहसो जातवैदसं विप्रं न जातवैदसम् ।
य ऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा । घृतस्य विभ्राष्टिमनु वष्टि शोचिषाजुह्वानस्य सर्पिषः ॥ 1 ॥
यजिष्ठं त्वा यजमाना हुवेम् ज्येष्ठमङ्गिरसां विप्र मन्मभिर्विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः ।
परिज्मानमिव द्यां होतारं चर्षणीनाम् । शोचिष्केशं वृषणं यमिमा विशः प्रावन्तु जूतये विशः ॥ 2 ॥
स हि पुरू चिदोजसा विरुक्मता दीद्यानो भवति द्रुहन्तरः परशुर्न द्रुहन्तरः ।
वीळु चिद्यस्य समृतौ श्रुवद्वनेव यत्स्थिरम् । निष्पहमाणो यमते नायते धन्वासहा नायते ॥ 3 ॥
दृळ्हा चिदस्मा अनु दुर्यथा विदे तेजिष्ठाभिररणिभिर्दाष्ट्यवसेऽग्रये दाष्ट्यवसे ।
प्र यः पुरूणि गाहते तक्षद्वनेव शोचिषा । स्थिरा चिदन्ना नि रिणात्योजसा नि स्थिराणि चिदोजसा ॥ 4 ॥
तमस्य पृक्षमुपरासु धीमहि नक्तं यः सुदर्शतरो दिवातरादप्रायुषे दिवातरात् ।
आदस्यायुर्ग्रभणवद्वीळु शर्म न सूनवे । भक्तमभक्तमवो व्यन्तो अजरा अग्रयो व्यन्तो अजराः ॥ 5 ॥
स हि शर्धो न मारुतं तुविष्णिप्रस्वतीषूर्वरास्विष्टनिरातनास्विष्टनिः ।
आदब्ध्वान्यादुदिर्यज्ञस्य केतुरर्हणा ।
अध स्मास्य हर्षतो हर्षीवतो विश्वे जुषन्त पन्थां नरः शुभे न पन्थाम् ॥ 6 ॥
द्विता यदीं क्रीस्तासो अभिद्यवो नमस्यन्त उप्वोचन्त भृगवो मध्नन्तो दाशा भृगवः ।
अग्निरीशे वसूनां शुचिर्यो धर्णिरेषाम् । प्रियाँ अपिधौर्वनिषीष्ट मेधिर आ वनिषीष्ट मेधिरः ॥ 7 ॥
विश्वासां त्वा विशां पतिं हवामहे सर्वासां समानं दम्पतिं भुजे सत्यगिर्वाहसं भुजे ।
अतिथिं मानुषाणां पितुर्न यस्यासया । अमी च विश्वे अमृतासु आ वयो हव्या देवेष्वा वयः ॥ 8 ॥
त्वमग्ने सहसा सहन्तमः शुष्मिन्तमो जायसे देवतातये रयिर्न देवतातये ।
शुष्मिन्तमो हि ते मदो द्युम्निन्तम उत क्रतुः । अध स्मा ते परिं चरन्त्यजर श्रुष्टीवानो नाजर ॥ 9 ॥
प्र वो महे सहसा सहस्वत उष्वुर्धे पशुषे नाग्रये स्तोमो बभूत्वग्रये ।
प्रति यदीं हविष्मान्विश्वासु क्षासु जोगुवे । अग्रे रेभो न जरत ऋषूणां जूर्णिर्होत ऋषूणाम् ॥ 10 ॥
स नो नेदिष्ठं ददृशान् आ भराग्रे देवेभिः सचनाः सुचेतुना महो रायः सुचेतुना ।
महिं शविष्ठ नस्कृधि संचक्षे भुजे अस्यै । महिं स्तोतृभ्यो मघवन्त्सुवीर्यं मथीरुग्रो न शवसा ॥ 11 ॥

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः छन्दः अत्यष्टिः देवता अग्निः

अयं जायत मनुषो धरीमणि होता यजिष्ठ उशिजामनु व्रतमग्निः स्वमनु व्रतम् ।
विश्वश्रुष्टिः सखीयते रयिरिव श्रवस्यते । अदब्धो होता नि षंदद्विळस्पदे परिवीत इळस्पदे ॥ 1 ॥
तं यज्ञसाधुमपि वातयामस्यृतस्य पथा नमसा हविष्मता देवताता हविष्मता ।
स न ऊर्जामुपाभृत्या कृपा न जूर्यति । यं मातरिश्वा मनवे परावतो देवं भाः परावतः ॥ 2 ॥
एवेन सद्यः पर्यति पार्थिवं मुहुर्गी रेतो वृषभः कनिर्क्रददध्रेतः कनिर्क्रदत् ।
शतं चक्षाणो अक्षभिर्देवो वनेषु तुर्वणिः । सद्यो दधान् उपरेषु सानुष्वग्निः परेषु सानुषु ॥ 3 ॥

स सुक्रतुः पुरोहितो दमैदमेऽग्रिर्यज्ञस्याध्वरस्य चेतति क्रत्वा यज्ञस्य चेतति |
 क्रत्वा वेधा इषूयते विश्वा जातानि पस्पशे । यतो घृतश्रीरतिथिरजायत वह्निर्वेधा अजायत || 4 ||
 क्रत्वा यदस्य तविषीषु पृञ्चतेऽग्रेरवैण मरुतां न भोज्यैषिरायु न भोज्या |
 स हि ष्मा दानमिन्वति वसूनां च मज्मना । स नस्त्रासते दुरितादभिहुतः शंसादुघादभिहुतः || 5 ||
 विश्वो विहाया अरतिर्वसुर्दधे हस्ते दक्षिणे त्रणिर्न शिश्रथच्छ्रवस्यया न शिश्रथत् |
 विश्वस्मा इदिषुधुते देवत्रा हव्यमोहिषे । विश्वस्मा इत्सुकृते वारमृण्वत्यग्निर्द्वारा व्यृण्वति || 6 ||
 स मानुषे वृजने शंतमो हितोऽग्रिर्यज्ञेषु जेन्यो न विश्पतिः प्रियो यज्ञेषु विश्पतिः |
 स हव्या मानुषाणामिळा कृतानि पत्यते । स नस्त्रासते वरुणस्य धूर्तेर्महो देवस्य धूर्तेः || 7 ||
 अग्निं होतारमीळते वसुधितिं प्रियं चेतिष्ठमरतिं न्यैरिरे हव्यवाहं न्यैरिरे |
 विश्वायुं विश्ववेदसं होतारं यजतं क्विवम् । देवासो रण्वमवसे वसूयवो गीर्भो रण्वं वसूयवः || 8 ||

(11)

129

(म.1, अनु.19)

| | | |
|--------------------------|----------------------------------|--------------------------|
| ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः | छन्दः-अत्यष्टिः 1-7,10, | अतिशक्करी 8-9, अष्टिः 11 |
| | देवता इन्द्रः 1-5,7-11, इन्दुः 6 | |

यं त्वं रथमिन्द्र मेधसातयेऽपाका सन्तमिषिर प्रणयसि प्रानवद्य नयसि |
 सद्यश्चित्तमभिष्टये करो वशश्च वाजिनम् । सास्माकमनवद्य तूतुजान वेधसामिमां वाचं न वेधसाम् || 1 ||
 स श्रुधि यः स्मा पृतनासु कासु चिद्वक्षाय्य इन्द्र भरंहूतये नृभिरसि प्रतूर्तये नृभिः |
 यः शूरैः स्वशः सनिता यो विप्रैर्वाजं तरुता । तमीशानास इरधन्त वाजिनं पृक्षमत्यं न वाजिनम् || 2 ||
 दस्मो हि ष्मा वृषणं पिन्वसि त्वचं कं चिद्यावीररुं शूर मर्त्यं परिवृणाक्षि मर्त्यम् |
 इन्द्रोत तुभ्यं तद्विवे तद्द्रायु स्वयशसे । मित्राय वोचं वरुणाय सप्रथः सुमृळीकाय सप्रथः || 3 ||
 अस्माकं व इन्द्रमुश्मसीष्टये सखायं विश्वायुं प्रासहं युजं वाजेषु प्रासहं युजम् |
 अस्माकं ब्रह्मोतयेऽवा पृत्सुषु कासु चित् |
 नहि त्वा शत्रुः स्तरते स्तृणोषि यं विश्वं शत्रुं स्तृणोषि यम् || 4 ||
 नि षू न्मातिमतिं कयस्य चित्तेजिष्ठाभिररणिभिर्नोतिभिर्ग्राभिर्गुग्रीतिभिः |
 नेषि णो यथा पुरानेनाः शूर मन्यसे । विश्वानि पुरोरपं पषि वह्निरासा वह्निर्नो अच्छ |
 प्र तद्वोचेयं भव्यायेन्द्वे हव्यो न य इषवान्मन्म् रेजति रक्षोहा मन्म् रेजति |
 स्वयं सो अस्मदा निदो वधैरजेत दुर्मतिम् । अव स्रवेदघशंसोऽवतरमव क्षुद्रमिव स्रवेत् || 6 ||
 वनेम् तद्वोत्रया चितन्त्या वनेमं रयिं रयिवः सुवीर्यं रण्वं सन्तं सुवीर्यम् |
 दुर्मन्मानं सुमन्तुभिरेमिषा पृचीमहि । आ सत्याभिरिन्द्रं द्युम्रहृतिभिर्यजत्रं द्युम्रहृतिभिः || 7 ||
 प्रप्रा वो अस्मे स्वयशोभिरूती परिवर्ग इन्द्रो दुर्मतीनां दरीमन्दुर्मतीनाम् |
 स्वयं सा रिष्यध्वै या न उपेषे अत्रैः । हतेमसन्न वक्षति क्षिप्ता जूर्णिर्न वक्षति || 8 ||
 त्वं न इन्द्र राया परीणसा याहि पथां अनेहसा पुरो याह्यरक्षसा |
 सचस्व नः पराक आ सचस्वास्तमीक आ । पाहि नो दूरादारादभिष्टिभिः सदा पाह्यभिष्टिभिः || 9 ||
 त्वं न इन्द्र राया तरूषसोग्रं चित्त्वा महिमा संक्षदवसे म्हे मित्रं नावसे |
 ओजिष्ठ त्रातरवित्ता रथं कं चिदमर्त्य । अन्यमस्मद्रिषेः कं चिदद्रिवो रिरिक्षन्तं चिदद्रिवः || 10 ||

पाहि न इन्द्र सुष्टुत सिद्धोऽवयाता सदमिदुर्मतीनां देवः सन्दुर्मतीनाम्

हन्ता पापस्य रक्षसस्त्राता विप्रस्य मार्वतः

अथा हि त्वां जनिता जीर्जनद्वसो रक्षोहणं त्वा जीर्जनद्वसो

॥ 11 ॥

(10)

130

(म.1, अनु.19)

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः

छन्दः अत्यष्टिः 1-9, त्रिष्टुप् 10

देवता इन्द्रः

एन्द्रं याह्युपं नः परावतो नायमच्छां विदथानीव सत्पतिरस्तं राजेव सत्पतिः

हवामहे त्वा वयं प्रयस्वन्तः सुते सचा । पुत्रासो न पितरं वाजसातये मंहिष्ठं वाजसातये

॥ 1 ॥

पिबा सोममिन्द्र सुवानमद्रिभिः कोशेन सिक्तमवतं न वसंगस्तातृषाणो न वसंगः

मदाय हर्यतायं ते तुविष्टमाय धार्यसे । आ त्वा यच्छन्तु हरितो न सूर्यमहा विश्वेव सूर्यम्

॥ 2 ॥

अविन्दद्विवो निहितं गुहां निधिं वेनं गर्भं परिवीतमश्मन्यन्ते अन्तरश्मनि

व्रजं वज्री गर्वामिव सिषासन्नङ्गिरस्तमः । अपावृणोदिषु इन्द्रः परीवृता द्वार इषुः परीवृताः

॥ 3 ॥

दादृहाणो वज्रमिन्द्रो गर्भस्त्योः क्षद्वैव तिग्ममसनाय सं श्यदहिहत्याय सं श्यत्

संविष्वान ओजसा शवोभिरिन्द्र मज्जना । तष्टैव वृक्षं वनिनो नि वृश्चसि परश्वेव नि वृश्चसि

॥ 4 ॥

त्वं वृथा नद्य इन्द्र सर्तवेऽच्छां समुद्रमसृजो रथाँइव वाजयतो रथाँइव

इत ऊतीरयुञ्जत समानमर्थमक्षितम् । धेनूरिव मनवे विश्वदोहसो जनाय विश्वदोहसः

॥ 5 ॥

इमां ते वाचं वसुयन्त आयवो रथं न धीरः स्वपा अतक्षिषुः सुम्नाय त्वामतक्षिषुः

शुम्भन्तो जेन्यं यथा वाजेषु विप्र वाजिनम् । अत्यमिव शर्वसे सातये धना विश्वा धनानि सातये

॥ 6 ॥

भिनत्पुरो नवतिमिन्द्र पूरवे दिवोदासाय महिं दाशुषे नृतो वज्रेण दाशुषे नृतो

अतिथिग्वाय शम्बरं गिरेरुग्रो अवाभरत् । महो धनानि दयमान् ओजसा विश्वा धनान्योजसा

॥ 7 ॥

इन्द्रः समत्सु यजमानमार्यं प्रावद्विश्वेषु शतमूतिराजिषु स्वर्मीळहेष्वाजिषु

मनवे शासदव्रतान्त्वचं कृष्णामरन्धयत् । दक्षन्न विश्वं ततृषाणमोषति न्यर्शसानमोषति

॥ 8 ॥

सूरश्चक्रं प्र वृहज्जात ओजसा प्रपित्वे वाचमरुणो मुषायतीशान आ मुषायति

उशाना यत्परावतोऽजगन्नूतये कवे । सुम्नानि विश्वा मनुषेव तुर्वणिरहा विश्वेव तुर्वणिः

॥ 9 ॥

स नो नव्येभिवृषकर्मन्वुक्थैः पुरां दर्तः पायुभिः पाहि श्मैः

दिवोदासेभिरिन्द्र स्तवानो वावृधीथा अहोभिरिव द्यौः

॥ 10 ॥

(7)

131

(म.1, अनु.19)

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः

छन्दः अत्यष्टिः

देवता इन्द्रः

इन्द्राय हि द्यौरसुरो अनम्रतेन्द्राय मही पृथिवी वरीमभिर्द्युमसाता वरीमभिः

इन्द्रं विश्वे सजोषसो देवासो दधिरे पुरः । इन्द्राय विश्वा सर्वनानि मानुषा रातानि सन्तु मानुषा

॥ 1 ॥

विश्वेषु हि त्वा सर्वनेषु तुञ्जते समानमेकं वर्षमण्यवः पृथक् स्वः सनिष्यवः पृथक्

तं त्वा नावं न पर्षणिं शूषस्य धुरि धीमहि । इन्द्रं न यज्ञैश्चितयन्त आयवः स्तोमैभिरिन्द्रमायवः

॥ 2 ॥

वि त्वा ततस्त्रे मिथुना अवस्यवो व्रजस्य साता गव्यस्य निःसृजः सक्षन्त इन्द्र निःसृजः

यद्व्यन्ता द्वा जना स्वश्यन्ता समूहसि । आविष्करिर्कृद्वृषणं सचाभुवं वज्रमिन्द्र सचाभुवं

॥ 3 ॥

विदुष्टे अस्य वीर्यस्य पूरवः पुरो यदिन्द्र शारदीरवातिरः सासहानो अवातिरः

शासस्तमिन्द्र मर्त्यमयज्युं शवसस्पते । महीममुष्णाः पृथिवीमिमा अपो मन्दसान इमा अपः

॥ 4 ॥

आदित्तं अस्य वीर्यस्य चर्किरन्मदैषु वृषन्नुशिजो यदाविथ सखीयतो यदाविथ

चकर्थं कारमैभ्यः पृतनासु प्रवन्तवे । ते अन्यामन्यां नद्यं सनिष्णत श्रवस्यन्तः सनिष्णत

॥ 5 ॥

उतो नो अस्या उषसो जुषेत् ह्यर्कस्य बोधि हविषो हवीमभिः स्वर्षाता हवीमभिः

यदिन्द्र हन्तवे मृधो वर्षा वज्रिञ्चिकेतसि । आ मे अस्य वेधसो नवीयसो मन्मं श्रुधि नवीयसः

॥ 6 ॥

त्वं तमिन्द्र वावृधानो अस्मयुरमित्रयन्तं तुविजात् मर्त्यं वज्रेण शूर मर्त्यम्
जहि यो नो अघायति शृणुष्व सुश्रवस्तमः । रिष्टं न यामन्नप भूतु दुर्मतिर्विश्वाप भूतु दुर्मतिः ॥ 7 ॥

(6)

132

(म.1, अनु.19)

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः छन्दः अत्यष्टिः देवता इन्द्रः 1-5, इन्द्रापर्वतौ 6

त्वया वयं मघवन्पूर्व्ये धनु इन्द्रत्वोताः सासह्याम पृतन्यतो वनुयाम वनुष्यतः
नेदिष्टे अस्मिन्नहन्यधि वोचा नु सुन्वते । अस्मिन्यज्ञे वि चयेमा भरे कृतं वाज्यन्तो भरे कृतम् ॥ 1 ॥
स्वर्जेषे भरं आप्रस्य वकमन्युषुर्बुधुः स्वस्मिन्नज्ञसि क्राणस्य स्वस्मिन्नज्ञसि
अहन्नन्द्रो यथा विदे शीर्षाशीर्षोपवाच्यः । अस्मन्ना ते सुध्यक्सन्तु रातयो भद्रा भद्रस्य रातयः ॥ 2 ॥
तत्तु प्रयः प्रलथा ते शुशुक्नं यस्मिन्यज्ञे वारमकृण्वत् क्षयमृतस्य वारसि क्षयम्
वि तद्रोचैरधं द्वितान्तः पश्यन्ति रश्मिभिः । स घा विदे अन्विन्द्रो गवेषणो बन्धुक्षिब्धो गवेषणः ॥ 3 ॥
नू इत्था ते पूर्वथा च प्रवाच्यं यदङ्गिरोभ्योऽवृणोरप व्रजमिन्द्र शिक्षन्नप व्रजम्
ऐभ्यः समान्या दिशास्मभ्यं जेषि योत्सि च । सुन्वद्भ्यो रन्धया कं चिद्व्रतं हृणायन्तं चिद्व्रतम् ॥ 4 ॥
सं यज्जनान् क्रतुभिः शूर ईक्षयद्धने हिते तरुषन्त श्रवस्यवः प्र यक्षन्त श्रवस्यवः
तस्मा आयुः प्रजावदिद्वाधे अर्चन्त्योर्जसा । इन्द्र ओक्यं दिधिषन्त धीतयो देवा अच्छा न धीतयः ॥ 5 ॥
युवं तमिन्द्रापर्वता पुरोयुधा यो नः पृतन्यादप तंतमिद्धतं वज्रेण तंतमिद्धतम्
दूरे चत्तायं च्छंत्सद्गहनं यदिनक्षत् । अस्माकं शत्रून्परि शूर विश्वतो दुर्मा दर्षोष्ट विश्वतः ॥ 6 ॥

(7)

133

(म.1, अनु.19)

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः छन्दः त्रिष्टुप् 1, अनुष्टुप् 2-4, गायत्री 5, धृतिः 6, अत्यष्टिः 7 देवता इन्द्रः

उभे पुनामि रोदसी ऋतेन द्रुहो दहामि सं महीरनिन्द्राः
अभिब्लग्य यत्र हता अमित्रा वैलस्थानं परि तृळ्हा अशोरन् ॥ 1 ॥
अभिब्लग्या चिदद्रिवः शीर्षा यातुमतीनाम् । छिन्धि वटूरिणा पदा महावटूरिणा पदा ॥ 2 ॥
अवासां मघवज्जहि शर्धो यातुमतीनाम् । वैलस्थानके अर्मके महावैलस्थे अर्मके ॥ 3 ॥
यासां तिस्रः पञ्चाशतोऽभिब्लुङ्गैरुपावपः । तत्सु ते मनायति त्कत्सु ते मनायति ॥ 4 ॥
पिशाङ्गभृष्टिमभृणं पिशाचिमिन्द्र सं मृण । सर्वं रक्षो नि बर्हय ॥ 5 ॥
अवर्मह इन्द्र दादृहि श्रुधी नः शूशोच हि द्यौः क्षा न भीषा अद्रिवो घृणान्न भीषा अद्रिवः
शुष्मिन्तमो हि शुष्मिर्भिवधैरुग्रेभिरीयसे । अपूरुषघ्नो अप्रतीत शूर सत्त्वाभिस्त्रिस्रैः शूर सत्त्वाभिः ॥ 6 ॥
वनोति हि सुन्वन्क्षयं परीणसः सुन्वानो हि ष्मा यजत्यव द्विषो देवानामव द्विषः
सुन्वान इत्सिषासति सहस्रा वाज्यवृतः । सुन्वानायेन्द्रो ददात्याभुवं रयिं ददात्याभुवं ॥ 7 ॥

(6)

134

(म.1, अनु.20)

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः छन्दः अत्यष्टिः 1-5, अष्टिः 6 देवता वायुः

आ त्वा जुवो रारहाणा अभि प्रयो वायो वहन्त्विह पूर्वपीतयेसोमस्य पूर्वपीतये
ऊर्ध्वा ते अनु सूनृता मनस्तिष्ठतु जानती । नियुत्वता रथेना याहि दावने वायो मुखस्य दावने ॥ 1 ॥
मन्दन्तु त्वा मन्दिनो वायुविन्दवोऽस्मत्क्राणासुः सुकृता अभिद्यवोगोभिः क्राणा अभिद्यवः
यद्धं क्राणा इरथ्यै दक्षं सचन्त ऊतयः । सध्रीचीना नियुतो दावने धियु उप ब्रुवत ई धियः ॥ 2 ॥
वायुयुङ्क्ते रोहिता वायुररुणा वायू रथे अजिरा धुरिवोळ्हवे वहिष्ठा धुरि वोळ्हवे
प्र बोधया पुरंधिं जार आ संसतीमिव । प्र चक्षय रोदसी वासयोषसुः श्रवसे वासयोषसः ॥ 3 ॥

तुभ्यमुषासः शुचयः परावति भद्रा वस्त्रा तन्वते दंसु रश्मिषु चित्रा नव्येषु रश्मिषु
 तुभ्यं धेनुः संबर्दुघा विश्वा वसूनि दोहते । अर्जनयो मरुतो वक्षणाभ्यो दिव आ वक्षणाभ्यः ॥ 4 ॥
 तुभ्यं शुक्रासः शुचयस्तुरण्यवो मदेषूग्रा इषणन्त भुवण्यपामिषन्त भुवणि
 त्वां त्सारी दसमानो भर्गमीद्रे तक्ववीये । त्वं विश्वस्माद्भुवनात्पासि धर्मणासुर्यात्पासि धर्मणा ॥ 5 ॥
 त्वं नो वायवेषामपूर्व्यः सोमानां प्रथमः पीतिमर्हसि सुतानां पीतिमर्हसि
 उतो विहुत्मतीनां विशां ववर्जुषीणाम् । विश्वा इत्ते धेनवो दुह आशिरं घृतं दुहत आशिरम् ॥ 6 ॥

(9)

135

(म.1, अनु.20)

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः छन्दः अत्यष्टिः 1-6,9, अष्टिः 7-8 देवता वायुः 1-3,9, इन्द्रवायू 4-8

स्तीर्णं बर्हिरुपं नो याहि वीतये सहस्रेण नियुतां नियुत्वतेश्तिनीभिर्नियुत्वते
 तुभ्यं हि पूर्वपीतये देवा देवाय येमिरे । प्र ते सुतासो मधुमन्तो अस्थिरन्मदायु क्रत्वे अस्थिरन् ॥ 1 ॥
 तुभ्यायं सोमः परिपूतो अद्रिभिः स्पार्हा वसानः परि कोशमर्षति शुक्रावसानो अर्षति
 तवायं भाग आयुषु सोमो देवेषु हूयते । वह वायो नियुतो याह्यस्मयुर्जुषाणो याह्यस्मयुः ॥ 2 ॥
 आ नो नियुद्धिः श्तिनीभिरध्वरं सहस्रिणीभिरुपं याहि वीतये वायोहव्यानि वीतये
 तवायं भाग ऋत्विगुः सरश्मिः सूर्ये सचा । अध्वर्युभिर्भरमाणा अयंसत् वायो शुक्रा अयंसत् ॥ 3 ॥
 आ वां रथो नियुत्वान्वक्षदवसेऽभि प्रयांसि सुधितानि वीतये वायोहव्यानि वीतये
 पिबतं मध्वो अन्धसः पूर्वपेयं हि वां हितम् । वायवा चन्द्रेण राधसा गतमिन्द्रश्च राधसा गतम् ॥ 4 ॥
 आ वां धियो ववृत्युरध्वरा उपेममिन्दुं मर्मजन्त वाजिनमाशुमत्यं नवाजिनम्
 तेषां पिबतमस्मयु आ नो गन्तमिहोत्या । इन्द्रवायू सुतानामद्रिभिर्युवं मदाय वाजदा युवम् ॥ 5 ॥
 इमे वां सोमा अप्स्वा सुता इहाध्वर्युभिर्भरमाणा अयंसत् वायोशुक्रा अयंसत्
 एते वामभ्यसृक्षत तिरः पवित्रमाशवः । युवायवोऽति रोमाण्यव्यया सोमासो अत्यव्यया ॥ 6 ॥
 अति वायो ससतो याहि शश्वतो यत्र ग्रावा वदति तत्र गच्छतंगृहमिन्द्रश्च गच्छतम्
 वि सूनृता ददृशे रीयते घृतमा पूर्णया नियुतां याथो अध्वरमिन्द्रश्च याथो अध्वरम् ॥ 7 ॥
 अत्राह तद्वहेथे मध्व आर्हुतिं यमश्वत्थमुपतिष्ठन्त जायवोऽस्मे तेसन्तु जायवः
 साकं गावः सुवते पच्यन्ते यवो न ते वायु उप दस्यन्ति धेनवो नाप दस्यन्ति धेनवः ॥ 8 ॥
 इमे ये ते सु वायो बाह्वोजसोऽन्तर्नदी ते पतयन्त्युक्षणो महि ब्राधन्त उक्षणः
 धन्वञ्चिद्ये अनाशवो जीराश्चिदगिरौकसः । सूर्यस्येव रश्मयो दुर्नियन्तवो हस्तयोर्दुर्नियन्तवः ॥ 9 ॥

(7)

136

(म.1, अनु.20)

ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः छन्दः अत्यष्टिः 1-6 त्रिष्टुप् 7 देवता मित्रावरुणौ 1-5, लिङ्गोक्ताः 6-7

प्र सु ज्येष्ठं निचिराभ्यां बृहन्नमो हव्यं मतिं भरता मृळ्यद्भ्यां स्वादिष्टं मृळ्यद्भ्यां
 ता सम्राजा घृतासुती यज्ञेयज्ञ उपस्तुता । अथैनोः क्षत्रं न कुतश्चनाधृषे देवत्वं नू चिदाधृषे ॥ 1 ॥
 अर्दशि गातुरुरवे वरीयसी पन्थां ऋतस्य समयंस्त रश्मिभिश्चक्षुर्भर्गस्य रश्मिभिः
 द्युक्षं मित्रस्य सादनमर्युम्णो वरुणस्य च । अथा दधाते बृहदुक्थ्यं १ वय उपस्तुत्यं बृहद्वयः ॥ 2 ॥
 ज्योतिष्मतीमर्दितिं धारयत्क्षितिं स्वर्वतीमा संचेते दिवेदिवे जागृवांसां दिवेदिवे
 ज्योतिष्मत्क्षत्रमाशाते आदित्या दानुनस्पती । मित्रस्तयोर्वरुणो यातयज्जनोऽर्यमा यातयज्जनः ॥ 3 ॥
 अयं मित्राय वरुणाय शंतमः सोमो भूत्ववृपानेष्वार्भगो देवो देवेष्वार्भगः
 तं देवासो जुषेरत् विश्वे अद्य सजोषसः । तथा राजाना करथो यदीमह ऋतावाना यदीमहे ॥ 4 ॥
 यो मित्राय वरुणायविधुज्जनोऽनुवाणं तं परि पातो अंहसो दाश्वान्सं मर्तमंहसः

तमर्यमाभि रक्षत्यजूयन्तमनु व्रतम् । उक्थैर्य एनोः परिभूषति व्रतं स्तोमैराभूषति व्रतम् ॥ 5 ॥
नमो दिवे बृहते रोदसीभ्यां मित्राय वोचं वरुणाय मीळहुषेसुमृळीकाय मीळहुषे
इन्द्रमग्निमुप स्तुहि द्युक्षमर्यमणं भगम् । ज्योग्जीवन्तः प्रजया सचेमहि सोमस्योती सचेमहि ॥ 6 ॥
ऊती देवानां व्यमिन्द्रवन्तो मंसीमहि स्वयंशसो मरुद्भिः
अग्निमित्रो वरुणः शर्म यंसन्तदश्याम मघवानो वयं च ॥ 7 ॥

। इति द्वितीयाष्टके प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ।

(द्वितीयोऽध्यायः ॥ वर्गाः 1-27)

(3)

137

(म. 1, अनु. 20)

| | | |
|---|---------------|-------------------|
| ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः | छन्दः अतिशकरी | देवता मित्रावरुणौ |
| सुषुमा यातमद्रिभिर्गोश्रीता मत्सुरा इमे सोमासो मत्सुरा इमे | | |
| आ राजाना दिविस्पृशास्मत्रा गन्तमुप नः। इमे वां मित्रावरुणा गवाशिरः सोमाः शुक्रा गवाशिरः ॥ 1 ॥ | | |
| इम आ यातमिन्दवः सोमासो दध्याशिरः सुतासो दध्याशिरः | | |
| उत वामुषसो बुधि साकं सूर्यस्य रश्मिभिः । सुतो मित्राय वरुणाय पीतये चारुऋताय पीतये ॥ 2 ॥ | | |
| तां वां धेनुं न वासरीमंशुं दुहन्त्यद्रिभिः सोमं दुहन्त्यद्रिभिः | | |
| अस्मत्रा गन्तमुप नोऽर्वाञ्चा सोमपीतये। अयं वां मित्रावरुणा नृभिः सुतः सोम आ पीतये सुतः ॥ 3 ॥ | | |

(4)

138

(म. 1, अनु. 20)

| | | |
|---|-----------------|------------|
| ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः | छन्दः अत्यष्टिः | देवता पूषा |
| प्रप्र पूषास्तुविजातस्य शस्यते महित्वमस्य त्वसो न तन्दते स्तोत्रमस्य न तन्दते | | |
| अर्चामि सुमयन्नहमन्त्यूतिं मयोभुवम् । विश्वस्य यो मन आयुयुवे मुखो देव आयुयुवे मुखः ॥ 1 ॥ | | |
| प्र हि त्वा पूषन्नजिरं न यामनि स्तोमैभिः कृण्व ऋणवो यथा मृधु उष्ट्रो न पीपरो मृधः | | |
| हुवे यत्त्वा मयोभुवं देवं सुख्याय मर्त्यैः । अस्माकमाङ्गुषान्दुग्धिनस्कृधि वाजेषु द्युग्धिनस्कृधि ॥ 2 ॥ | | |
| यस्य ते पूषन्सुख्ये विपुन्यवः क्रत्वा चित्सन्तोऽवसा बुभुञ्जिर इति क्रत्वा बुभुञ्जिरे | | |
| तामनु त्वा नवीयसीं नियुतं राय ईमहे । अहेळमान उरुशंसु सरी भव वाजैवाजे सरी भव ॥ 3 ॥ | | |
| अस्या ऊ षु ण उषं सातये भुवोऽहेळमानो ररिवाँ अजाश्व श्रवस्यतामजाश्व | | |
| ओ षु त्वा ववृतीमहि स्तोमैभिर्दस्म साधुभिः। नहि त्वा पूषन्नतिमन्य आघृणे न ते सुख्यमपहुवे ॥ 4 ॥ | | |

(11)

139

(म. 1, अनु. 20)

| | | | |
|---|-----------------|----------------------------------|--------------------------|
| ऋषिः परुच्छेपः दैवोदासिः | छन्दः अत्यष्टिः | 1-4,6-10, बृहती 5, त्रिष्टुप् 11 | देवता विश्वे देवाः 1,11, |
| मित्रावरुणौ 2, अश्विनौ 3-5, इन्द्रः 6, अग्निः 7, मरुतः 8, इन्द्राग्नी 9, बृहस्पतिः 10 | | | |

| | | |
|---|--|--|
| अस्तु श्रौषट् पुरो अग्निं धिया दधु आ नु तच्छधो दिव्यं वृणीमह इन्द्रवायू वृणीमहे | | |
| यद्धं क्राणा विवस्वति नाभां सुंदायि नव्यसी। अध प्र सू न उषं यन्तु धीतयो देवाँ अच्छा न धीतयः ॥ 1 ॥ | | |
| यद्ध त्यन्मित्रावरुणावृतादध्याददाथे अनृतं स्वेनं मन्युना दक्षस्य स्वेनं मन्युना | | |
| युवोरित्थाधि सद्मस्वपश्याम हिरण्ययम् । धीभिश्चन मनसा स्वेभिरक्षभिः सोमस्य स्वेभिरक्षभिः ॥ 2 ॥ | | |
| युवां स्तोमैभिर्देव्यन्तो अश्विनाश्रावर्यन्तइव श्लोकमायवो युवां हव्याभ्याञ्चयवः | | |
| युवोवश्वा अधि श्रियः पृक्षश्च विश्ववेदसा । पृषायन्ते वां पवयो हिरण्यये रथे दस्त्रा हिरण्यये ॥ 3 ॥ | | |
| अर्चेति दस्त्रा व्युशनाकमृण्वथो युञ्जते वां रथयुजो दिविष्टिष्वध्वस्मानो दिविष्टिषु | | |
| अधि वां स्थाम वन्धुरे रथे दस्त्रा हिरण्यये । पथेव यन्तावनुशासता रजोऽङ्गसा शासता रजः ॥ 4 ॥ | | |
| शचीभिर्नः शचीवसु दिवा नक्तं दशस्यतम् । मा वां रातिरुप दसत्कदा चनास्मद्वातिः कदा चन ॥ 5 ॥ | | |
| वृषन्निन्द्र वृषपाणांसु इन्दव इमे सुता अद्रिषुतास उद्भिदस्तुभ्यं सुतास उद्भिदः | | |
| ते त्वा मन्दन्तु दावनै महे चित्राय राधसे गीभर्गवाहः स्तवमान आ गहि सुमृच्छीको न आ गहि ॥ 6 ॥ | | |
| ओ षु णो अग्ने शृणुहि त्वमीळितो देवेभ्यो ब्रवसि यज्ञियेभ्यो राजभ्यो यज्ञियेभ्यः | | |

यद्ध त्यामङ्गिरोभ्यो धेनुं देवा अदत्तन । वि तां दुहे अर्यमा कर्तरी सचाँ एष तां वेद मे सचाँ ॥ 7 ॥
 मो षु वोँ अस्मदभि तानि पौँस्या सना भूवन्द्युम्रानि मोत जारिषुरस्मत्पुरोत जारिषुः ।
 यद्धश्चित्रं युगेयुगे नव्यं घोषादमर्त्यम् । अस्मासु तन्मरुतो यच्च दुष्टरं दिधृता यच्च दुष्टरम् ॥ 8 ॥
 दध्यङ् ह मे जनुषं पूर्वो अङ्गिराः प्रियमैधुः कण्वो अत्रिर्मनुवदुस्ते मे पूर्वे मनुवदुः ।
 तेषां देवेष्वार्यतिरस्माकं तेषु नाभयः । तेषां पदेन मह्या नमे गिरेन्द्राग्री आ नमे गिरा ॥ 9 ॥
 होता यक्षद्विनो वन्त वार्यं बृहस्पतिर्यजति वेन उक्षभिः पुरुवारैभिरुक्षभिः ।
 जगृभ्मा दूरआदिशं श्लोकमद्रेरधु त्मना । अधारयदररिन्दानि सुक्रतुः पुरु सद्भानि सुक्रतुः ॥ 10 ॥
 ये देवासो दिव्येकादश स्थ पृथिव्यामध्येकादश स्थ ।
 अप्सुक्षितो महिनैकादश स्थ ते देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् ॥ 11 ॥

(13)

140

(म. 1, अनु. 21)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः छन्दः जगती 1-9, 11, त्रिष्टुप् जगती वा 10 त्रिष्टुप्, 12-13 देवता अग्निः

वेदिषदे प्रियधामाय सुद्युते धासिमिव प्र भरा योनिमग्रये ।
 वस्त्रैणेव वासया मन्मना शुचिं ज्योतीरथं शुक्रवर्णं तमोहनम् ॥ 1 ॥
 अभि द्विजन्मा त्रिवृदन्नमृज्यते संवत्सरे वावृधे जग्धमी पुनः ।
 अन्यस्यासा जिह्या जेन्यो वृषा न्यश्न्येन वनिनो मृष्ट वारणः ॥ 2 ॥
 कृष्णप्रुतो वेविजे अस्य सक्षिता उभा तरेते अभि मात्रा शिशुम् ।
 प्राचाजिह्वं ध्वसयन्तं तृषुच्युत्तमा साच्यं कुपयं वर्धनं पितुः ॥ 3 ॥
 मुमुक्ष्वोर् मनवे मानवस्यते रघुदुवः कृष्णसीतास ऊ जुवः ।
 असमना अजिरासो रघुष्यदो वार्तजूता उप युज्यन्त आशवः ॥ 4 ॥
 आदस्य ते ध्वसयन्तो वृथेरते कृष्णमभ्वं महि वर्षः करिक्रतः ।
 यत्सीं महीम्वनिं प्राभि मर्मशदभिश्चसन्स्तनयन्नेति नानदत् ॥ 5 ॥
 भूषन्न योऽधि बभूषु नम्रते वृषेव पलीरभ्येति रोरुवत् ।
 आज्ञायमानस्तन्वश्च शुम्भते भीमो न शृङ्गा दविधाव दुर्गभिः ॥ 6 ॥
 स संस्तिरो विष्टिरः सं गृभायति जानन्नेव जानतीनत्य आ शये ।
 पुनर्वर्धन्ते अपि यन्ति देव्यमन्यद्वर्षः पित्रोः कृण्वते सचाँ ॥ 7 ॥
 तमगुवः केशिनीः सं हि रैभिर ऊर्ध्वास्तस्थुर्मृषीः प्रायवे पुनः ।
 तासां जरां प्रमुञ्चन्नेति नानददसु परं जनयञ्जीवमस्तृतम् ॥ 8 ॥
 अधीवासं परि मातू रिहन्नहं तुविग्रेभिः सत्वाभिर्याति वि ज्रयः ।
 वयो दधत्पुद्वते रेरिहत्सदानु श्येनीं सचते वर्तनीरहं ॥ 9 ॥
 अस्माकमग्रे मघवत्सु दीदिह्यधु श्वसीवान्वृषभो दमूनाः ।
 अवास्या शिशुमतीरदीदेवमेव युत्सु परिजभुराणः ॥ 10 ॥
 इदमग्रे सुधितं दुधतादधि प्रियादु चिन्मन्मनः प्रयो अस्तु ते ।
 यत्ते शुक्रं तन्वोर् रोचते शुचि तेनास्मभ्यं वनसे रत्नमा त्वम् ॥ 11 ॥
 रथाय नावमुत नो गृहाय नित्यारित्रां पद्वतीं रास्यग्रे ।

अस्माकं वीरां उत नो मृधोनो जनांश्च या पारयाच्छर्म या च ॥ 12 ॥

अभी नो अग्र उक्थमिञ्जुगुर्या द्यावाक्षामा सिन्धवश्च स्वर्गताः |

गव्यं यव्यं यन्तो दीर्घाहेषु वरमरुण्यो वरन्त ॥ 13 ॥

(13)

141

(म. 1, अनु. 21)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः जगती 1-11, त्रिष्टुप् 12-13

देवता अग्निः

बळित्था तद्वपुषे धायि दर्शतं देवस्य भर्गः सहस्रो यतो जनि |

यदीमुप ह्वरते साधते मतिर्ऋतस्य धेना अनयन्त सुस्रुतः ॥ 1 ॥

पृक्षो वपुः पितुमान्नित्य आ शये द्वितीयमा सप्तशिवासु मातृषु |

तृतीयमस्य वृषभस्य दोहसे दशप्रमतिं जनयन्त योषणः ॥ 2 ॥

निर्यदीं बुधान्महिषस्य वर्षस ईशानासः शर्वसा क्रन्त सूरयः |

यदीमनु प्रदिवो मध्वं आधुवे गुहा सन्तं मातरिश्वा मथायति ॥ 3 ॥

प्र यत्पितुः परमात्रीयते पर्या पृक्षुधो वीरुधो दंसु रोहति |

उभा यदस्य जनुषं यदिन्वत् आदिद्यविष्ठो अभवद्धृणा शुचिः ॥ 4 ॥

आदिन्मातृराविशद्यास्वा शुचिरहिंस्यमान उव्या वि वावृधे |

अनु यत्पूर्वा अरुहत्सनाजुवो नि नव्यसीष्ववरासु धावते ॥ 5 ॥

आदिद्धोतारं वृणते दिविष्टिषु भर्गमिव पपृचानासं ऋञ्जते |

देवान्यत्क्रत्वा मृज्मना पुरुष्टुतो मर्तुं शंसं विश्वधा वेति धायसे ॥ 6 ॥

वि यदस्थाद्यजुतो वातचोदितो ह्यारो न वक्त्रा जरणा अनाकृतः |

तस्य पत्मन्दुक्षुषः कृष्णजहसः शुचिजन्मनो रज आ व्यध्वनः ॥ 7 ॥

रथो न यातः शिकभिः कृतो द्यामङ्गैर्भिररुषेभिरीयते |

आदस्य ते कृष्णासो दक्षि सूरयः शूरस्येव त्वेषथादीषते वयः ॥ 8 ॥

त्वया ह्यग्रे वरुणो धृतव्रतो मित्रः शाशद्रे अर्यमा सुदानवः |

यत्सीमनु क्रतुना विश्वथा विभुररात्र नेमिः परिभूरजायथाः ॥ 9 ॥

त्वमग्रे शशमानाय सुन्वते रत्नं यविष्ठ देवतातिमिन्वसि |

तं त्वा नु नव्यं सहस्रो युवन्वयं भगं न कारे महिरत्न धीमहि ॥ 10 ॥

अस्मे रथिं न स्वर्थं दर्मनसं भगं दक्षं न पपृचासि धर्णसिम् |

रश्मौरिव यो यमति जन्मनी उभे देवानां शंसमृत आ च सुक्रतुः ॥ 11 ॥

उत नः सुद्योत्मा जीराश्वो होता मन्द्रः शृणवञ्चन्द्ररथः |

स नो नेषुत्रेषतमैरमूरोऽग्निर्वामं सुवितं वस्यो अच्छ ॥ 12 ॥

अस्ताव्यग्निः शिमीवद्भिरकैः साम्राज्याय प्रतरं दधानः ।

अमी च ये मघवानो वयं च मिहं न सूरौ अति निष्टतन्युः

॥ 13 ॥

(13)

142

(म. 1, अनु. 21)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः छन्दः अनुष्टुप् देवता इध्मः समिद्धः अग्निः वा 1, तनूनपात् 2, नराशंसः 3, इळः 4, बहः 5, देवीद्वारः 6, उषासानक्ता 7, दैव्यौ होतारौ प्रचेतसौ 8, तिस्रः देव्यः सरस्वतीळाभारत्यः 9, त्वष्टा 10, वनस्पतिः 11, स्वाहाकृतयः 12, इन्द्रः 13

समिद्धो अग्र आ वह देवाँ अद्य यतस्रुचे । तन्तुं तनुष्व पूर्व्यं सुतसौमाय दाशुषे ॥ 1 ॥
घृतवन्तमुप मासि मधुमन्तं तनूनपात् । यज्ञं विप्रस्य मावतः शशमानस्य दाशुषः ॥ 2 ॥
शुचिः पावको अबद्धतो मध्वा यज्ञं मिमिक्षति । नराशंसस्त्रिरा दिवो देवो देवेषु यज्ञियः ॥ 3 ॥
ईळितो अग्र आ वहेन्द्रं चित्रमिह प्रियम् । इयं हि त्वा मतिर्ममाच्छां सुजिह्व वच्यते ॥ 4 ॥
स्तृणानासो यतस्रुचो बहिर्यज्ञे स्वध्वरे । वृञ्जे देवव्यचस्तमिन्द्राय शर्म सप्रथः ॥ 5 ॥
वि श्रयन्तामृतावृधः प्रयै देवेभ्यो महीः । पावकासः पुरुस्पृहो द्वारो देवीरसश्चतः ॥ 6 ॥
आ भन्दमाने उपाके नक्तोषासां सुपेशसा । यद्वा ऋतस्य मात्रा सीदतां बहुरा सुमत् ॥ 7 ॥
मन्द्रजिह्वा जुगुर्वणी होतारा दैव्या कवी । यज्ञं नो यक्षतामिमं सिध्ममद्य दिविस्पृशम् ॥ 8 ॥
शुचिर्देवेष्वपता होत्रा मरुत्सु भारती । इळा सरस्वती मही बहः सीदन्तु यज्ञियाः ॥ 9 ॥
तन्नस्तुरीपमद्धतं पुरु वारं पुरु त्मना । त्वष्टा पोषाय वि ष्यतु राये नाभा नो अस्म्युः ॥ 10 ॥
अवसृजन्नुप त्मना देवान्यक्षि वनस्पते । अग्रिर्हव्या सुषूदति देवो देवेषु मेधिरः ॥ 11 ॥
पूषण्वते मरुत्वते विश्वदैवाय वायवे । स्वाहा गायत्रवेपसे हव्यमिन्द्राय कर्तन ॥ 12 ॥
स्वाहाकृतान्या गृह्युप हव्यानि वीतये । इन्द्रा गहि श्रुधी हवं त्वां हवन्ते अध्वरे ॥ 13 ॥

(8)

143

(म. 1, अनु. 21)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः छन्दः जगती 1-7, त्रिष्टुप् 8 देवता अग्निः

प्र तव्यसीं नव्यसीं धीतिमग्रये वाचो मतिं सहसः सुनवे भरे ।
अपां नपाद्यो वसुभिः सह प्रियो होता पृथिव्यां न्यसीददृत्वियः ॥ 1 ॥
स जायमानः परमे व्योमन्याविरग्निरभवन्मातरिश्वने ।
अस्य क्रत्वा समिधानस्य मज्मना प्र द्यावा शोचिः पृथिवी अरोचयत् ॥ 2 ॥
अस्य त्वेषा अजरा अस्य भानवः सुसंदशः सुप्रतीकस्य सुद्युतः ।
भात्वक्षसो अत्यक्तुर्न सिन्धवोऽग्रे रैजन्ते असंसन्तो अजराः ॥ 3 ॥
यमैरिरे भृगवो विश्ववैदसं नाभा पृथिव्या भुवनस्य मज्मना ।
अग्निं तं गीभर्नुहि स्व आ दमे य एको वस्वो वरुणो न राजति ॥ 4 ॥

न यो वराय मरुतामिव स्वनः सेनेव सृष्टा दिव्या यथाशनिः |
 अग्निर्जम्भैस्तिगितैरन्ति भवति योधो न शत्रून्त्स वना नृञ्जते || 5 ||
 कुविन्नो अग्निरुचयस्य वीरसद्वसुष्कुविद्वसुभिः काममावरत् |
 चोदः कुवित्तुतुज्यात्सातये धियुः शुचिप्रतीकं तमया धिया गृणे || 6 ||
 घृतप्रतीकं व ऋतस्य धूर्षदमग्निं मित्रं न समिधान ऋञ्जते |
 इन्धानो अक्रो विदथेषु दीद्यच्छुक्रवर्णामुदुं नो यंसते धियम् || 7 ||
 अप्रयुच्छन्नप्रयुच्छद्विरग्रे शिवेभिर्नः पायुभिः पाहि शग्मैः |
 अदब्धेभिरदृपितेभिरिष्टेऽनिमिषद्विः परि पाहि नो जाः || 8 ||

(7)

144

(म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|------------|--------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः जगती | देवता अग्निः |
|-----------------------|------------|--------------|

एति प्र होता व्रतमस्य माययोर्ध्वा दधानः शुचिपेशसं धियम् |
 अभि स्रुचः क्रमते दक्षिणावृतो या अस्य धामं प्रथमं ह निसंते || 1 ||
 अभीमृतस्य दोहना अनूषत् योनौ देवस्य सदने परीवृताः |
 अपामुपस्थे विभृतो यदावसदध स्वधा अंधयद्याभिरीयते || 2 ||
 युयूषत्ः सर्वयसा तदिद्वपुः समानमर्थं वितरित्रता मिथः |
 आदीं भगो न हव्यः समस्मदा वोळ्हुर्न रश्मीन्त्समयंस्तु सारथिः || 3 ||
 यमीं द्वा सर्वयसा सपर्यतः समाने योना मिथुना समौकसा |
 दिवा न नक्तं पलितो युवाजनि पुरू चरन्नजरो मानुषा युगा || 4 ||
 तमीं हिन्वन्ति धीतयो दश त्रिंशो देवं मर्तास ऊतये हवामहे |
 धनोरधिं प्रवत् आ स ऋण्वत्यभिव्रजद्विर्वयुना नवाधित || 5 ||
 त्वं ह्यग्रे दिव्यस्य राजसि त्वं पार्थिवस्य पशुपाईव् त्मना |
 एनीं त एते बृहती अभिश्रिया हिरण्ययी वक्करी बर्हिराशाते || 6 ||
 अग्रे जुषस्व प्रति हर्यं तद्वचो मन्द्र स्वधाव् ऋतजात् सुक्रतो |
 यो विश्वतः प्रत्यङ्गुसिं दर्शतो रणवः संदृष्टौ पितुमाँइव् क्षयः || 7 ||

(5)

145

(म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|------------------------------|--------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः जगती 1-4, त्रिष्टुप् 5 | देवता अग्निः |
|-----------------------|------------------------------|--------------|

तं पृच्छता स जंगामा स वैदु स चिकित्वाँ ईयते स न्वीयते |
 तस्मिन्त्सन्ति प्रशिषस्तस्मिन्निष्टयुः स वाजस्य शवसः शुष्मिणस्पतिः || 1 ||
 तमित्पृच्छन्ति न सिमो वि पृच्छति स्वेनेव धीरो मनसा यदग्रभीत् |
 न मृष्यते प्रथमं नापरं वचोऽस्य क्रत्वा सचते अप्रदृपितः || 2 ||
 तमिद्वच्छन्ति जुह्वंस्तमर्वतीवश्चान्येकः शृणवद्वचांसि मे |
 पुरुषैषस्ततुरिर्यज्ञसाधनोऽच्छिद्रोतिः शिशुरादत्त सं रभः || 3 ||
 उपस्थायं चरति यत्समारत सद्यो जातस्तत्सार युज्येभिः |
 अभि श्वान्तं मृशते नान्द्ये मुदे यदीं गच्छन्त्युशतीरपिष्टितम् || 4 ||

स ई मृगो अप्यो वनगुरुप त्वच्युपमस्यां नि धायि |
व्यब्रवीद्वयुना मर्त्येभ्योऽग्निवद्वा ऋतचिद्धि सत्यः || 5 ||

(5)

146

(म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|------------------|--------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अग्निः |
|-----------------------|------------------|--------------|

त्रिमूर्धानं सप्तरश्मिं गृणीषेऽनूनमग्निं पित्रोरुपस्थे |
निषत्तमस्य चरतो ध्रुवस्य विश्वा दिवो रौचिनापप्रिवांसम् || 1 ||
उक्षा महां अभि ववक्ष एने अजरस्तस्थावितऊतिऋष्वः |
उर्व्याः पदो नि दधाति सानौ रिहन्यूधो अरुषासो अस्य || 2 ||
समानं वत्समभि संचरन्ती विष्वग्धेनू वि चरतः सुमेके |
अनपवृज्यां अध्वनो मिमाने विश्वान्केतां अधि महो दधाने || 3 ||
धीरांसः पदं क्वयो नयन्ति नाना हृदा रक्षमाणा अजुर्यम् |
सिषासन्तः पर्यपश्यन्त सिन्धुमाविरैभ्यो अभवत्सूर्यो नृन् || 4 ||
दिदृक्षेण्यः परि काष्ठासु जेन्य ईळेन्यो महो अर्भाय जीवसे |
पुरुत्रा यदभवत्सूरहैभ्यो गर्भेभ्यो मघवा विश्वदर्शतः || 5 ||

(5)

147

(म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|------------------|--------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अग्निः |
|-----------------------|------------------|--------------|

कथा ते अग्ने शुचयन्त आयोर्ददाशुर्वाजेभिराशुष्णाणाः |
उभे यत्तोके तनये दधाना ऋतस्य सामन्नणयन्त देवाः || 1 ||
बोधा मे अस्य वचसो यविष्ट मंहिष्ठस्य प्रभृतस्य स्वधावः |
पीयति त्वो अनु त्वो गृणाति वन्दारुस्ते तन्वं वन्दे अग्ने || 2 ||
ये पायवो मामतेयं ते अग्ने पश्यन्तो अन्धं दुरितादरक्षन् |
रुरक्ष तान्तसुकृतो विश्ववेदा दिप्सन्त इद्विपवो नाह देभुः || 3 ||
यो नो अग्ने अररिवां अघायुररातीवा मर्चयति द्वयेन |
मन्त्रो गुरुः पुनरस्तु सो अस्मा अनु मृक्षीष्ट तन्वं दुरुक्तैः || 4 ||
उत वा यः सहस्य प्रविद्वान्मर्तो मर्तं मर्चयति द्वयेन |
अतः पाहि स्तवमान स्तुवन्तमग्ने मार्किर्नो दुरिताय धायीः || 5 ||

(5)

148

| | | |
|-----------------------|------------------|--------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अग्निः |
|-----------------------|------------------|--------------|

मथीद्यदीं विष्टो मातरिश्वा होतारं विश्वाप्सुं विश्वदैव्यम् |
नि यं दधुर्मनुष्यासु विक्षु स्वर्णं चित्रं वपुषे विभावंम् || 1 ||
ददानमिन्न ददभन्त मन्माग्निर्वरुथं मम तस्य चाकन् |

| | |
|--|-------|
| जुषन्त विश्वान्यस्यु कर्मोपस्तुतिं भरमाणस्य कारोः | ॥ 2 ॥ |
| नित्ये चिन्नु यं सदेने जगृभ्रे प्रशस्तिभिर्दधिरे यज्ञियासः | |
| प्र सू नयन्त गृभयन्त इष्टावश्वासो न रथ्यो रारहाणाः | ॥ 3 ॥ |
| पुरूणि दुस्मो नि रिणाति जम्भैराद्रौचते वन् आ विभावा | |
| आदस्य वातो अनु वाति शोचिरस्तुर्न शर्यामसनामनु द्यून् | ॥ 4 ॥ |
| न यं रिपवो न रिषण्यवो गर्भे सन्तं रेषणा रेषयन्ति | |
| अन्धा अपश्या न दभन्नभिख्या नित्यास ई प्रेतारो अरक्षन् | ॥ 5 ॥ |

(5) **149** (म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|--------------|--------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः विराट् | देवता अग्निः |
|-----------------------|--------------|--------------|

| | |
|--|-------|
| महः स राय एषते पतिर्दन्निन इनस्य वसुनः पद आ । उप ध्रजन्तमद्रयो विधन्नित् | ॥ 1 ॥ |
| स यो वृषा नरां न रोदस्योः श्रवोभिरस्ति जीवपीतसर्गः । प्र यः संस्राणः शिश्रीत योनौ | ॥ 2 ॥ |
| आ यः पुरं नामणीमदीदेदत्यः क्विर्नभन्योर् नार्वा । सूरु न रुरुक्काञ्छतात्मा | ॥ 3 ॥ |
| अभि द्विजन्मा त्री रौचनानि विश्वा रजांसि शुशुचानो अस्थात् | |
| होता यजिष्ठो अपां सुधस्थे | ॥ 4 ॥ |
| अयं स होता यो द्विजन्मा विश्वा दुधे वार्याणि श्रवस्या । मर्तो यो अस्मै सुतुको ददाश | ॥ 5 ॥ |

(3) **150** (म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|---------------|--------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः उष्णिक् | देवता अग्निः |
|-----------------------|---------------|--------------|

| | |
|---|-------|
| पुरु त्वा दाश्वान्वोचेऽरिरग्रे तव स्विदा । तोदस्येव शरण आ महस्य | ॥ 1 ॥ |
| व्यनिनस्य धनिनः प्रहोषे चिदररुषः । कदा चन प्रजिगतो अदैवयोः | ॥ 2 ॥ |
| स चन्द्रो विप्र मत्यो महो व्राधन्तमो दिवि । प्रप्रेते अग्रे वनुषः स्याम | ॥ 3 ॥ |

(9) **151** (म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|------------|---------------------------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः जगती | देवता मित्रः 1, मित्रावरुणौ 2-9 |
|-----------------------|------------|---------------------------------|

| | |
|---|-------|
| मित्रं न यं शिम्या गोषु गव्यवः स्वाध्यो विदथे अप्सु जीजनन् | |
| अरेजेतां रोदसी पाजसा गिरा प्रति प्रियं यजतं जनुषामवः | ॥ 1 ॥ |
| यद्ध त्यद्वां पुरुमीळहस्य सोमिन्ः प्र मित्रासो न दधिरे स्वाभुवः | |
| अध क्रतुं विदतं गातुमर्चत उत श्रुतं वृषणा पस्त्यावतः | ॥ 2 ॥ |
| आ वां भूषन्क्षितयो जन्म रोदस्योः प्रवाच्यं वृषणा दक्षसे महे | |
| यदीमृतायु भरथो यदर्वते प्र होत्रया शिम्या वीथो अध्वरम् | ॥ 3 ॥ |
| प्र सा क्षितिरसुर या महि प्रिय ऋतावानावृतमा घोषथो बृहत् | |
| युवं दिवो बृहतो दक्षमाभुवं गां न धुर्युप युञ्जाथे अपः | ॥ 4 ॥ |
| मही अत्र महिना वारमृण्वथोऽरेणवस्तुज आ सद्बन्धेनवः | |
| स्वरन्ति ता उपरताति सूर्यमा निमृच उषसस्तक्वीरिव | ॥ 5 ॥ |
| आ वामृताय केशिनीरनूषत् मित्र यत्र वरुण गातुमर्चथः | |

| | |
|--|-------|
| अव त्मना सृजतं पिन्वतं धियो युवं विप्रस्य मन्मनामिरज्यथः | ॥ 6 ॥ |
| यो वां यज्ञैः शशमानो ह दार्शति क्विर्होता यजति मन्मसाधनः | |
| उपाह तं गच्छथो वीथो अध्वरमच्छा गिरः सुमतिं गन्तमस्मयू | ॥ 7 ॥ |
| युवां यज्ञैः प्रथमा गोभिरञ्जत ऋतावाना मनसो न प्रयुक्तिषु | |
| भरन्ति वां मन्मना संयता गिरोऽदृष्यता मनसा रेवदाशाथे | ॥ 8 ॥ |
| रेवद्वयो दधाथे रेवदाशाथे नरा मायाभिरितऊति माहिनम् | |
| न वां द्यावोऽर्हभिर्नोत सिन्धवो न देवत्वं पणयो नानशुर्मघम् | ॥ 9 ॥ |

(7)

152

(म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|------------------|-------------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता मित्रावरुणौ |
|-----------------------|------------------|-------------------|

| | |
|--|-------|
| युवं वस्त्राणि पीवसा वसाथे युवोरच्छिद्रा मन्तवो ह सर्गाः | |
| अवातिरतमनृतानि विश्वं ऋतेन मित्रावरुणा सचेथे | ॥ 1 ॥ |
| एतच्चन त्वो वि चिकेतदेषां सत्यो मन्त्रः कविशस्त ऋधावान् | |
| त्रिरश्रिं हन्ति चतुरश्रिरुग्रो देवनिदो ह प्रथमा अजूर्यन् | ॥ 2 ॥ |
| अपादेति प्रथमा पद्वतीनां कस्तद्वं मित्रावरुणा चिकेत | |
| गर्भो भारं भरत्या चिदस्य ऋतं पिपत्यनृतं नि तारीत् | ॥ 3 ॥ |
| प्रयन्तमित्पारिं जारं कनीनां पश्यामसि नोपनिपद्यमानम् | |
| अनवपृग्णा वितता वसानं प्रियं मित्रस्य वरुणस्य धाम | ॥ 4 ॥ |
| अनुश्वो जातो अनभीशुरवा कनिक्रदत्पतयदूर्ध्वसानुः | |
| अचित्तं ब्रह्म जुजुषुर्यवानुः प्र मित्रे धाम वरुणे गृणन्तः | ॥ 5 ॥ |
| आ धेनवो मामतेयमवन्तीर्ब्रह्मप्रियं पीपयन्त्सस्मिन्नूधन् | |
| पित्वो भिक्षेत वयुनानि विद्वानासाविवांसन्नदितिमुरुष्येत् | ॥ 6 ॥ |
| आ वां मित्रावरुणा हव्यजुष्टिं नमसा देवाववसा ववृत्याम् | |
| अस्माकं ब्रह्म पृतनासु सद्या अस्माकं वृष्टिद्वया सुपारा | ॥ 7 ॥ |

(4)

153

(म. 1, अनु. 21)

| | | |
|-----------------------|------------------|-------------------|
| ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता मित्रावरुणौ |
|-----------------------|------------------|-------------------|

| | |
|--|-------|
| यजामहे वां मूहः सृजोषा हव्येभिमित्रावरुणा नमोभिः | |
| घृतैर्घृतस्त्रु अध यद्वामस्मे अध्वर्यवो न धीतिभिर्भरन्ति | ॥ 1 ॥ |
| प्रस्तुतिर्वा धाम न प्रयुक्तिरयामि मित्रावरुणा सुवृक्तिः | |
| अनक्ति यद्वं विदथेषु होता सुम्रं वां सूरिवृषणावियक्षन् | ॥ 2 ॥ |
| पीपाय धेनुरदितिर्ऋताय जनाय मित्रावरुणा हविर्दे | |
| हिनोति यद्वं विदथे सपर्यन्त्स रातहव्यो मानुषो न होता | ॥ 3 ॥ |

उत वां विक्षु मद्यास्वन्धो गाव् आपश्च पीपयन्त देवीः
उतो नो अस्य पूर्व्यः पतिर्दन्वीतं पातं पर्यस उस्त्रियायाः

|| 4 ||

(6)

154

(म. 1, अनु. 21)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता विष्णुः

विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्र वोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि
यो अस्कभायदुत्तरं सुधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः
प्र तद्विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा
प्र विष्णवे शूषमेतु मन्म गिरिक्षित उरुगायाय वृष्णे
य इदं दीर्घं प्रयतं सुधस्थमेको विममे त्रिभिरित्पदेभिः
यस्य त्री पूर्णा मधुना पदान्यक्षीयमाणा स्वधया मरुन्ति
य उं त्रिधातुं पृथिवीमुत द्यामेको दाधार भुवनानि विश्वा
तदस्य प्रियमभि पाथो अश्यां नरो यत्र देवयवो मरुन्ति
उरुक्रमस्य स हि बन्धुरित्था विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः
ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्वै यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः
अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः परमं पदमव भाति भूरि

|| 1 ||

|| 2 ||

|| 3 ||

|| 4 ||

|| 5 ||

|| 6 ||

(6)

155

(म. 1, अनु. 21)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः जगती

देवता विष्णुः इन्द्रः च 1-3, विष्णुः 4-6

प्र वः पान्तमन्धसो धियायते महे शूराय विष्णवे चार्चत
या सानुनि पर्वतानामदाभ्या महस्तस्थतुरर्वतेव साधुना
त्वेषमित्था स्मरणं शिमीवतोरिन्द्राविष्णू सुतपा वामुरुष्यति
या मर्त्याय प्रतिधीयमानमित्कृशानोरस्तुरसनामुरुष्यथः
ता ई वर्धन्ति मह्यस्य पौंस्यं नि मातरा नयति रेतसे भुजे
दधाति पुत्रोऽवरं परं पितुर्नाम तृतीयमधि रोचने दिवः
तत्तदिदस्य पौंस्यं गृणीमसीनस्य त्रातुरवृकस्य मीळहुषः
यः पार्थिवानि त्रिभिरिद्विगामभिरुरु क्रमिष्टोरुगायाय जीवसे
द्वे इदस्य क्रमणे स्वर्दृशोऽभिख्याय मर्त्यो भुरण्यति
तृतीयमस्य नकिरा दधर्षति वयश्चन पतयन्तः पतत्रिणः
चतुर्भः साकं नवति च नामभिश्चक्रं न वृत्तं व्यतीरवीविपत्
बृहच्छरीरो विमिमान् ऋक्भिर्युवाकुमारः प्रत्येत्याहवम्

|| 1 ||

|| 2 ||

|| 3 ||

|| 4 ||

|| 5 ||

|| 6 ||

(5)

156

(म. 1, अनु. 21)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः जगती

देवता विष्णुः

भवा मित्रो न शेव्यो घृतासुतिवभूतद्युम्न एव्या उं सप्रथाः |
 अर्धा ते विष्णो विदुषां चिदध्वः स्तोमो यज्ञश्च राध्यो हविष्मता || 1 ||
 यः पूर्व्याय वेधसे नवीयसे सुमज्जानये विष्णावे ददाशति |
 यो जातमस्य महतो महि ब्रवत्सेदु श्रवोभिर्युज्यं चिदभ्यसत् || 2 ||
 तमु स्तोतारः पूर्व्यं यथा विद ऋतस्य गभं जनुषा पिपर्तन |
 आस्यं जानन्तो नाम चिद्विवक्तन महस्ते विष्णो सुमतिं भजामहे || 3 ||
 तमस्य राजा वरुणस्तमश्विना क्रतुं सचन्त मारुतस्य वेधसः |
 दाधार दक्षमुत्तममहवदं व्रजं च विष्णुः सखिवां अपोर्णुते || 4 ||
 आ यो विवायं सूचथाय दैव्य इन्द्राय विष्णुः सुकृते सुकृत्तरः |
 वेधा अजिन्वत्त्रिषधस्थ आर्यमृतस्य भागे यजमानमार्भजत् || 5 ||

(6)

157

(म. 1, अनु. 22)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः जगती 1-4, त्रिष्टुप् 5-6

देवता अश्विनौ

अबोध्याग्निर्जम उदेति सूर्यो व्युषाश्चन्द्रा मह्यावो अचषा |
 आयुक्षातामश्विना यातवे रथं प्रासावीद्वेवः सविता जगत्पृथक् || 1 ||
 यद्युजाथे वृषणमश्विना रथं घृतेन नो मधुना क्षत्रमुक्षतम् |
 अस्माकं ब्रह्म पृतनासु जिन्वतं व्यं धना शूरसाता भजेमहि || 2 ||
 अर्वाङ् त्रिचक्रो मधुवाहनो रथो जीराश्वो अश्विनोर्यातु सुष्टुतः |
 त्रिवन्धुरो मघवा विश्वसौभगः शं न आ वक्षद्विपदे चतुष्पदे || 3 ||
 आ न ऊर्जं वहतमश्विना युवं मधुमत्या नः कशया मिमिक्षतम् |
 प्रायुस्तारिष्टुं नी रपांसि मृक्षतं सेधतं द्वेषो भवतं सचाभुवा || 4 ||
 युवं ह गभं जगतीषु धत्थो युवं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः |
 युवमग्निं च वृषणावपश्च वनस्पतीं रश्विनावैरयेथाम् || 5 ||
 युवं ह स्थो भिषजा भेषजेभिरथो ह स्थो रथ्यां राथ्येभिः |
 अथो ह क्षत्रमधि धत्थ उग्रा यो वां हविष्मान्मनसा ददाश || 6 ||

| इति द्वितीयाष्टके द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः |

(6)

158

(म. 1, अनु. 22)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः त्रिष्टुप् 1-5, अनुष्टुप् 6

देवता अश्विनौ

| | |
|--|-------|
| वसू रुद्रा पुरुमन्तू वृधन्ता दशस्यते नो वृषणावृभिष्टौ | |
| दस्रा ह यद्रेक्ण औचथ्यो वां प्र यत्ससाथे अकवाभिरूती | ॥ 1 ॥ |
| को वां दाशत्सुमतये चिदस्यै वसू यद्वेथे नमसा पदे गोः | |
| जिगृतमस्मे रेवतीः पुरंधीः कामप्रेणैव मनसा चरन्ता | ॥ 2 ॥ |
| युक्तो ह यद्वां तौग्र्याय पेरुर्वि मध्ये अर्णसो धायि पृजः | |
| उप वामवः शरणं गमेयं शूरो नाज्म पतयद्विरेवैः | ॥ 3 ॥ |
| उपस्तुतिरौचथ्यमुरुष्येन्मा मामिमे पतत्रिणी वि दुग्धाम् | |
| मा मामेधो दशतयश्चितो धाक् प्र यद्वां बद्धस्त्वनि खार्दति क्षाम् | ॥ 4 ॥ |
| न मा गरन्नद्यो मातृत्मा दासा यदीं सुसमुब्धमवाधुः | |
| शिरो यदस्य त्रैतनो वितक्षत्स्वयं दास उरो अंसावपि गध | ॥ 5 ॥ |
| दीर्घतमा मामतेयो जुजुर्वान्दशमे युगे अपामर्थं यतीनां ब्रह्मा भवति सारथिः | ॥ 6 ॥ |

(5)

159

(म. 1, अनु. 22)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः जगती

देवता द्यावापृथिवी

| | |
|--|-------|
| प्र द्यावा यज्ञैः पृथिवी ऋतावृधा मही स्तुषे विदथेषु प्रचेतसा | |
| देवेभिर्ये देवपुत्रे सुदंससेत्था धिया वार्याणि प्रभूषतः | ॥ 1 ॥ |
| उत मन्ये पितुरद्बुहो मनो मातुर्महि स्वतवस्तद्धवीमभिः | |
| सुरेतसा पितरा भूम चक्रतुरु प्रजाया अमृतं वरीमभिः | ॥ 2 ॥ |
| ते सूनवः स्वपसः सुदंससो मही जज्ञुर्मातरा पूर्वचित्तये | |
| स्थातुश्च सत्यं जगतश्च धर्माणि पुत्रस्य पाथः पदमद्वयाविनः | ॥ 3 ॥ |
| ते मायिनो ममिरे सुप्रचेतसो जामी सयौनी मिथुना समौकसा | |
| नव्यनव्यं तन्तुमा तन्वते द्विवि समुद्रे अन्तः क्वयः सुदीतयः | ॥ 4 ॥ |
| तद्राधो अद्य संवितुर्वरेण्यं वयं देवस्य प्रसवे मनामहे | |
| अस्मभ्यं द्यावापृथिवी सुचेतुना रयिं धत्तं वसुमन्तं शतग्विनम् | ॥ 5 ॥ |

(5)

160

(म. 1, अनु. 22)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः जगती

देवता द्यावापृथिवी

| | |
|---|-------|
| ते हि द्यावापृथिवी विश्वशंभुव ऋतावरी रजसो धारयत्कवी | |
| सुजन्मनी धिषणं अन्तरीयते देवो देवी धर्माणा सूर्यः शुचिः | ॥ 1 ॥ |
| उरुव्यचसा महिनी असश्चता पिता माता च भुवनानि रक्षतः | |
| सुधृष्टमे वपुष्येर् न रोदसी पिता यत्सीमभि रूपैरवासयत् | ॥ 2 ॥ |
| स वह्निः पुत्रः पित्रोः पवित्रवान्पुनाति धीरो भुवनानि मायया | |
| धेनुं च पृश्निं वृषभं सुरेतसं विश्वाहा शुक्रं पयो अस्य दुक्षत | ॥ 3 ॥ |

अयं देवानामपसामपस्तमो यो जजान् रोदसी विश्वशंभुवा |
 वि यो ममे रजसी सुक्रतूययाजरैभिः स्कम्भनेभिः समानृचे || 4 ||
 ते नो गृणाने महिनी महि श्रवः क्षत्रं द्यावापृथिवी धासथो बृहत् |
 येनाभि कृष्टीस्ततनाम विश्वहा पनाय्यमोजो अस्मे समिन्वतम् || 5 ||

(14)

161

(म. 1, अनु. 22)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः जगती 1-13, त्रिष्टुप् 14

देवता ऋभवः

किमु श्रेष्ठः किं यविष्ठो न आजगन्किमीयते दूत्यं कद्यदूचिम |
 न निन्दिम चमसं यो महाकुलोऽग्रे भ्रातृद्रुण इद्भूतिमूदिम || 1 ||
 एकं चमसं चतुरः कृणोतन तद्वो देवा अब्रुवन्तद्व आगमम् |
 सौधन्वना यद्येवा करिष्यथ साकं देवैर्यज्ञियासो भविष्यथ || 2 ||
 अग्निं दूतं प्रति यदब्रवीतनाश्वः कर्त्वा रथ उतेह कर्त्वीः |
 धेनुः कर्त्वा युवशा कर्त्वा द्वा तानि भ्रातरनु वः कृत्व्येर्मसि || 3 ||
 चकृवांसं ऋभवस्तदपृच्छत् केदभूद्यः स्य दूतो न आजगन् |
 यदावाख्यञ्चमसाञ्चतुरः कृतानादित्त्वष्टा ग्रास्वन्तन्यांनजे || 4 ||
 हनामैनाँ इति त्वष्टा यदब्रवीच्चमसं ये देवपानमनिन्दिषुः |
 अन्या नामानि कृणवते सुते सचाँ अन्यैरेनान्कन्याँ नामभिः स्परत् || 5 ||
 इन्द्रो हरीं युयुजे अश्विना रथं बृहस्पतिर्विश्वरूपामुपाजत |
 ऋभुर्विभ्वा वाजो देवाँ अगच्छत् स्वपसो यज्ञियं भागमैतन || 6 ||
 निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभिर्या जरन्ता युवशा ताकृणोतन |
 सौधन्वना अश्वदश्वमतक्षत युक्त्वा रथमुप देवाँ अयातन || 7 ||
 इदमुदुकं पिबतेत्यब्रवीतनेदं वा घा पिबता मुञ्जनेर्जनम् |
 सौधन्वना यदि तन्नेव हर्यथ तृतीये घा सर्वने मादयाध्वै || 8 ||
 आपो भूयिष्ठा इत्येको अब्रवीदग्निभूयिष्ठ इत्यन्यो अब्रवीत् |
 वर्धयन्तीं बहुभ्यः प्रैको अब्रवीद्वृता वदन्तश्चमसाँ अपिंशत || 9 ||
 श्रोणामेकं उदकं गामवाजति मांसमेकः पिंशति सूनयाभृतम् |
 आ निमृचः शकृदेको अपाभरत्किं स्वित्पुत्रेभ्यः पितरा उपावतुः || 10 ||
 उद्वत्स्वस्मा अकृणोतना तृणं निवत्स्वपः स्वपस्यया नरः |
 अगौह्यस्य यदसंस्तना गुहे तदद्येदमृभवो नानु गच्छथ || 11 ||
 संमील्य यद्भुवना पर्यसर्पत् क्व स्वित्तात्या पितरा व आसतुः |
 अशपत् यः करस्त्रं व आददे यः प्राब्रवीत्प्रो तस्मा अब्रवीतन || 12 ||
 सुषुवांसं ऋभवस्तदपृच्छतागौह्य क इदं नो अबूबुधत् |
 श्वानं ब्रुतो बोधयितारमब्रवीत्संवत्सर इदमद्या व्यख्यत || 13 ||
 दिवा यान्ति मरुतो भूम्याग्निरयं वातो अन्तरिक्षेण याति |
 अद्भिर्याति वरुणः समुद्रैर्युष्माँ इच्छन्तः शवसो नपातः || 14 ||

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः छन्दः त्रिष्टुप् 1-2, 4-5, 7-22, जगती 3, 6

देवता अश्वः

| | |
|---|--------|
| मा नो मित्रो वरुणो अर्यमायुरिन्द्रं ऋभुक्षा मरुतः परिं ख्यन् | |
| यद्वाजिनो देवजातस्य सप्तैः प्रवक्ष्यामो विदथे वीर्याणि | ॥ 1 ॥ |
| यन्निर्णिजा रेक्णसा प्रावृतस्य रातिं गृभीतां मुखतो नयन्ति | |
| सुप्राङ्जो मेर्म्यद्विश्वरूप इन्द्रापूष्णोः प्रियमर्ष्येति पार्थः | ॥ 2 ॥ |
| एष च्छागः पुरो अश्वेन वाजिना पूष्णो भागो नीयते विश्वदैव्यः | |
| अभिप्रियं यत्पुरोळाशमर्वता त्वष्टेदेनं सौश्रवसाय जिन्वति | ॥ 3 ॥ |
| यद्धविष्यमृतुशो देवयानं त्रिर्मानुषाः पर्यश्वं नयन्ति | |
| अत्रा पूष्णः प्रथमो भाग एति यज्ञं देवेभ्यः प्रतिवेदयन्नजः | ॥ 4 ॥ |
| होताध्वर्युरावया अग्रिमिन्धो ग्रावग्राभ उत शंस्ता सुविप्रः | |
| तेन यज्ञेन स्वरंकृतेन स्विष्टेन वक्षणा आ पृणध्वम् | ॥ 5 ॥ |
| यूपत्रस्का उत ये यूपवाहाश्चषालं ये अश्वयूपाय तर्क्षति | |
| ये चार्वते पचनं संभरन्त्युतो तेषामभिर्गूर्तिर्न इन्वतु | ॥ 6 ॥ |
| उप प्रागात्सुमन्मैऽधायि मन्म देवानामाशा उप वीतपृष्ठः | |
| अन्वेनं विप्रा ऋषयो मदन्ति देवानां पुष्टे चकृमा सुबन्धुम् | ॥ 7 ॥ |
| यद्वाजिनो दामं संदानमर्वतो या शीर्षण्यां रशना रज्जुरस्य | |
| यद्वा घास्य प्रभृतमास्येरे तृणं सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु | ॥ 8 ॥ |
| यदश्वस्य क्रविषो मक्षिकाश्च यद्वा स्वरौ स्वधितौ रिप्तमस्ति | |
| यद्धस्तयोः शमितुर्यन्नखेषु सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु | ॥ 9 ॥ |
| यदूर्ध्वमुदरस्यापवाति य आमस्य क्रविषो गन्धो अस्ति | |
| सुकृता तच्छमितारः कृण्वन्तूत मेधं शृतपाकं पचन्तु | ॥ 10 ॥ |
| यत्ते गात्रादग्निना पच्यमानादभि शूलं निहतस्यावधावति | |
| मा तद्धूम्यामा श्रिषन्मा तृणेषु देवेभ्यस्तदुशब्धौ रातमस्तु | ॥ 11 ॥ |
| ये वाजिनं परिपश्यन्ति पक्वं य ईमाहुः सुरभिर्निहरेति | |
| ये चार्वतो मांसभिक्षामुपासत उतो तेषामभिर्गूर्तिर्न इन्वतु | ॥ 12 ॥ |
| यन्नीक्षणं मांसपचन्या उखाया या पात्राणि यूष्ण आसेचनानि | |
| ऊष्ण्यापिधानां चरूणामुङ्गाः सूनाः परिं भूषन्त्यश्वम् | ॥ 13 ॥ |
| निक्रमणं निषदनं विवर्तनं यच्च पङ्कीशमर्वतः | |
| यच्च पपौ यच्च घासिं जघास सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु | ॥ 14 ॥ |
| मा त्वाग्निध्वनयीद्धमगन्धिर्मोखा भ्राजन्त्याभि वित्तु जग्निः | |

| | |
|---|--------|
| इष्टं वीतमभिगूर्तं वर्षद्वृतं तं देवासुः प्रति गृभ्णन्त्यश्वम् | ॥ 15 ॥ |
| यदश्वाय वासं उपस्तृणन्त्यधीवासं या हिरण्यान्यस्मै | |
| संदानमर्वन्तं पङ्क्रीशं प्रिया देवेष्वा यामयन्ति | ॥ 16 ॥ |
| यत्ते सादे महसा शूकृतस्य पाष्यया वा कशया वा तुतोद | |
| सुचेव ता हविषो अध्वरेषु सर्वा ता ते ब्रह्मणा सूदयामि | ॥ 17 ॥ |
| चतुस्त्रिंशद्वाजिनो देवबन्धोर्वङ्क्रीरश्वस्य स्वधितिः समैति | |
| अच्छिद्रा गात्रा वयुना कृणोत परुषरुरुनुघुष्या वि शस्त | ॥ 18 ॥ |
| एकस्त्वष्टुरश्वस्या विशस्ता द्वा यन्तारा भवतस्तथ ऋतुः | |
| या ते गात्राणामृतुथा कृणोमि ताता पिण्डानां प्र जुहोम्यग्नौ | ॥ 19 ॥ |
| मा त्वा तपत्प्रिय आत्मापियन्तं मा स्वधितिस्तन्वश् आ तिष्ठिपत्ते | |
| मा ते गृधुरविशस्तातिहाय छिद्रा गात्राण्यसिना मिथू कः | ॥ 20 ॥ |
| न वा उ एतन्म्रियसे न रिष्यसि देवा इदेषि पृथिभिः सुगोभिः | |
| हरी ते युञ्जा पृषती अभूतामुपास्थाद्वाजी धुरि रासंभस्य | ॥ 21 ॥ |
| सुगव्यं नो वाजी स्वश्व्यं पुंसः पुत्रां उत विश्वापुषं रयिम् | |
| अनागास्त्वं नो अदितिः कृणोतु क्षत्रं नो अश्वो वनतां हविष्मान् | ॥ 22 ॥ |

(13)

163

(म. 1, अनु. 22)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अश्वः

| | |
|---|-------|
| यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात् | |
| श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन् | ॥ 1 ॥ |
| यमेन दत्तं त्रित एनमायुनगिन्द्र एणं प्रथमो अर्धतिष्ठत् | |
| गन्धर्वो अस्य रशनामगृभ्णात्सूरादश्वं वसवो निरतष्ट | ॥ 2 ॥ |
| असि यमो अस्यादित्यो अर्वन्नसि त्रितो गुह्येन व्रतेन | |
| असि सोमेन समया विपृक्त आहुस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानि | ॥ 3 ॥ |
| त्रीणि त आहुर्दिवि बन्धनानि त्रीण्यप्सु त्रीण्यन्तः समुद्रे | |
| उतेव मे वरुणश्छन्त्यर्वन्यत्रा त आहुः परमं जनित्रम् | ॥ 4 ॥ |
| इमा ते वाजिन्नवमार्जनीनामा शफानां सन्तुर्निधाना | |
| अत्रा ते भद्रा रशना अपश्यमृतस्य या अभिरक्षन्ति गोपाः | ॥ 5 ॥ |
| आत्मानं ते मनसारादजानामवो दिवा पतयन्तं पतङ्गम् | |
| शिरो अपश्यं पृथिभिः सुगोभिररेणुभिर्जेहमानं पतत्रि | ॥ 6 ॥ |
| अत्रा ते रूपमुत्तममपश्यं जिगीषमाणमिष आ पदे गोः | |
| यदा ते मर्तो अनु भोगमान्ळादिद्वसिष्ठ ओषधीरजीगः | ॥ 7 ॥ |
| अनु त्वा रथो अनु मर्यो अर्वन्ननु गावोऽनु भगः कनीनाम् | |

| | |
|---|--------|
| अनु व्रातासुस्तव सुख्यमीयुरनु देवा ममिरे वीर्यं ते | ॥ 8 ॥ |
| हिरण्यशृङ्गोऽयो अस्य पादा मनोजवा अवर इन्द्र आसीत् | |
| देवा इदस्य हविरद्यमायुन्यो अर्वन्तं प्रथमो अर्ध्यतिष्ठत् | ॥ 9 ॥ |
| ईर्मान्तासुः सिलिकमध्यमासुः सं शूरणासो दिव्यासो अत्याः | |
| हंसाइव श्रेणिशो यतन्ते यदाक्षिषुर्दिव्यमज्ममश्वाः | ॥ 10 ॥ |
| तव शरीरं पतयिष्वर्वन्तव चित्तं वातइव ध्रुजीमान् | |
| तव शृङ्गाणि विष्टिता पुरुत्रारण्येषु जर्भुराणा चरन्ति | ॥ 11 ॥ |
| उप प्रागाच्छसनं वाज्यर्वा देवद्रीचा मनसा दीध्यानः | |
| अजः पुरो नीयते नाभिरस्यानुं पश्चात्कवयो यन्ति रेभाः | ॥ 12 ॥ |
| उप प्रागात्परमं यत्सुधस्थमर्वा अच्छा पितरं मातरं च | |
| अद्या देवाञ्जुष्टतमो हि गुम्या अथा शास्ते दाशुषे वार्याणि | ॥ 13 ॥ |

(52)

164

(म. 1, अनु. 22)

ऋषिः दीर्घतमाः औचथ्यः छन्दः त्रिष्टुप् 1-11, 13-14, 16-22, 24-28, 30-35, 37-40, 43-50, 52 जगती 12, 15, 23, 29, 36, 41, प्रस्तारपङ्क्तिः 42, अनुष्टुप् 51, देवता विश्वे देवाः 1-41, वागापः 42, शकधूमसोमौ 43, अग्निसूर्यवायवः 44, वाक् 45, सूर्यः 46-47, संवत्सर-कालचक्रम् 48, सरस्वती 49, साध्याः 50, सूर्यः पर्जन्यः अग्रयः वा 51, सरस्वान् सूर्यः वा 52

| | |
|---|-------|
| अस्य वामस्य पलितस्य होतुस्तस्य भ्राता मध्यमो अस्त्यश्रः | |
| तृतीयो भ्राता घृतपृष्ठो अस्यात्रापश्यं विशपतिं सप्तपुत्रम् | ॥ 1 ॥ |
| सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा | |
| त्रिनाभिं चक्रमजरमनुर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनाधि तस्थुः | ॥ 2 ॥ |
| इमं रथमधि ये सप्त तस्थुः सप्तचक्रं सप्त वहन्त्यश्वाः | |
| सप्त स्वसारो अभि सं नवन्ते यत्र गवां निर्हिता सप्त नाम | ॥ 3 ॥ |
| को ददर्श प्रथमं जायमानमस्थन्वन्तं यदन्स्था बिभर्ति | |
| भूम्या असुरसृगात्मा क्व स्वित्को विद्वांसमुप गात्प्रष्टुमेतत् | ॥ 4 ॥ |
| पाकः पृच्छामि मनसाविजानन्देवानामेना निर्हिता पदानि | |
| वत्से बृष्कयेऽधि सप्त तन्तून्वि तन्नरे कवय ओतवा उं | ॥ 5 ॥ |
| अचिकित्वाञ्चिकितुषश्चिदत्र क्वीन्पृच्छामि विद्मने न विद्वान् | |
| वि यस्तस्तम्भ षळिमा रजांस्यजस्य रूपे किमपि स्वित्केकम् | ॥ 6 ॥ |
| इह ब्रवीतु य ईमङ्ग वेदास्य वामस्य निर्हितं पदं वेः | |
| शीर्ष्णः क्षीरं दुहते गावो अस्य वृत्रि वसाना उदुकं पदापुः | ॥ 7 ॥ |
| माता पितरमृत आ बभाज धीत्यग्रे मनसा सं हि जग्मे | |
| सा बीभृत्सुर्गर्भरसा निर्विद्धा नमस्वन्त इदुपवाकमीयुः | ॥ 8 ॥ |

| | |
|--|----|
| युक्ता मातासीन्दुरि दक्षिणाया अतिष्ठद्गर्भो वृजनीष्वन्तः | |
| अमीमेद्वत्सो अनु गार्मपश्यद्विश्वरूप्यं त्रिषु योजनेषु | 9 |
| तिस्त्रो मातृस्त्रीन्पितृन्बिभ्रदेकं ऊर्ध्वस्तस्थौ नेमव ग्लापयन्ति | |
| मन्त्रयन्ते दिवो अमुष्यं पृष्ठे विश्वविदं वाचमविश्वमिन्वाम् | 10 |
| द्वादशारं नहि तज्जरायु वर्वति चक्रं परि द्यामृतस्य | |
| आ पुत्रा अग्रे मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विश्तिश्च तस्थुः | 11 |
| पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परे अर्धे पुरीषिणम् | |
| अथेमे अन्य उपरे विचक्षणं सप्तचक्रे षळर आहुरर्पितम् | 12 |
| पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने तस्मिन्ना तस्थुर्भुवनानि विश्वा | |
| तस्य नाक्षस्तप्यते भूरिभारः सनादेव न शीर्यते सनाभिः | 13 |
| सनेमि चक्रमजरं वि वावृत उत्तानायां दश युक्ता वहन्ति | |
| सूर्यस्य चक्षु रजसैत्यावृतं तस्मिन्नार्पिता भुवनानि विश्वा | 14 |
| साकंजानां सप्तथमाहुरेकजं षळिद्यमा ऋषयो देवजा इति | |
| तेषामिष्टानि विहितानि धामशः स्थात्रे रैजन्ते विकृतानि रूपशः | 15 |
| स्त्रियः सतीस्तां उ मे पुंस आहुः पश्यदक्षुष्वान्न वि चैतदन्धः | |
| कविर्यः पुत्रः स ईमा चिकेत यस्ता विजानात्स पितुष्वितासत् | 16 |
| अवः परेण पर एनावरेण पदा वत्सं बिभ्रती गौरुदस्थात् | |
| सा कद्रीची कं स्विदधं परागात्कं स्वित्सूते नहि यूथे अन्तः | 17 |
| अवः परेण पितरं यो अस्यानुवेदं पर एनावरेण | |
| कवीयमानुः क इह प्र वोचद्वेवं मनः कुतो अधि प्रजातम् | 18 |
| ये अर्वाञ्चस्तां उ पराच आहुर्ये पराञ्चस्तां उ अर्वाच आहुः | |
| इन्द्रश्च या चक्रथुः सोम तानि धुरा न युक्ता रजसो वहन्ति | 19 |
| द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते | |
| तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति | 20 |
| यत्रा सुपर्णा अमृतस्य भागमनिमेषं विदथाभिस्वरन्ति | |
| इनो विश्वस्य भुवनस्य गोपाः स मा धीरः पाकमत्रा विवेश | 21 |
| यस्मिन्वृक्षे मध्वदः सुपर्णा निविशन्ते सुवते चाधि विश्वे | |
| तस्येदाहुः पिप्पलं स्वाद्वग्रे तन्नोन्नश्द्यः पितरं न वेदं | 22 |
| यद्वायत्रे अधि गायत्रमाहितं त्रैष्टुभाद्वा त्रैष्टुभं निरतक्षत | |
| यद्वा जगज्जगत्याहितं पदं य इत्तद्विदुस्ते अमृतत्वमानशुः | 23 |
| गायत्रेण प्रति मिमीते अर्कमर्केण साम त्रैष्टुभेन वाकम् | |

| | |
|---|--------|
| वाकेन वाकं द्विपदा चतुष्पदाक्षरैण मिमते सप्त वाणीः | ॥ 24 ॥ |
| जगता सिन्धुं दिव्यस्तभायद्रथंतरे सूर्यं पर्यपश्यत् | |
| गायत्रस्य समिधस्तिस्त्र आहुस्ततो मृहा प्र रिरिचे महित्वा | ॥ 25 ॥ |
| उप ह्वये सुदुघां धेनुमेतां सुहस्तो गोधुगुत दोहदेनाम् | |
| श्रेष्ठं स्रवं सविता साविषत्रोऽभीद्धो घर्मस्तदु षु प्र वोचम् | ॥ 26 ॥ |
| हिङ्ग्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात् | |
| दुहामश्विभ्यां पयो अघ्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय | ॥ 27 ॥ |
| गौरमीमेदनु वत्सं मिषन्तं मूर्धानं हिङ्गकृणोन्मातुवा उ | |
| सृकाणं घर्ममभि वावशाना मिमाति मायुं पर्यते पयोभिः | ॥ 28 ॥ |
| अयं स शिङ्गे येन गौरभीवृता मिमाति मायुं ध्वसनावधि श्रिता | |
| सा चित्तिभिर्नि हि चकार मर्त्यं विद्युद्भवन्ती प्रति वत्रिमौहत | ॥ 29 ॥ |
| अनच्छये तुरगातु जीवमेजद्भ्रुवं मध्य आ पस्त्यानाम् | |
| जीवो मृतस्य चरति स्वधाभिरमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः | ॥ 30 ॥ |
| अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परां च पृथिभिश्चरन्तम् | |
| स सध्रीचीः स विषूचीर्वसान् अ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः | ॥ 31 ॥ |
| य ईं चकार न सो अस्य वेदु य ईं दुदर्श हिरुगिन्नु तस्मात् | |
| स मातुर्योना परिवीतो अन्तर्बहुप्रजा निर्ऋतिमा विवेश | ॥ 32 ॥ |
| द्यौर्मै पिता जनिता नाभिरत्र बन्धुर्मै माता पृथिवी महीयम् | |
| उत्तानयोश्चम्बोर्ऽयोनिरन्तरत्रा पिता दुहितुर्गर्भमाधात् | ॥ 33 ॥ |
| पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्याः पृच्छामि यत्र भुवनस्य नाभिः | |
| पृच्छामि त्वा वृष्णो अश्वस्य रेतः पृच्छामि वाचः परमं व्योम | ॥ 34 ॥ |
| इयं वेदिः परो अन्तः पृथिव्या अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः | |
| अयं सोमो वृष्णो अश्वस्य रेतो ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम | ॥ 35 ॥ |
| सप्तार्धगर्भा भुवनस्य रेतो विष्णोस्तिष्ठन्ति प्रदिशा विधर्मणि | |
| ते धीतिभिर्मनसा ते विपश्चितः परिभुवः परि भवन्ति विश्वतः | ॥ 36 ॥ |
| न वि जानामि यदिवेदमस्मि निण्यः संनद्धो मनसा चरामि | |
| यदा मार्गन्प्रथमजा ऋतस्यादिद्वाचो अश्रुवे भागमुस्याः | ॥ 37 ॥ |
| अपाङ् प्राडेति स्वधया गृभीतोऽमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः | |
| ता शश्वन्ता विषूचीना वियन्ता न्यर्ऽन्यं चिक्युर्न नि चिक्युरन्यम् | ॥ 38 ॥ |
| ऋचो अक्षरै परमे व्योमन्यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः | |
| यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते | ॥ 39 ॥ |
| सूयवसाद्भगवती हि भूया अथो वयं भगवन्तः स्याम | |

| | |
|--|--------|
| अद्धि तृणमघ्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती | ॥ 40 ॥ |
| गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी | |
| अष्टापदी नवपदी बभ्रुवुषीं सहस्राक्षरा परमे व्योमन् | ॥ 41 ॥ |
| तस्याः समुद्रा अधि वि क्षरन्ति तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः | |
| ततः क्षरत्यक्षरं तद्विश्वमुप जीवति | ॥ 42 ॥ |
| शकमयं धूममारादपश्यं विषुवता पर एनावरेण | |
| उक्षाणं पृश्निमपचन्त वीरास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् | ॥ 43 ॥ |
| त्रयः केशिनं ऋतुथा वि चक्षते संवत्सरे वपत् एक एषाम् | |
| विश्वमेको अभि चष्टे शचीभिर्भ्राजिरेकस्य ददृशे न रूपम् | ॥ 44 ॥ |
| चत्वारि वाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः | |
| गुहा त्रीणि निर्हिता नेङ्गयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति | ॥ 45 ॥ |
| इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् | |
| एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः | ॥ 46 ॥ |
| कृष्णं नित्यान् हरयः सुपर्णा अपो वसाना दिवमुत्पतन्ति | |
| त आववृत्रन्तसदनादृतस्यादिद्धृतेन पृथिवी व्युद्यते | ॥ 47 ॥ |
| द्वादश प्रथयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत | |
| तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शङ्कवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः | ॥ 48 ॥ |
| यस्ते स्तनः शशयो यो मयोभूर्येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि | |
| यो रत्नधा वसुविद्यः सुदत्रः सरस्वति तमिह धातवे कः | ॥ 49 ॥ |
| यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् | |
| ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः | ॥ 50 ॥ |
| समानमेतदुदकमुच्चैत्यव चाहभिः | |
| भूमिं पर्जन्या जिन्वन्ति दिवं जिन्वन्त्यग्रयः | ॥ 51 ॥ |
| दिव्यं सुपर्णं वायुसं बृहन्तमपां गर्भं दर्शतमोषधीनाम् | |
| अभीपतो वृष्टिभिस्तर्पयन्तं सरस्वन्तमवसे जोहवीमि | ॥ 52 ॥ |

(15)

165

(म. 1, अनु. 23)

ऋषिः इन्द्रः 1-2, 4, 6, 8, 10-12, मरुतः 3, 5, 7, 9, अगस्त्यः मैत्रावरुणिः 13-15

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता मरुत्वान् इन्द्रः

| | |
|---|-------|
| कया शुभा सर्वयसुः सनीळाः समान्या मरुतः सं मिमिक्षुः | |
| कया मती कुत् एतास एतेऽर्चन्ति शुभं वर्षणो वसूया | ॥ 1 ॥ |
| कस्य ब्रह्माणि जुजुषुर्युवानः को अध्वरे मरुत् आ ववर्त | |

| | |
|---|--------|
| श्येनाँइव ध्रजतो अन्तरिक्षे केन महा मनसा रीरमाम | ॥ 2 ॥ |
| कुतस्त्वमिन्द्र माहिनुः सत्रेको यासि सत्पते किं तं इत्था | |
| सं पृच्छसे समराणः शुभानैर्वोचेस्तत्रो हरिवो यत्ते अस्मे | ॥ 3 ॥ |
| ब्रह्माणि मे मृतयुः शं सुतासुः शुष्म इयति प्रभृतो मे अद्रिः | |
| आ शासते प्रति हर्यन्त्युक्थेमा हरीं वहतस्ता नो अच्छ | ॥ 4 ॥ |
| अतो व्यमन्तमेभिर्युजानाः स्वक्षत्रेभिस्तन्वशुः शुम्भमानाः | |
| महोभिरेताँ उप युज्महे न्विन्द्र स्वधामनु हि नो बभूथ | ॥ 5 ॥ |
| क्वस्य वाँ मरुतः स्वधासीद्यन्मामेकं समधत्ताहिहत्ये | |
| अहं ह्युग्रस्तविषस्तुविष्मान्विश्वस्य शत्रोरनमं वधुस्त्रैः | ॥ 6 ॥ |
| भूरि चकर्थ युज्येभिरस्मे समानेभिवृषभ पौंस्येभिः | |
| भूरीणि हि कृणवामा शविष्ठेन्द्र क्रत्वा मरुतो यद्वशाम | ॥ 7 ॥ |
| वधीं वृत्रं मरुत इन्द्रियेण स्वेन भामेन तविषो बभूवान् | |
| अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः सुगा अपश्चकर वज्रबाहुः | ॥ 8 ॥ |
| अनुत्तमा ते मघवन्नकिर्नु न त्वावाँ अस्ति देवता विदानः | |
| न जायमानो नशते न जातो यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध | ॥ 9 ॥ |
| एकस्य चिन्मे विभ्वशस्त्वोजो या नु दधृष्वान्कृणवै मनीषा | |
| अहं ह्युग्रो मरुतो विदानो यानि च्यवमिन्द्र इदीश एषाम् | ॥ 10 ॥ |
| अमन्दन्मा मरुतः स्तोमो अत्र यन्मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र | |
| इन्द्राय वृष्णे सुमखाय मह्यं सख्ये सखायस्तन्वै तनूभिः | ॥ 11 ॥ |
| एवेदेते प्रति मा रोचमाना अनेद्यः श्रव एषो दधानाः | |
| संचक्ष्या मरुतश्चन्द्रवर्णा अच्छान्त मे छदयाथा च नूनम् | ॥ 12 ॥ |
| को न्वत्र मरुतो मामहे वः प्र यातन् सखीरच्छा सखायः | |
| मन्मानि चित्रा अपिवातर्यन्त एषां भूत नवेदा म ऋतानाम् | ॥ 13 ॥ |
| आ यद्वुवस्याद्दुवसे न कारुरस्माञ्चक्रे मान्यस्य मेधा | |
| ओ षु वर्त्त मरुतो विप्रमच्छेमा ब्रह्माणि जरिता वो अर्चत् | ॥ 14 ॥ |
| एष वः स्तोमो मरुत इयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः | |
| एषा यासीष्ट तन्वै वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 15 ॥ |

| इति द्वितीयाष्टके तृतीयोऽध्यायः समाप्तः |

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः जगती 1-13, त्रिष्टुप् 14-15

देवता मरुतः

| | |
|--|--------|
| तन्न वौचाम रभसाय जन्मने पूर्वं महित्वं वृषभस्य केतवे | |
| ऐधेव यामन्मरुतस्तुविष्वणो युधेवं शक्रास्तविषाणि कर्तन | ॥ 1 ॥ |
| नित्यं न सूनं मधु बिभ्रत् उप क्रीळन्ति क्रीळा विदथेषु घृष्वयः | |
| नक्षन्ति रुद्रा अर्वसा नमस्विनं न मर्धन्ति स्वतवसो हविष्कृतम् | ॥ 2 ॥ |
| यस्मा ऊमासो अमृता अरासत रायस्पोषं च हविषा ददाशुषे | |
| उक्षन्त्यस्मै मरुतो हिताइव पुरू रजांसि पर्यसा मयोभुवः | ॥ 3 ॥ |
| आ ये रजांसि तविषीभिरव्यत् प्र व एवासः स्वयतासो अध्रजन् | |
| भयन्ते विश्वा भुवनानि हर्म्या चित्रो वो यामः प्रयतास्वृष्टिषु | ॥ 4 ॥ |
| यत्त्वेषयामा नदयन्त पर्वतान्दिवो वा पृष्ठं नर्या अचुच्यवुः | |
| विश्वो वो अज्मन्भयते वनस्पती रथीयन्तीव प्र जिहीत् ओषधिः | ॥ 5 ॥ |
| यूयं न उग्रा मरुतः सुचेतुनारिष्टग्रामाः सुमतिं पिपर्तन | |
| यत्रा वो दिद्युद्रदति क्रिविदती रिणाति पश्वः सुधितेव बर्हणा | ॥ 6 ॥ |
| प्र स्कम्भदैष्णा अनवभ्रराधसोऽलातृणासो विदथेषु सुष्टृताः | |
| अर्चन्त्यर्क मंदिरस्य पीतये विदुर्वीरस्य प्रथमानि पौस्या | ॥ 7 ॥ |
| शतभुजिभिस्तमभिहृतेरघात्पूभी रक्षता मरुतो यमावत | |
| जनं यमुग्रास्तवसो विरष्णिनः पाथना शंसात्तनयस्य पुष्टिषु | ॥ 8 ॥ |
| विश्वानि भद्रा मरुतो रथेषु वो मिथस्पृध्येव तविषाण्याहिता | |
| अंसेष्वा वः प्रपथेषु खादयोऽक्षो वश्चक्रा समया वि वावृते | ॥ 9 ॥ |
| भूरीणि भद्रा नर्येषु बाहुषु वक्षःसु रुक्मा रभसासो अञ्जयः | |
| अंसेष्वेताः पविषु क्षुरा अधि वयो न पक्षान्व्यनु श्रियो धिरे | ॥ 10 ॥ |
| महान्तो म्हा विभ्वोर् विभूतयो दूरेदृशो ये दिव्या इव स्तृभिः | |
| मन्द्राः सुजिह्वाः स्वरितार आसभिः संमिश्रा इन्द्रे मरुतः परिष्टुभः | ॥ 11 ॥ |
| तद्वः सुजाता मरुतो महित्वनं दीर्घं वो दात्रमदितेरिव व्रतम् | |
| इन्द्रश्चन त्यजसा वि हुणाति तज्जनाय यस्मै सुकृते अराध्वम् | ॥ 12 ॥ |
| तद्वो जामित्वं मरुतः परे युगे पुरू यच्छंसममृतासु आवत | |
| अया धिया मनवे श्रुष्टिमाव्या साकं नरो दुंसनैरा चिकित्रिरे | ॥ 13 ॥ |
| येन दीर्घं मरुतः शूशवाम युष्माकेन परीणसा तुरासः | |
| आ यत्तनन्वृजने जनास एभिर्यज्ञेभिस्तदुभीष्टिमश्याम् | ॥ 14 ॥ |

एष वः स्तोमो मरुत इयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः

एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम्

॥ 15 ॥

(11)

167

(म.1, अनु.23)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः 1, मरुतः 2-11

सहस्रं त इन्द्रोतयो नः सहस्रमिषो हरिवो गूर्ततमाः

सहस्रं रायो मादयध्वै सहस्रिण उप नो यन्तु वाजाः

॥ 1 ॥

आ नोऽवोभिर्मरुतो यान्त्वच्छ ज्येष्ठैभिर्वा बृहद्विवैः सुमायाः

अध यदैषां नियुतः परमाः समुद्रस्य चिद्धनयन्त पारे

॥ 2 ॥

मिम्यक्ष येषु सुधिता घृताची हिरण्यनिर्णिगुपरा न ऋष्टिः

गुहा चरन्ती मनुषो न योषा सभावती विदुथ्येव सं वाक्

॥ 3 ॥

परा शुभ्रा अयासो यव्या साधारण्येव मरुतो मिमिक्षुः

न रोदसी अप नुदन्त घोरा जुषन्त वृधं सुख्याय देवाः

॥ 4 ॥

जोषद्यदीमसुर्या सचध्वै विषितस्तुका रोदसी नृमणाः

आ सूर्येव विधुतो रथं गात्वेषप्रतीका नभसो नेत्या

॥ 5 ॥

आस्थापयन्त युवति युवानः शुभे निर्मिश्लां विदथेषु पत्राम्

अर्को यद्वो मरुतो हविष्मान्गार्यद्वाथं सुतसोमो दुवस्यन्

॥ 6 ॥

प्र तं विवक्मि वक्म्यो य एषां मरुतां महिमा सत्यो अस्ति

सचा यदीं वृषमणा अहंयुः स्थिरा चिञ्जनीर्वहते सुभागाः

॥ 7 ॥

पान्ति मित्रावरुणाववृद्याञ्चयत ईमर्यमो अप्रशस्तान्

उत च्यवन्ते अच्युता ध्रुवाणि वावृध ईं मरुतो दातिवारः

॥ 8 ॥

नही नु वो मरुतो अन्त्यस्मे आरात्ताञ्चिच्छवसो अन्तमापुः

ते धृष्णुना शर्वसा शूशुवांसोऽर्णो न द्वेषो धृषता परि षुः

॥ 9 ॥

व्यमद्येन्द्रस्य प्रेष्ठा व्यं श्वो वोचेमहि समर्ये

व्यं पुरा महि च नो अनु द्यून्तन्न ऋभुक्षा नरामनु ष्यात्

॥ 10 ॥

एष वः स्तोमो मरुत इयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः

एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम्

॥ 11 ॥

(10)

168

(म.1, अनु.23)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः जगती 1-7 त्रिष्टुप् 8-10

देवता मरुतः

यज्ञार्यज्ञा वः समना तुतुर्वणिर्धियं धियं वो देवया उ दधिध्वे

आ वोऽर्वाचः सुविताय रोदस्योर्महे ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः

॥ 1 ॥

वव्रासो न ये स्वजाः स्वतवस् इषं स्वरभिजायन्त धूतयः

| | |
|--|--------|
| सहस्रियासो अ॒पां नोर्म॑य आ॒सा गावो॑ वन्द्यासो नोक्षणः | ॥ 2 ॥ |
| सोमा॑सो न ये सु॒तास्तृ॑प्तांश॒वो हृत्सु॑ पी॒तासो॑ दु॒वसो॑ नासते | |
| एषा॑मंसेषु र॒म्भिणी॑व रार॒भे ह॑स्तेषु ख्वादिश्च कृ॒तिश्च॑ सं द॒धे | ॥ 3 ॥ |
| अव॑ स्वयु॒क्ता दि॒व आ वृ॑था ययु॒रम॑र्त्याः कश॒या चो॑दत् त्मना | |
| अ॒रेण॑वस्तुविजा॒ता अ॑चुच्यवुर्दृ॒ळ्हा॒नि चि॒न्म॒रुतो॑ भ्राजदृष्टयः | ॥ 4 ॥ |
| को वोऽन्त॑र्मरुत ऋ॒ष्टि॒विद्यु॑तो रेजति॒ त्मना॑ हन्वे॒व जि॒ह्वया॑ | |
| ध॒न्व॒च्युत॑ इ॒षां न॑ याम॒नि पुरु॑प्रेषा॒ अह॑न्यो॒र्नैत॑शः | ॥ 5 ॥ |
| क्व॑ स्विद॒स्य रज॑सो म॒हस्परं॑ क्वावरं॒ मरु॑तो यस्मिन्नाय॒य | |
| य॒द्भ्याव॑यथ वि॒धुरे॒व सं॑हितं व्य॒द्रिणा॑ पतथ त्वेष॒मर्ण॑वम् | ॥ 6 ॥ |
| सा॒तिर्न॑ वोऽम॒वती॑ स्व॒र्वती॑ त्वेषा वि॒पाका॑ मरुतः पिपि॒ष्वती॑ | |
| भ॒द्रा वो॑ रा॒तिः पृ॑णतो न दक्षि॒णा पृ॑थु॒जयी॑ असु॒र्ये॒व ज॒ञ्जती॑ | ॥ 7 ॥ |
| प्रति॑ षोभन्ति सि॒न्धवः॑ प॒विभ्यो॑ यद्भ्रि॒यां वाच॑मुदीरयन्ति | |
| अव॑ स्मयन्त वि॒द्युतः॑ पृथि॒व्यां यदी॑ घृ॒तं म॒रुतः॑ प्रुष्णुवन्ति | ॥ 8 ॥ |
| असू॑त् पृ॒श्निर्म॑हते रणा॒य त्वेष॑म॒यासां॑ म॒रुता॑मनी॒कम् | |
| ते स॑प्स॒रासो॑ऽजनयन्ताभ्व॒मादि॑त्स्व॒धामि॑षिरां पर्य॒पश्य॑न् | ॥ 9 ॥ |
| एष॑ वः स्तोमो॑ मरुत इ॒यं गी॑मा॒न्दार्य॑स्य॒ मान्य॑स्य॒ कारोः॑ | |
| एषा॑ यासीष्ट॒ तन्वे॑ व॒यां वि॒द्यामे॑षं वृ॒जनं॑ जी॒रदा॑नुम् | ॥ 10 ॥ |

(8)

169

(म.1, अनु.23)

| | | |
|----------------------------|---|---------------|
| ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः | छन्दः त्रिष्टुप् 1,3-8, चतुष्पदा विराट् 2 | देवता इन्द्रः |
|----------------------------|---|---------------|

| | |
|---|-------|
| म॒हश्चि॑त्त्वमिन्द्र॒ यत् ए॒तान्म॑हश्चि॒दसि॑ त्यज॒सो वरु॑ता | |
| स नो॑ वेधो म॒रुतां॑ चि॒कित्वा॑न्सु॒म्ना व॑नुष्व॒ तव॑ हि प्रे॒ष्ठा | ॥ 1 ॥ |
| अयु॑ज्रन्त इन्द्र वि॒श्वकृ॑ष्ठीर्वि॒दाना॑सो नि॒षिधो॑ म॒र्त्यत्रा॑ | |
| म॒रुतां॑ पृ॒त्सुति॑र्हास॒माना॑ स्व॒र्मी॒ळह॑स्य प्र॒धन॑स्य सा॒तौ | ॥ 2 ॥ |
| अम्य॑क्सा ते इन्द्र ऋ॒ष्टिर॑स्मे सने॒म्यभ्वं॑ म॒रुतो॑ जुनन्ति | |
| अ॒ग्निश्चि॑द्धि॒ष्मात्से॑ शु॒शुक्ना॑नापो न द्वीपं दधति॒ प्रयांसि॑ | ॥ 3 ॥ |
| त्वं तू॑ न इन्द्र तं र॒यिं दा॑ ओजि॒ष्ठया॑ दक्षि॒णये॒व रा॒तिम् | |
| स्तु॑तश्च यास्ते॑ च॒कन॑न्त वा॒योः स्तनं॑ न मध्वः पी॒पय॑न्त वाजैः | ॥ 4 ॥ |
| त्वे रा॒य इन्द्र॑ तोश॒तमाः॑ प्र॒णेता॑रः कस्य॒ चिद॑तायोः | |
| ते षु॑ णो॑ म॒रुतो॑ मृ॒ळय॑न्तु ये स्मा॑ पुरा गा॒तूय॑न्ती॒व दे॒वाः | ॥ 5 ॥ |
| प्रति॑ प्र याहीन्द्र मी॒ळुषो॑ नृ॒न्महः॑ पार्थि॒वे स॑दने यतस्व | |
| अधु॑ यदैषां पृथु॒बुधा॑सु ए॒तास्ती॑र्थे ना॒र्यः पौ॑स्यानि त॒स्थुः | ॥ 6 ॥ |
| प्रति॑ घो॒राणा॑मे॒ताना॑म॒यासां॑ म॒रुतां॑ शृ॒ण्व आ॒यता॑मु॒प॒ब्धिः | |

ये मर्त्यं पृतनायन्तमूर्मैर्ऋणावानं न पृतयन्तु सर्गैः ॥ 7 ॥
 त्वं मानेभ्य इन्द्र विश्वजन्या रदा मरुद्भिः शुरुधो गोअग्राः |
 स्तवानेभिः स्तवसे देव देवैर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ 8 ॥

(5) **170** (म.1, अनु.23)

ऋषिः इन्द्रः 1,3-4, अगस्त्यः मैत्रावरुणिः 2,5 छन्दः बृहती 1, अनुष्टुप् 2-4, त्रिष्टुप् 5, देवता इन्द्रः

न नूनमस्ति नो श्वः कस्तद्वैदु यदद्भुतम्। अन्यस्य चित्तमभि संचरेण्यमुताधीतं वि नश्यति ॥ 1 ॥
 किं न इन्द्र जिघांससि भ्रातरौ मरुतस्तव। तेभिः कल्पस्व साधुया मा नः समरणे वधीः ॥ 2 ॥
 किं नो भ्रातरगस्त्य सखा सन्नति मन्यसे । विद्वा हि ते यथा मनोऽस्मभ्यमिन्न दित्ससि ॥ 3 ॥
 अरं कृण्वन्तु वेदिं समग्रिमिन्धतां पुरः । तत्रामृतस्य चेतनं यज्ञं ते तनवावहै ॥ 4 ॥
 त्वमीशिषे वसुपते वसूनां त्वं मित्राणां मित्रपते धेष्टः |
 इन्द्र त्वं मरुद्भिः सं वदस्वाधु प्राशान ऋतुथा हवीषिं ॥ 5 ॥

(6) **171** (म.1, अनु.23)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः छन्दः त्रिष्टुप् देवता मरुतः 1-2, मरुत्वान् इन्द्रः 3-6

प्रति व एना नमसाहमेमि सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् |
 रराणता मरुतो वेद्याभिर्नि हेळो धत्त वि मुचध्वमश्वान् ॥ 1 ॥
 एष वः स्तोमो मरुतो नमस्वान्हृदा तृष्टो मनसा धायि देवाः |
 उपेमा यात् मनसा जुषाणा यूयं हि ष्ठा नमस इद्वुधासः ॥ 2 ॥
 स्तुतासो नो मरुतो मृळयन्तुत स्तुतो मघवा शंभविष्ठः |
 ऊर्ध्वा नः सन्तु कोम्या वनान्यहानि विश्वा मरुतो जिगीषा ॥ 3 ॥
 अस्मादहं तविषादीषमाण इन्द्राद्भिया मरुतो रेजमानः |
 युष्मभ्यं हव्या निशितान्यासन्तान्यारे चकृमा मृळता नः ॥ 4 ॥
 येन मानासश्चितयन्त उस्मा व्युष्टिषु शवसा शश्वतीनाम् |
 स नो मरुद्भिर्वृषभु श्रवो धा उग्र उग्रेभिः स्थविरः सहोदाः ॥ 5 ॥
 त्वं पाहीन्द्र सहीयसो नृन्भवा मरुद्भिरवयातहेळाः |
 सुप्रकेतेभिः सासहिर्दधानो विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ 6 ॥

(3) **172** (म.1, अनु.23)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः छन्दः गायत्री देवता मरुतः

चित्रो वोऽस्तु यामश्चित्र ऊती सुदानवः | मरुतो अहिभानवः ॥ 1 ॥
 आरे सा वः सुदानवो मरुत ऋञ्जती शरुः | आरे अश्मा यमस्यथ ॥ 2 ॥
 तृणास्कन्दस्यु नु विशः परि वृङ्क सुदानवः | ऊर्ध्वान्नः कर्त जीवसे ॥ 3 ॥

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः त्रिष्टुप् 1-3,5-13, विराट्स्थाना 4

देवता इन्द्रः

| | |
|--|--------|
| गायत्सामं नभ्यं यथा वेरर्चाम् तद्वावृधानं स्वर्वत् | |
| गावो धेनवो बर्हिष्यदब्धा आ यत्सद्धानं दिव्यं विवासान् | ॥ 1 ॥ |
| अर्चद्वेषा वृषभिः स्वेदुहव्यैर्मृगो नाश्रो अति यज्जुगुर्यात् | |
| प्र मन्द्युर्मनां गूर्तं होता भरते मर्यो मिथुना यजत्रः | ॥ 2 ॥ |
| नक्षद्भोता परि सद्म मिता यन्भरद्भमा शरदः पृथिव्याः | |
| क्रन्ददध्वो नयमानो रुवद्भौरन्तर्दूतो न रोदसी चरद्वाक् | ॥ 3 ॥ |
| ता कर्माषतरास्मै प्र च्यौतानि देवयन्तो भरन्ते | |
| जुजोषदिन्द्रो दुस्मवर्चा नासत्येव सुगम्यो रथेष्ठाः | ॥ 4 ॥ |
| तमुं हृहीन्द्रं यो ह सत्वा यः शूरो मघवा यो रथेष्ठाः | |
| प्रतीचश्चिद्योधीयान्वृषण्वान्ववृषश्चित्तमसो विहन्ता | ॥ 5 ॥ |
| प्र यदित्था महिना नृभ्यो अस्त्यरं रोदसी कक्ष्येऽनास्मै | |
| सं विव्य इन्द्रो वृजनं न भूमा भर्ति स्वधावाँ ओपशामिव द्याम् | ॥ 6 ॥ |
| समत्सु त्वा शूर सतामुराणं प्रपथिन्तमं परितंसयध्वै | |
| सजोषस इन्द्रं मदे क्षोणीः सूरिं चिद्ये अनुमदन्ति वाजैः | ॥ 7 ॥ |
| एवा हि ते शं सर्वना समुद्र आपो यत्त आसु मदन्ति देवीः | |
| विधां ते अनु जोष्या भूद्रौः सूरिश्चिद्यदि धिषा वेषि जनान् | ॥ 8 ॥ |
| असाम् यथा सुषखाय एन स्वभिष्टयो नरां न शंसैः | |
| असद्यथा न इन्द्रो वन्दनेष्ठास्तुरो न कर्म नयमान उक्था | ॥ 9 ॥ |
| विषर्धसो नरां न शंसैरस्माकासदिन्द्रो वज्रहस्तः | |
| मित्रायुवो न पूर्पतिं सुशिष्टो मध्यायुव उप शिक्वन्ति यज्ञैः | ॥ 10 ॥ |
| यज्ञो हि ष्मेन्द्रं कश्चिद्वन्धुहुराणश्चिन्मनसा परियन् | |
| तीर्थे नाच्छां तातृषाणमोको दीर्घो न सिध्रमा कृणोत्यध्वा | ॥ 11 ॥ |
| मो ष ण इन्द्रात्रं पृत्सु देवैरस्ति हि ष्मां ते शुष्मिन्नव्याः | |
| महश्चिद्यस्य मीळहुषो यव्या हविष्मतो मरुतो वन्दते गीः | ॥ 12 ॥ |
| एष स्तोम इन्द्र तुभ्यमस्मे एतेन गातुं हरिवो विदो नः | |
| आ नो ववृत्याः सुविताय देव विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 13 ॥ |

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता इन्द्रः

| | |
|--|--------|
| त्वं राजेन्द्र ये च देवा रक्षा नृन्पाह्यसुर त्वमस्मान् | |
| त्वं सत्पतिर्मघवा न्स्तरुत्रस्त्वं सत्यो वसवानः सहोदाः | ॥ 1 ॥ |
| दनो विश इन्द्र मृध्रवाचः सप्त यत्पुरः शर्म शारदीर्दत् | |
| ऋणोरपो अनवघारणा यूने वृत्रं पुरुकुत्साय रन्धीः | ॥ 2 ॥ |
| अजा वृत इन्द्र शूरपत्नीर्घा च येभिः पुरुहूत नूनम् | |
| रक्षो अग्रिमशुषं तूर्वयाणं सिंहो न दमे अपांसि वस्तोः | ॥ 3 ॥ |
| शेषत्रु त इन्द्र सस्मिन्योनौ प्रशस्तये पवीरवस्य मद्वा | |
| सृजदर्णास्यव यद्युधा गास्तिष्ठद्धरी धृषता मृष्ट वाजान् | ॥ 4 ॥ |
| वह कुत्समिन्द्र यस्मिञ्चाकन्त्यूमन्यू ऋज्रा वातस्याश्वा | |
| प्र सूरश्चक्रं वृहतादभीकेऽभि स्पृधो यासिषद्वज्रबाहुः | ॥ 5 ॥ |
| जघन्वाँ इन्द्र मित्रेरुञ्चोदप्रवृद्धो हरिवो अदाशून् | |
| प्र ये पश्यन्नर्यमणं सचायोस्त्वया शूर्ता वहमाना अपत्यम् | ॥ 6 ॥ |
| रपत्क्विरिन्द्रार्कसातौ क्षां दासायोपबर्हणीं कः | |
| करत्तिस्रो मघवा दानुचित्रा नि दुर्योणे कुर्यवाचं मृधि श्रेत् | ॥ 7 ॥ |
| सना ता त इन्द्र नव्या आगुः सहो नभोऽविरणाय पूर्वीः | |
| भिन्तपुरो न भिदो अदेवीर्नमो वधुरदेवस्य पीयोः | ॥ 8 ॥ |
| त्वं धुनिरिन्द्र धुनिमतीर्ऋणोरपः सीरा न स्रवन्तीः | |
| प्र यत्समुद्रमति शूर पर्षि पारया तूर्वशं यदुं स्वस्ति | ॥ 9 ॥ |
| त्वमस्माकमिन्द्र विश्वधं स्या अवृकतमो नरां नृपाता | |
| स नो विश्वासां स्पृधां सहोदा विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 10 ॥ |

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः स्कन्धोग्रीवी बृहती 1, अनुष्टुप् 2-5, त्रिष्टुप् 6

देवता इन्द्रः

| | |
|--|-------|
| मत्स्यपायि ते महः पात्रस्येव हरिवो मत्सुरो मदः । वृषा ते वृष्ण इन्दुर्वाजी सहस्रसातमः॥ | 1 ॥ |
| आ नस्ते गन्तु मत्सुरो वृषा मदो वरेण्यः । सहावाँ इन्द्र सानुसिः पृतनाषाळमर्त्यः | ॥ 2 ॥ |
| त्वं हि शूरः सनिता चोदयो मनुषो रथम् । सहावान्दस्युमव्रतमोषः पात्रं न शोचिषा | ॥ 3 ॥ |
| मुषाय सूर्यं कवे चक्रमीशान् ओजसा । वह शुष्णाय वधं कुत्सं वातस्याश्वैः | ॥ 4 ॥ |
| शुम्भिन्तमो हि ते मदो द्युम्भिन्तम उत क्रतुः । वृत्रघ्ना वरिवोविदा मंसीष्ठा अश्वसातमः | ॥ 5 ॥ |

यथा पूर्वेभ्यो जरितृभ्य इन्द्र मर्यइवापो न तृष्यते बभूथ
तामनु त्वा निविदं जोहवीमि विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ 6 ॥

(6)

176

(म.1, अनु.23)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः छन्दः अनुष्टुप् 1-5, त्रिष्टुप् 6 देवता इन्द्रः

मत्सि नो वस्यइष्टय इन्द्रमिन्द्रो वृषा विशा । ऋघायमाण इन्वसि शत्रुमन्ति न विन्दसि ॥ 1 ॥
तस्मिन्ना वेशया गिरो य एकश्चर्षणीनाम् । अनु स्वधा यमुष्यते यवं न चर्कषद्वषा ॥ 2 ॥
यस्य विश्वानि हस्तयोः पञ्च क्षितीनां वसु । स्पाशयस्व यो अस्मध्रुग्दिव्येवाशनिर्जहि ॥ 3 ॥
असुन्वन्तं समं जहि दूणाशं यो न ते मर्यः । अस्मभ्यमस्य वेदनं दुद्धि सूरिश्चिदोहते ॥ 4 ॥
आवो यस्य द्विबर्हसोऽर्केषु सानुषगसत् । आजाविन्द्रस्येन्द्रो प्रावो वाजेषु वाजिनम् ॥ 5 ॥
यथा पूर्वेभ्यो जरितृभ्य इन्द्र मर्यइवापो न तृष्यते बभूथ
तामनु त्वा निविदं जोहवीमि विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ 6 ॥

(5)

177

(म.1, अनु.23)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः छन्दः त्रिष्टुप् देवता इन्द्रः

आ चर्षणिप्रा वृषभो जनानां राजा कृष्टीनां पुरुहूत इन्द्रः ।
स्तुतः श्रवस्यन्नवसोपं मद्रिग्युक्त्वा हरी वृषणा याह्यर्वाङ् ॥ 1 ॥
ये ते वृषणो वृषभास इन्द्र ब्रह्मयुजो वृषरथासो अत्याः ।
ताँ आ तिष्ठ तेभिरा याह्यर्वाङ् हवामहे त्वा सुत इन्द्र सोमे ॥ 2 ॥
आ तिष्ठ रथं वृषणं वृषां ते सुतः सोमः परिषिक्त्वा मधूनि ।
युक्त्वा वृषभ्यां वृषभ क्षितीनां हरिभ्यां याहि प्रवतोपं मद्रिक् ॥ 3 ॥
अयं यज्ञो देवया अयं मियेध इमा ब्रह्माण्ययमिन्द्र सोमः ।
स्तीर्णं बहिरा तु शक्र प्र याहि पिबा निषद्य वि मुचा हरी इह ॥ 4 ॥
ओ सुष्टुत इन्द्र याह्यर्वाङ्पु ब्रह्माणि मान्यस्य कारोः ।
विद्याम् वस्तोरवसा गृणन्तो विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ 5 ॥

(5)

178

(म.1, अनु.23)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः छन्दः त्रिष्टुप् देवता इन्द्रः

यद्ध स्या त इन्द्र श्रुष्टिरस्ति यया बभूथ जरितृभ्य ऊती ।
मा नः कामं मह्यन्तमा धृग्विश्वा ते अश्यां पर्याप आयोः ॥ 1 ॥
न घा राजेन्द्र आ दभन्नो या नु स्वसारा कृणवन्त योनौ ।
आर्षिश्चिदस्मै सुतुका अवेष्णामन्न इन्द्रः सुख्या वयश्च ॥ 2 ॥
जेता नृभिरिन्द्रः पृत्सु शूरः श्रोता हवं नाधमानस्य कारोः ।
प्रभर्ता रथं दाशुष उपाक उद्यन्ता गिरो यदि च त्मना भूत् ॥ 3 ॥
एवा नृभिरिन्द्रः सुश्रवस्या प्रखादः पृक्षो अभि मित्रिणो भूत् ।
समर्य इषः स्तवते विवाचि सत्राकरो यजमानस्य शंसः ॥ 4 ॥

त्वया वयं मघवन्निन्द्र शत्रून्भि ष्याम महतो मन्यमानान्
त्वं त्राता त्वमु नो वृधे भूर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम्

|| 5 ||

(6)

179

(म.1, अनु.23)

ऋषिः लोपामुद्रा 1-2, अगस्त्यः मैत्रावरुणिः 3-4, अगस्त्यान्तेवासी 5-6 छन्दः त्रिष्टुप् 1-4,6, बृहती 5
देवता रतिः

पूर्वीरुहं शरदः शश्रमाणा दोषा वस्तोरुषसो जुरयन्तीः

|

मिनाति श्रियं जरिमा तनूनामप्यु नु पत्नीवृषणो जगम्युः

|| 1 ||

ये चिद्धि पूर्वं ऋतसाप् आसन्त्साकं देवेभिरवदन्नृतानि

|

ते चिदवासुर्नह्यन्तमापुः समू नु पत्नीवृषभिर्जगम्युः

|| 2 ||

न मृषा श्रान्तं यदवन्ति देवा विश्वा इत्स्पृधो अभ्यश्रवाव

|

जयावेदत्र शतनीथमाजिं यत्सम्यञ्चा मिथुनावभ्यजाव

|| 3 ||

नदस्य मा रुधतः काम् आगन्त्रित आजातो अमुतः कुतश्चित्

|

लोपामुद्रा वृषणं नी रिणाति धीरमधीरा धयति श्वसन्तम्

|| 4 ||

इमं नु सोममन्तितो हृत्सु पीतमुप ब्रुवे

|

यत्स्रीमार्गश्चकृमा तत्सु मृळतु पुलुकामो हि मर्त्यैः

|| 5 ||

अगस्त्यः खनमानः खनित्रैः प्रजामपत्यं बलमिच्छमानः

|

उभौ वर्णावृषिरुग्रः पुपोष सत्या देवेष्वाशिषो जगाम

|| 6 ||

(10)

180

(म.1, अनु.24)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः छन्दः त्रिष्टुप् देवता अश्विनौ

युवो रजांसि सुयमासो अश्वा रथो यद्वां पर्यणांसि दीयत्

|

हिरण्यया वां पवयः प्रुषायन्मध्वः पिबन्ता उषसः सचेथे

|| 1 ||

युवमत्यस्याव नक्षथो यद्विपत्मनो नर्यस्य प्रयज्योः

|

स्वसा यद्वां विश्वगूर्ती भराति वाजायेद्रे मधुपाविषे च

|| 2 ||

युवं पर्य उस्त्रियायामधत्तं पृक्मामायामव पूर्वं गोः

|

अन्तर्यद्वनिनो वामृतप्सू ह्यारो न शुचिर्यजते हविष्मान्

|| 3 ||

युवं ह धर्मं मधुमन्तमत्रयेऽपो न क्षोदोऽवृणीतमेषे

|

तद्वां नरावश्विना पश्वेऽष्टी रथ्येव चक्रा प्रति यन्ति मध्वः

|| 4 ||

आ वां दानाय ववृतीय दस्रा गोरोहेण तौग्र्यो न जित्रिः

|

अपः क्षोणी संचते माहिना वां जूर्णो वामक्षुरंहसो यजत्रा

|| 5 ||

नि यद्युवेथे नियुतः सुदानू उप स्वधाभिः सृजथः पुरंधिम्

|

प्रेषद्वेषद्वातो न सूरिरा महे ददे सुव्रतो न वाजम्

|| 6 ||

वयं चिद्धि वां जरितारः सत्या विपन्यामहे वि पणिहितावान्

|

अधा चिद्धि ष्माश्विनावनिन्द्रा पृथो हि ष्मा वृषणावन्तिदेवम्

|| 7 ||

युवां चिद्धि ष्माश्विनावनु द्यून्विरुद्रस्य प्रस्रवणस्य सातौ

|

| | |
|--|--------|
| अगस्त्यो नरां नृषु प्रशस्तः काराधुनीव चितयत्सहस्रैः | ॥ 8 ॥ |
| प्र यद्वहैथे महिना रथस्य प्र स्यन्द्रा याथो मनुषो न होता | |
| धत्तं सुरिभ्य उत वा स्वश्व्यं नासत्या रयिषाचः स्याम | ॥ 9 ॥ |
| तं वां रथं वयमद्या हुवेम स्तोमैरश्विना सुविताय नव्यम् | |
| अरिष्टनेमिं परि द्यामियानं विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 10 ॥ |

(9)

181

(म.1, अनु.24)

| | | |
|----------------------------|------------------|---------------|
| ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अश्विनौ |
|----------------------------|------------------|---------------|

| | |
|--|-------|
| कदु प्रेष्ठाविषां रयीणामध्वर्यन्ता यदुन्निनीथो अपाम् | |
| अयं वां यज्ञो अकृत प्रशस्तिं वसुधिती अवितारा जनानाम् | ॥ 1 ॥ |
| आ वामश्वासः शुचयः पयस्या वातरंहसो दिव्यासो अत्याः | |
| मनोजुवो वृषणो वीतपृष्ठा एह स्वराजो अश्विना वहन्तु | ॥ 2 ॥ |
| आ वां रथोऽवनिर्न प्रवत्वान्तसृप्रवन्धुरः सुविताय गम्याः | |
| वृष्णः स्थातारा मनसो जवीयानहंपूर्वो यज्ञतो धिष्यया यः | ॥ 3 ॥ |
| इहेह जाता समवावशीतामरेपसां तन्वाः नामभिः स्वैः | |
| जिष्णुर्वाभ्यः सुमखस्य सूरिर्दिवो अन्यः सुभगः पुत्र ऊहे | ॥ 4 ॥ |
| प्र वां निचेरुः ककुहो वशां अनु पिशङ्गरूपः सदनानि गम्याः | |
| हरी अन्यस्य पीपयन्त वाजैर्मश्रा रजांस्यश्विना वि घोषैः | ॥ 5 ॥ |
| प्र वां शरद्वान्वृषभो न निष्पाट् पूर्वोरिषश्चरति मध्व इष्णन् | |
| एवैरन्यस्य पीपयन्त वाजैर्वेषन्तीरुध्वा नद्यो न आगुः | ॥ 6 ॥ |
| असर्जि वां स्थविरा वेधसा गीर्बाळहे अश्विना त्रेधा क्षरन्ती | |
| उपस्तुताववतं नाधमानं यामन्नयामञ्छणुतं हवं मे | ॥ 7 ॥ |
| उत स्या वां रुशतो वप्ससो गीस्त्रिर्बर्हिषि सदसि पिन्वते नृन् | |
| वृषा वां मेघो वृषणा पीपाय गोर्न सेके मनुषो दशस्यन् | ॥ 8 ॥ |
| युवां पूषेवाश्विना पुरंधिरग्निमुषां न जरते हविष्मान् | |
| हुवे यद्वां वरिवस्या गृणानो विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 9 ॥ |

(8)

182

(म.1, अनु.24)

| | | |
|----------------------------|----------------------------------|---------------|
| ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः | छन्दः जगती 1-5,7, त्रिष्टुप् 6,8 | देवता अश्विनौ |
|----------------------------|----------------------------------|---------------|

| | |
|--|-------|
| अभूदिदं वयुनमो षु भूषता रथो वृषण्वान्मदता मनीषिणः | |
| धियंजिन्वा धिष्यया विश्पलावसू दिवो नपाता सुकृते शुचिब्रता | ॥ 1 ॥ |
| इन्द्रतमा हि धिष्यया मरुत्तमा दसा दंसिष्ठा रथ्या रथीतमा | |
| पूर्णं रथं वहेथे मध्व आर्चितं तेन दाश्वांसमुप याथो अश्विना | ॥ 2 ॥ |
| किमत्र दसा कृणुथः किमासाथे जनो यः कश्चिदहविर्महीयते | |

| | |
|---|-------|
| अतिं क्रमिष्टं जुरतं पुणेरसुं ज्योतिर्विप्राय कृणुतं वचस्यवे | ॥ 3 ॥ |
| जुम्भयतमभितो रायतः शुनो हतं मृधो विदथुस्तान्यश्विना | |
| वाचंवाचं जरितू र्विनीं कृतमुभा शंसं नासत्यावतं मम | ॥ 4 ॥ |
| युवमेतं चक्रथुः सिन्धुषु प्लवमात्मन्वन्तं पक्षिणं तौग्राय कम् | |
| येन देवत्रा मनसा निरूहथुः सुपत्नी पेतथुः क्षोदसो महः | ॥ 5 ॥ |
| अर्वविद्धं तौग्रमप्स्वन्तरनारम्भणे तमसि प्रविद्धम् | |
| चतस्रो नावो जठलस्य जुष्टा उदुश्विभ्यामिषिताः पारयन्ति | ॥ 6 ॥ |
| कः स्विद्धक्षो निष्ठितो मध्ये अर्णसो यं तौग्रो नाधितः पर्यषस्वजत् | |
| पूर्णा मृगस्य पतरोरिवारभ उदश्विना ऊहथुः श्रोमताय कम् | ॥ 7 ॥ |
| तद्वानं नरा नासत्यावनु ष्याद्यद्वां मानास उचथमवोचन् | |
| अस्मादद्य सदसः सोम्यादा विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 8 ॥ |

(6)

183

(म.1, अनु.24)

| | | |
|----------------------------|------------------|---------------|
| ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अश्विनौ |
|----------------------------|------------------|---------------|

| | |
|---|-------|
| तं युञ्जाथां मनसो यो जवीयान् त्रिवन्धुरो वृषणा यस्त्रिचक्रः | |
| येनोपयाथः सुकृतो दुरोणं त्रिधातुना पतथो विर्न पूर्णैः | ॥ 1 ॥ |
| सुवृद्रथो वर्तते यन्नभि क्षां यत्तिष्ठथुः क्रतुमन्तानु पृक्षे | |
| वपुर्वपुष्या सचतामियं गीर्दिवो दुहित्रोषसा सचेथे | ॥ 2 ॥ |
| आ तिष्ठतं सुवृतं यो रथो वामनु व्रतानि वर्तते हविष्मान् | |
| येनं नरा नासत्येष्यध्यै वर्तिर्याथस्तनयायु त्मने च | ॥ 3 ॥ |
| मा वां वृको मा वृकीरा दधर्षीन्मा परिं वर्क्तमुत मातिं धक्तम् | |
| अयं वां भागो निहित इयं गीर्दस्त्राविमे वां निधयो मधूनाम् | ॥ 4 ॥ |
| युवां गोतमः पुरुमीळ्हो अत्रिर्दस्त्रा हवतेऽवसे हविष्मान् | |
| दिशं न दिष्टामृजूयेव यन्ता मे हवं नासत्योप यातम् | ॥ 5 ॥ |
| अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रतिं वां स्तोमो अश्विनावधायि | |
| एह यातं पृथिभिर्देवयानैर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 6 ॥ |

। इति द्वितीयाष्टके चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः ।

(6)

184

(म. 1, अनु. 24)

| | | |
|----------------------------|------------------|---------------|
| ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता अश्विनौ |
|----------------------------|------------------|---------------|

| | |
|--|-------|
| ता वामघ्न तावपरं हुवेमोच्छन्त्यामुषसि वह्निरुक्थैः | |
| नासत्या कुहं चित्सन्तावर्यो दिवो नपाता सुदास्तराय | ॥ 1 ॥ |
| अस्मे ऊ षु वृषणा मादयेथामुत्पूर्णाहंतमूर्म्या मदन्ता | |
| श्रुतं मे अच्छोक्तिभिर्मतीनामेष्टां नरा निचेतारा च कर्णैः | ॥ 2 ॥ |
| श्रिये पूषन्निषुकृतैव देवा नासत्या वहतुं सूर्यायाः | |
| वच्यन्तै वां ककुहा अप्सु जाता युगा जूर्णैव वरुणस्य भूरैः | ॥ 3 ॥ |
| अस्मे सा वां माध्वी रातिरस्तु स्तोमं हिनोतं मान्यस्य कारोः | |
| अनु यद्वां श्रवस्यां सुदानू सुवीर्याय चर्षणयो मदन्ति | ॥ 4 ॥ |
| एष वां स्तोमो अश्विनावकारि मानेभिर्मघवाना सुवृक्ति | |
| यातं वर्तिस्तनयाय त्मने चागस्त्ये नासत्या मदन्ता | ॥ 5 ॥ |
| अतरिष्म तमसस्पारमस्य प्रति वां स्तोमो अश्विनावधायि | |
| एह यातं पृथिभिर्देवयानैर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 6 ॥ |

(11)

185

(म. 1, अनु. 24)

| | | |
|----------------------------|------------------|----------------------|
| ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः | छन्दः त्रिष्टुप् | देवता द्यावापृथिव्यौ |
|----------------------------|------------------|----------------------|

| | |
|--|-------|
| कृतरा पूर्वा कतरापरायोः कृथा जाते कवयः को वि वेद | |
| विश्वं त्मना बिभृतो यद्ध नाम वि वर्तेते अहनी चक्रियैव | ॥ 1 ॥ |
| भूरिं द्वे अचरन्ती चरन्तं पृद्वन्तं गर्भमपदी दधाते | |
| नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थे द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् | ॥ 2 ॥ |
| अनेहो दात्रमदितेरनुर्व हुवे स्वर्वदवधं नमस्वत् | |
| तद्रोदसी जनयतं जरित्रे द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् | ॥ 3 ॥ |
| अतप्यमाने अवसावन्ती अनु ष्याम् रोदसी देवपुत्रे | |
| उभे देवानामुभयैभिरह्नां द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् | ॥ 4 ॥ |
| संगच्छमाने युवती समन्ते स्वसारा जामी पित्रोरुपस्थे | |
| अभिजिघ्रन्ती भुवनस्य नाभिं द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् | ॥ 5 ॥ |
| उर्वा सद्मनी बृहती ऋतेन हुवे देवानामवसा जनित्री | |
| दधाते ये अमृतं सुप्रतीके द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् | ॥ 6 ॥ |
| उर्वा पृथ्वी बहुले दूरेअन्ते उप ब्रुवे नमसा यज्ञे अस्मिन् | |
| दधाते ये सुभगे सुप्रतूर्ती द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् | ॥ 7 ॥ |

देवान्वा यच्चकृमा कच्चिदागः सखायं वा सदमिज्जास्पतिं वा |
 इयं धीर्भूया अवयानमेषां द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् || 8 ||
 उभा शंसा नर्या मामविष्टामुभे मामूती अवसा सचेताम् |
 भूरि चिदुर्यः सुदस्तरायेषा मदन्त इषयेम देवाः || 9 ||
 ऋतं दिवे तदवोचं पृथिव्या अभिश्रावाय प्रथमं सुमेधाः |
 पातामवद्यार्दुरितादभीके पिता माता च रक्षतामवोभिः || 10 ||
 इदं द्यावापृथिवी सत्यमस्तु पितृमार्तर्यदिहोपब्रुवे वाम् |
 भूतं देवानामवमे अवोभिर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् || 11 ||

(11)

186

(म. 1, अनु. 24)

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता विश्वे देवाः

आ न इळाभिर्विदथे सुशस्ति विश्वानरः सविता देव एतु |
 अपि यथा युवानो मत्सथा नो विश्वं जगदभिपित्वे मनीषा || 1 ||
 आ नो विश्व आस्क्रा गमन्तु देवा मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः |
 भुवन्यथा नो विश्वे वृधासः करन्त्सुषाहा विथुरं न शर्वः || 2 ||
 प्रेष्ठं वो अतिथिं गृणीषेऽग्निं शस्तिभिस्तुर्वणिः सजोषाः |
 असद्यथा नो वरुणः सुकीर्तिरिषश्च पर्षदरिगूर्तः सूरिः || 3 ||
 उप व एषे नमसा जिगीषोषासानक्ता सुदुधेव धेनुः |
 समाने अहन्विमिमानो अर्कं विषुरूपे पर्यसि सस्मिन्नूधन् || 4 ||
 उत नोऽहिर्बुध्नोऽं मयस्कः शिशुं न पिप्युषीव वेति सिन्धुः |
 येन नपातमपां जुनाम मनोजुवो वृषणो यं वहन्ति || 5 ||
 उत न ई त्वष्टा गन्त्वच्छा स्मत्सूरिभिरभिपित्वे सजोषाः |
 आ वृत्रहेन्द्रश्चर्षणिप्रास्तुविष्टमो नरां न इह गम्याः || 6 ||
 उत न ई मतयोऽश्वयोगाः शिशुं न गावस्तरुणं रिहन्ति |
 तमीं गिरो जनयो न पत्नीः सुरभिष्टमं नरां नसन्त || 7 ||
 उत न ई मरुतो वृद्धसेनाः स्मद्रोदसी समनसः सदन्तु |
 पृषदश्वसोऽवनयो न रथा रिशादसो मित्रयुजो न देवाः || 8 ||
 प्र नु यदैषां महिना चिकित्रे प्र युञ्जते प्रयुजस्ते सुवृक्ति |
 अध यदैषां सुदिने न शर्ुविश्वमेरिणं प्रुषायन्त सेनाः || 9 ||
 प्रो अश्विनावसे कृणुध्वं प्र पूषणं स्वतवसो हि सन्ति |
 अद्वेषो विष्णुर्वात ऋभुक्षा अच्छा सुम्नाय ववृतीय देवान् || 10 ||
 इयं सा वो अस्मे दीधितिर्यजत्रा अपिप्राणीं च सदनी च भूयाः |

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः छन्दः अनुष्टुप् 1, गायत्री 2,4,8-10, अनुष्टुप् 3,5-7,11 देवता अन्नं

| | | |
|--|--|--------|
| पितुं नु स्तोषं महो धर्माणं तविषीम् | यस्य त्रितो व्योजसा वृत्रं विपर्वमर्दयत् | ॥ 1 ॥ |
| स्वादो पितो मधो पितो वयं त्वा ववृमहे | अस्माकमविता भव | ॥ 2 ॥ |
| उप नः पित्वा चर शिवः शिवाभिरूतिभिः | मयोभुरद्विषेण्यः सखा सुशेवो अद्वयाः | ॥ 3 ॥ |
| तव त्ये पितो रसा रजांस्यनु विष्टिताः | दिवि वाताइव श्रिताः | ॥ 4 ॥ |
| तव त्ये पितो ददतस्तव स्वादिष्ट ते पितो | प्र स्वाद्मानो रसानां तुविग्रीवाइवेरते | ॥ 5 ॥ |
| त्वे पितो महानां देवानां मनो हितम् | अकारि चारु केतुना तवाहिमवसावधीत् | ॥ 6 ॥ |
| यदुदो पितो अजगन्विवस्व पर्वतानाम् | अत्रा चित्रो मधो पितोऽरं भूक्षाय गम्याः | ॥ 7 ॥ |
| यदुपामोषधीनां परिशमारिशामहे | वातापे पीव इन्द्रव | ॥ 8 ॥ |
| यत्तं सोम गवाशिरो यवाशिरो भजामहे | वातापे पीव इन्द्रव | ॥ 9 ॥ |
| करम्भ ओषधे भव पीवो वृक्क उदारथिः | वातापे पीव इन्द्रव | ॥ 10 ॥ |
| तं त्वा वयं पितो वचोभिर्गावो न हव्या सुषूदिम | | |
| देवेभ्यस्त्वा सधुमादमस्मभ्यं त्वा सधुमादम | | |

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः छन्दः गायत्री देवता अग्निः

| | | |
|--|-------------------------|--------|
| समिद्धो अद्य राजसि देवो देवैः सहस्रजित् | दूतो हव्या क्विर्वह | ॥ 1 ॥ |
| तनूनपादृतं युते मध्वा यज्ञः समज्यते | दधत्सहस्रिणीरिषः | ॥ 2 ॥ |
| आजुह्वानो न ईड्यो देवां आ वक्षि यज्ञियान् | अग्रै सहस्रसा असि | ॥ 3 ॥ |
| प्राचीनं बर्हिरोजसा सहस्रवीरमस्तृणन् | यत्रादित्या विराजथ | ॥ 4 ॥ |
| विराट् सम्राड्विभीः प्रभ्वीर्बह्वीश्च भूयसीश्च याः | दुरो घृतान्यक्षरन् | ॥ 5 ॥ |
| सुरुक्मे हि सुपेशसार्धि श्रिया विराजतः | उषासावेह सीदताम् | ॥ 6 ॥ |
| प्रथमा हि सुवाचसा होतारा देव्या क्वी | यज्ञं नो यक्षतामिमम् | ॥ 7 ॥ |
| भारतीळे सरस्वति या वः सर्वा उपब्रुवे | ता नश्चोदयत श्रिये | ॥ 8 ॥ |
| त्वष्टा रूपाणि हि प्रभुः पशून्विश्वान्त्समानुजे | तेषां नः स्फातिमा यज | ॥ 9 ॥ |
| उप त्मन्या वनस्पते पाथो देवेभ्यः सृज | अग्निर्हव्यानि सिष्वदत् | ॥ 10 ॥ |
| पुरोगा अग्निर्देवानां गायत्रेण समज्यते | स्वाहाकृतीषु रोचते | ॥ 11 ॥ |

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता अग्निः

| | |
|--|-------|
| अग्ने नयं सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् | |
| युयोध्यश्मञ्जुहराणमेनो भूर्यिष्ठां ते नमउक्तिं विधेम | ॥ 1 ॥ |
| अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा | |
| पूश्च पृथ्वी बहुला न उर्वी भवा तोकाय तनयाय शं योः | ॥ 2 ॥ |
| अग्ने त्वमस्मद्युयोध्यमीवा अनग्नित्रा अभ्यमन्त कृष्टीः | |
| पुनरस्मभ्यं सुविताय देव क्षां विश्वैभिरमृतैर्भिर्यजत्र | ॥ 3 ॥ |
| पाहि नो अग्ने पायुभिरजस्रैरुत प्रिये सदन् आ शुशुक्वान् | |
| मा ते भयं जरितारं यविष्ठ नूनं विदन्मापरं सहस्वः | ॥ 4 ॥ |
| मा नो अग्नेऽव सृजो अघार्याविष्यवे रिपवे दुच्छुनायै | |
| मा दत्वते दशते मादते नो मा रीषते सहसावन्परा दाः | ॥ 5 ॥ |
| वि घ त्वावाँ ऋतजात यंसद्वृणानो अग्ने तन्वेरे वरूथम् | |
| विश्वारिद्रिक्षोरुत वा निनित्सोरभिहुतामसि हि देव विष्यट् | ॥ 6 ॥ |
| त्वां ताँ अग्र उभयान्वि विद्वान्वेषि प्रपित्वे मनुषो यजत्र | |
| अभिपित्वे मनवे शास्यो भूर्ममृजेन्य उशिग्भिर्नाक्रः | ॥ 7 ॥ |
| अवौचाम निवचनान्यस्मिन्मानस्य सुनुः सहसाने अग्रौ | |
| वयं सहस्रमृषिभिः सनेम विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ॥ 8 ॥ |

ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः

छन्दः त्रिष्टुप्

देवता बृहस्पतिः

| | |
|---|-------|
| अनुर्वाणं वृषभं मन्द्रजिह्वं बृहस्पतिं वर्धया नव्यमर्कैः | |
| गाथान्यः सुरुचो यस्य देवा आशृण्वन्ति नवमानस्य मर्ताः | ॥ 1 ॥ |
| तमृत्विया उप वाचः सचन्ते सर्गो न यो देवयतामसर्जि | |
| बृहस्पतिः स ह्यञ्जो वरांसि विभ्वाभवत्समृते मातरिश्वा | ॥ 2 ॥ |
| उपस्तुतिं नमस उद्यतिं च श्लोकं यंसत्सवितेव प्र ब्राहू | |
| अस्य क्रत्वाहन्योरे यो अस्ति मृगो न भीमो अरक्षसस्तुविष्मान् | ॥ 3 ॥ |
| अस्य श्लोको दिवीयते पृथिव्यामत्यो न यंसद्यक्षभृद्विचेताः | |
| मृगाणां न हेतयो यन्ति चेमा बृहस्पतेरहिमायाँ अभि द्यून् | ॥ 4 ॥ |
| ये त्वा देवोस्त्रिकं मन्यमानाः पापा भद्रमुपजीवन्ति पुत्राः | |
| न दूढ्येरे अनु ददासि वामं बृहस्पते चयस इत्पियारुम् | ॥ 5 ॥ |
| सुप्रेतुः स्यूवसो न पन्था दुर्नियन्तुः परिप्रीतो न मित्रः | |
| अनुर्वाणो अभि ये चक्षते नोऽपीवृता अपोर्णुवन्तो अस्थुः | ॥ 6 ॥ |
| सं यं स्तुभोऽवनयो न यन्ति समुद्रं न स्रवतो रोधचक्राः | |

स विद्वाँ उभयं चष्टे अन्तर्बृहस्पतिस्तर आपश्च गृध्रः ॥ 7 ॥
 एवा महस्तुविजातस्तुविष्मान्बृहस्पतिर्वृषभो धायि देवः
 स नः स्तुतो वीरवद्भातु गोमद्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ 8 ॥

(16)

191

(म. 1, अनु. 24)

| | |
|----------------------------|--|
| ऋषिः अगस्त्यः मैत्रावरुणिः | छन्दः अनुष्टुप् 1-9, 14-16, महापङ्क्तिः 10-12, महाबृहती 13 |
| देवता अमृणसूर्याः | |

कङ्कतो न कङ्कतोऽथो सतीनकङ्कतः । द्वाविति प्लुषी इति न्यश्दृष्टा अलिप्सत ॥ 1 ॥
 अदृष्टान्हन्त्यायत्यथो हन्ति परायती । अथो अवघ्नती हन्त्यथो पिनष्टि पिंषती ॥ 2 ॥
 शरासः कुशरासो दुर्भासः सैर्या उत । मौञ्जा अदृष्टा वैरिणाः सर्वे साकं न्यलिप्सत ॥ 3 ॥
 नि गावो गोष्ठे असदुन्नि मृगासो अविक्षत । नि केतवो जनानां न्यश्दृष्टा अलिप्सत ॥ 4 ॥
 एत उ त्वे प्रत्यदृष्ट्रन्द्रदोषं तस्कराइव । अदृष्टा विश्वदृष्टाः प्रतिबुद्धा अभूतन ॥ 5 ॥
 द्यौर्वः पिता पृथिवी माता सोमो भ्रातादितिः स्वसा । अदृष्टा विश्वदृष्टास्तिष्ठतेलयता सु कम् ॥ 6 ॥
 ये अस्या ये अङ्ग्याः सूचीका ये प्रकङ्कताः । अदृष्टाः किं चनेह वः सर्वे साकं नि जस्यत ॥ 7 ॥

उत्पुरस्तात्सूर्य एति विश्वदृष्टो अदृष्टहा ।

अदृष्टान्सर्वाञ्जम्भयन्सर्वाश्च यातुधान्यः ॥ 8 ॥

उदपप्तदसौ सूर्यः पुरु विश्वानि जूर्वन् ।

आदित्यः पर्वतेभ्यो विश्वदृष्टो अदृष्टहा ॥ 9 ॥

सूर्ये विषमा संजामि दृतिं सुरावतो गृहे ।

सो चिन्नु न मरति नो वयं मरामारे अस्य ।

योजनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला चकार ॥ 10 ॥

इयत्तिका शकुन्तिका सका जघास ते विषम् ।

सो चिन्नु न मरति नो वयं मरामारे अस्य ।

योजनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला चकार ॥ 11 ॥

त्रिः सप्त विष्पुलिङ्गका विषस्य पुष्यमक्षन् ।

ताश्चिन्नु न मरन्ति नो वयं मरामारे अस्य ।

योजनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला चकार ॥ 12 ॥

नवानां नवतीनां विषस्य रोपुषीणाम् ।

सर्वासामग्रभं नामारे अस्य योजनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला चकार ॥ 13 ॥

त्रिः सप्त मयूर्यः सप्त स्वसारो अगुर्वः ।

तास्ते विषं वि जधिर उदकं कुम्भिनीरिव ॥ 14 ॥

इयत्तकः कुषुम्भकस्तकं भिनद्वायशमना ।

ततो विषं प्र वावृते पराचीरनु संवतः

॥ 15 ॥

कुषुम्भकस्तदब्रवीद्विरेः प्रवर्तमानकः

|

वृश्चिकस्यारसं विषमरसं वृश्चिक ते विषम्

॥ 16 ॥

| इति प्रथमं मण्डलं समाप्तम् |